प्रथम चरण

अवतार हेतु

सृष्टिकर्ता परमेश्वर संसार की सुव्यवस्था करने के लिए अवतार रूप से संसार में बार बार प्रकट होते ही रहते हैं, तथा अपने अभिन्न रूप सन्तों को भी सांसारिक व्यक्तियों के कल्याणार्थ संसार में भेजते रहते हैं। ऐसे प्रभु के दो प्रकार के अवतार होते हैं। एक तो दुष्टों का नाश करके, साधुओं की रक्षा द्वारा धर्म की स्थापना करने वाले राम कृष्णादि और दूसरे अपने उपदेश द्वारा सुजन कुजन आदि सर्व को ही प्रभु के सम्मुख करने वाले कपिल व्यासादि सन्त अवतार होते हैं । ये सन्त अवतार आवश्यकतानुसार प्रत्येक युग में तथा संसार के प्रत्येक प्रदेश में होते ही रहते हैं।

कलियुग में जब निर्गुण निराकार परब्रह्म की उपासना में शिथिलता आई तब कुछ आचार्यों ने सगुण साकार परमात्मा की उपासना का प्रचार किया। सर्वसाधारण जनता ने उसे बहुत अपनाया किन्तु बहुत से ऐसे तार्किक प्राणि भी संसार में होते हैं जो सगुण साकार मूर्ति पूजा आदि में श्र(ा नही करते और निर्गुण निराकार ब्रह्म की उपासना में बिना मार्गदर्शक गुरू के उनकी प्रवृति नही होती। तब वे आसुरता की ओर बढ़ने लगते हैं । उक्त प्रकार से जब आसुरता बढ़ने लगी तब संसार की व्यवस्था करने वाले ईश्वर ने निर्गुण उपासना प(ति से, वैसे लोगों को आसुरता से बचाने के लिए, विक्रम की 15 वीं शताब्दी से सन्तों को भेजना आरम्भ किया । वे सन्त जैसा अधिकारी देखते थे वैसा ही उपदेश करते थे। किसी एक के आग्रह में नही बंधते थे अर्थात् सगुण साकार के उपासकों को भी उत्साहित किया और सगुण साकार मूर्ति आदि में श्र(ा नही करने वालों को निर्गुण निराकार ब्रह्म की उपासना में लगाया । विक्रम की 16 वीं शताब्दी में मुसलमानों द्वारा भारत में बहुत उपद्रव बढ़ गए थे । यह इतिहास में अति प्रसि(है ।

उस समय राजस्थान प्रान्त की स्थिति भी बहुत बिगड़ी हुई थी। राजस्थान में भेद, भ्रांति, घृणा, आदि आसुर गुणों की अत्यधिक वर्(हो रही थी। राजा लोग भी परस्पर एक दूसरे की हानि करने मे ही प्रवृत हो रहे थे। इससे प्रजा भी अत्यंत व्यथित रहती थी । राजस्थान में उस समय एक ऐसे सन्त अवतार की आवयकता थी, जो अपने साम्य व्यवहार से और साम्य भाव का उपदेश देकर प्राणियों को सन्मार्ग में प्रवृत कर सके तथा दंभ से बचाकर निद्रम्भ निर्गुण ब्रह्म की भक्ति द्वारा मुमुक्षुओं को परमात्मा का साक्षात्कार कराने में समर्थ हो ।

दादू अवतार

उक्त कार्य की पूर्ति के लिए परमेवर ने सनकादिक मुनियों को समर्थ जानकर उनमें से किसी एक को राजस्थान में भेजने का विचार किया और सनकजी को ही भेजने का निश्चय कर लिया ।

किन्तु उन्हे कहां और किसके यहां प्रकट होने की आज्ञा दी जाय? यह विचार आते ही, अपने एक परमभक्त का स्मरण आ गया । वे भक्त गुजरात प्रांत के अहमदाबाद नगर के निवासी लक्ष्मीराम बडनगरा के पौत्र और विनोदीराम के पुत्र लोधीराम नागर ब्राह्मण थे ।

विनोदीराम के तीन सन्तान थी। लोधीराम से छोटे आनन्दराम थे। एक बहिन थी उसका नाम रामाबाई था। लोधीराम की पत्नी का नाम बसीबाई था। लोधीराम व्यवहार में अति निपुण थे। आनन्दराम की पत्नी का नाम चन्दनी था। आनन्दराम ब्रह्मविद्या के अनुरक्त थे। ये अच्छे धनी और व्यापारी थे। इनका माल जहाज द्वारा आता जाता था। इनके रूई के व्यापार अधिक था और एक रूई पीनने का कारखाना भी था। इन दोनों ही भाइयों के पुत्र नही हुआ था। आनन्दराम के एक पुत्री हुई थी । उसका नाम हीराबाई था, किन्तु वह बचपन में हवा के समान तेज चला करती थी इससे उसका लाड-प्यार का नाम हवाबाई पड़ गया था। फिर सब हवाबाई नाम से ही बोलते थे। लोधीराम की आयु 55 वर्ष की हो गई थी

किन्तु अभी तक उसके कोई सन्तान नही हुई थी । वे पुत्र प्राप्ति के लिए नाना पुण्य कार्य करते थे। पुत्र के लिए प्रतिदिन प्रभु से प्रार्थना करते थे व साधु सेवा करते थे। साधुसेवा के लिए उनके पास धन बहुत था।

इससे प्रभु ने अपने भक्त लोधीराम की इच्छा पूर्ण करने के लिए उसका ही पौष्य पुत्र सनकजी को बनाने का विचार किया। फिर समुद्र के टापू में तपस्या में संलग्न सनकादिक मुनियों को नभवाणी से कहा-“हे मुनियों। आप सदा ही संसार के हित में रत हैं। इस समय संसार में आप में से एक मुनि को लोक कल्याणर्थ कुछ समय के लिए जाना होगा।” सनकादि मुनि बोले- आपकी आज्ञा शिरोधार्य है । आप आज्ञा करें किस को भेजना चाहते है ?

सनकजी को हरि आज्ञा

हरि बोले- आपसे सनक जी अपनी योग शक्ति के बालक रूप बनाकर लोक कल्याणार्थ मत्यु लोक के मध्य भारतवर्ष के गुजरात प्रांत के अहमदाबाद नगर के निवासी लोधीराम नागर बाह्मण के पौष्य पुत्र बनकर रहें। आगे करने योग्य कार्य की आज्ञा आपकी एकादश वर्ष की आयु में आपके पास आकर मैं दूंगा। सनकजी ने कहा- ऐसा ही करूंगा।

प्रभु की आज्ञा होने पर सनकजी ने सनन्दन आदि तीन मुनियों को कहा- आप लोग यहां ही ब्रह्म चिन्तन में निर्मग्न रहें। मुझे मानव वर्ष गणना से 60 वर्ष से भी कुछ कम समय मत्यु लोक में रहने की प्रभु की आज्ञा है । हमारी काल गणना से यह समय बहुत ही अल्प है। अतः थोड़े ही समय में मैं आप लोगों से आ मिलूंगा। यह कहकर मुनियों के सामने ही सनकजी अन्तर्घ्यान हो गये और अपनी योग शक्ति से अहमदाबाद नगर के मार्ग में अकेले जाते हुये कश्यप गोत्री बडनगरा नागर लोधीराम के सामने सन्तरूप में प्रकट हुये।

लोधीराम नागर ने सन्तजी को देखकर दण्डवत की, फिर हाथ जोड़कर सामने

खड़ा हो गया। पुत्र न होने की चिन्ता से उस समय भी उसका मन खिन्न तथा मुख मंडल उदास था। उनकी ओर देखकर सन्त जी ने पूछा- तुम उदास क्यों हो? तुमको क्या दुःख है? लोधीराम ने कहा स्वामिन! और तो आप की कृपा से सर्व आनन्द है, किन्तु पुत्र न होने से मेरा मन सदा व्यथित रहता है। पुत्र बिना विशाल धन राशि मुझे सुखी नही कर रही है। पुत्र प्राप्ति के लिए उपाय भी मैंने बहुत किये हैं, किन्तु अभी तक मेरी इच्छा पूर्ण नही हो सकी है।

लोधीराम को पुत्र की प्राप्ति का वरदान

लोधीराम की उक्त बातें सुनकर सन्तजी ने कहा- तुम्हारे औरस पुत्र तो नही होगा, किन्तु तुमको पौष्य पुत्र अति उत्तम प्राप्त होगा। लोधीराम ने पूछा- भगवन! वह कहां और कब प्राप्त होगा? मेरी 55 वर्ष की अवस्था हो गई है, अतः शीघ्र ही मिलना चाहिये। सन्तजी ने कहा- अब शीघ्र ही प्राप्त होने वाला है। तुम जब साबरमती नदी पर स्नान करके जहां प्रभु का भजन करते हो उसी स्थान में प्रातःकाल नदी जल की तरंगों में बहता हुआ एक अति तेजस्वी बालक मिलेगा, उसे ही ले जाना। वही तुम्हारा पौष्य पुत्र होगा। अब तुम पुत्र न प्राप्त होने की चिन्ता छोड़ दो, तुम्हारे पर प्रभु की कृपा हो गई है। उस तुम्हारे पुत्र से अनेको का उ(ार होगा।

यह कहकर सन्तजी उसके सामने ही अन्तर्ध्यान हो गये। उनके अदृश्य होने से लोधीराम को पूर्ण विश्वास हो गया कि ये कोई उच्चकोटी के सि(सन्त ही थे, तभी तो तत्काल मेरे सामने खड़े-खड़े ही अदृश्य हो गये हैं। इनका वचन कभी भी मिथ्या नही हो सकता, सत्य ही होगा। यह घटना लोधीराम नागर ने उपनी धर्मपत्नी बसी को भी सुनाई। तब बसी ने कहा- प्रभु हमारी इच्छा पूर्ण करेंगे ही।

पुत्र प्राप्ति

वि.सं.1601 फाल्गुणृशुक्ला अष्टमी, बृहस्पतिवार, छत्रयोग पुष्प नक्षत्र के समय

प्रातःकाल लोधीराम साबरमती नदी में स्नान करके नदी के तट पर आसन लगा कर भगवद भजन कर रहे थे। उसी समय सनकजी ने अपनी योग शक्ति से एक नौका के आकार के समान छोटा सिंहासन रचकर तथा उस पर कमल पुष्पों के दल बिछा कर और अपना बालक रूप बना के उसमें शयन किया। फिर साबरमती नदी के प्रवाह में बहते हुये लोधीराम नागर के पास पहुंचे। उसे देख कर उस सन्तजी का वर लोधीराम को स्मरण हो आया। वे शीघ्रता से उठे और उसे जा पकड़ा। उसमें शयन करते हुए परम तेजस्वी शिशु को देखकर लोधीराम अत्यंत प्रसन्न हुये। सिंहासन से बालक को गोद में लेकर जल से बाहर निकाल लाये और अपने भाग्य की श्लाघा करते हुये प्रभु को धन्यवाद देने लगे। फिर सिंहासन की ओर देखा तो वह नही दिखाई दिया।

वह तो योगमाया जन्य था। उसी क्षण अन्तर्ध्यान हो गया। किन्तु थोड़ी ही देर में लोधीराम के मन में संलकल्प उठा– मुझे मेरी जाति वाले कहेंगे कि इसे तुम क्यों उठा लाये हो? इस की जाति का तो पता ही नही है, कौन जाने यह बालक किसका है? तब मैं उनको क्या कहूंगा?

इस चिन्ता में निमग्न हो रहे थे कि नभवाणी से ईश्वर ने कहा–"तुम ऐसी चिन्ता मत करो, यह बालक मेरा ही स्वरूप है। इससे कोटिन प्राणियों का उ(ार होगा। तुम्हारे को जिस बह्मविद सन्त ने पुत्र प्राप्त होने का वर दिया था, वे ही पुत्र बने हैं। ये मेरी ही रूप हैं, यह सत्य समझो। तुम सब चिन्ता छोड़कर इस बालक को घर ले जाओ। इस बालक का दर्शन करके तथा इसकी अदभुत लीलायें देखकर तुम्हारे जाति वालों के मन में जाति संबन्धी शंका नही होंगी।"

उक्त नभवाणी को सुनकर लोधीराम अति प्रसन्न हुये। उनकी सब चिन्ता चली गई।

उत्सव व बाललीला

लोधीराम नागर उस महान तेजस्वी बालक को अति स्नेह से गोद मे लेकर घर आए और अपनी धर्मपत्नी को देखकर कहा- पूर्व सन्त के वरदान के अनुसार ही यह बालक नदी में बहता हुआ मुझे मिला है। ज्योंही माता ने बालक को गोद में लिया उसी क्षण ममता वात्सल्य के वेग से माता के वक्षस्थल से दूध ध ाारा बहने लगी। इस अदभुत लीला को देखकर तथा बालक का दर्शन करके सब जाति वाले अत्यन्त प्रसन्न हुये। किसी के भी मन में भी इस बालक की जाति सम्बन्धी शंका ही नही उठी। सब अदभुत आनन्द में निमग्न थे।

बालक का स्वभाव प्रायः अपने हाथ में आयी वस्तु दूसरों को देकर उनका दुःख मिटाने का था, इस गुण को देखकर बालक का नाम 'दादू' रखा गया।

जयमल्ल प्रसंग-1

इन्ही दिनों में राजस्थान के ढूंढार प्रदेश के ग्राम बौंली में जयमल्ल की माता ईश्वर भक्ति में तल्लीन रहती थी। वह अपने पुत्र को राम-राम जपने की प्रेरणा देती रहती थी। पुत्र जिज्ञासा करता था- हे माता। किसी गुरू से उपदेश दिलाओ, तभी राम नाम जपने की विधि समझ में आएगी। पुत्र की इच्छा देखकर माता उसे सि(सन्त मुकुन्द भारतीजी के पास ले गई। माता ने जलमल्ल को शिष्य बनाकर दीक्षा मंत्र देने के लिए प्रार्थना की। माता की प्रार्थना सुनकर मुकुन्द भारतीजी उसके पुत्र का भविष्य जानने के लिये कुछ समय के लिये ध्यानास्थ हो गये। ध्यानावस्था में ज्ञात हुआ कि यह युवक सनकजी के अवतार सन्तप्रवर श्री दादूजी का शिष्य होगा। मुकुन्द भारतीजी ने कहा- हे माता। यह आपका पुत्र तो महान सन्त दादूजी का शिष्य बनेगा। मैं इसे अपना शिष्य नही बना सकता हूं।

सन्त प्रवर दादूजी सनकजी के अवतार हैं । वे राजस्थान की जनता के कल्याणार्थ

ही विशेष रूप से अवतरित हुये हैं। दादूजी जब राजस्थान में आमेर में पधारेंगे तब तुमको अवश्य ही ज्ञात हो जायेगा। फिर उनके पास ले जाकर इसको दादूजी का शिष्य बना देना, यह भी दादूजी का शिष्य होकर महान सन्त हो जाएगा। दादूजी के द्वारा तीन कोटि प्राणियों का उ(ार होगा, यह मैनें अभी अपनी योगश्शक्ति से जान लिया है। मुकुन्द भारतीजी के वचन सुनकर माता सहर्ष मुकुन्द भारतीजी की प्रणाम करके अपने पुत्र के साथ अपने ग्राम बौंली को लौट आई और पुत्र के सहित भगवत भजन करते हुये सन्त प्रवर दादूजी की प्रतिक्षा करने लगी।

मुकुन्द भारतीजी का अहमदाबाद जाना

माता और जयमल्ल के जाने के पश्चात मुकुन्द भारतीजी ने भी विचार किया– उन सनकजी के अवतार महान सन्त दादूजी का मुझे भी अवश्य दर्शन करना ही चाहिये। फिर मुकुन्द भारती जी पचास सन्तों के साथ विचरते हुये अहमदाबाद पधारे। वहां लोधीरामजी नागर का पता लगाकर उन्हें बुलाया और लोधीराम जी के आने पर मुकुन्द भारतीजी ने कहा– हम आपके पुत्र दादूजी का दर्शन करने राजस्थान से आये हैं। लोधीरामजी ने कहा– अभी वह बालक है। आप लोग घर पर पधारें। भोजन भी सब सन्त घर पर ही करें। फिर लोध ीरामजी ने अपने बाग में सब सन्तों को ठहरा दिया।

मुकुन्द भारतीजी पचासों सन्तों के साथ लोधीरामजी के घर जाकर चार वर्ष के बालक दादूजी का दर्शन करके सब सन्तों के साथ परमानन्द में निमग्न हो गये। फिर भोजन करके बाग में पधार गये। मुकुन्द भारतीजी पाँच दिन अहमदाबाद में लोधीरामजी के बाग में रहे। लोधीरामजी प्रतिदिन दादूजी को लेकर प्रातः व सायं मुकुन्द भारतीजी के दर्शन व सत्संग करने जाते थे। मुकुन्द भारतीजी दादूजी का दर्शन करके परमानन्द में निमग्न हो जाते थे। पाँच दिन निवास करके जब मुकुन्द भारतीजी हिंगलाजदेवी की यात्रा करने पधारने लगे तब लोधीरामजी ने उन्हे मार्ग व्यय के लिए आवश्यक अर्थ भेंट स्वरूप में दिया। फिर सभी सन्त प्रसन्नता पूर्वक शुभाशीर्वाद देते हुये आनन्द से पधार गये।

दादूजी को शिक्षार्थ विद्यालय में ले जाना

दादूजी पाँच वर्ष के हो गये तब एक दिन लोधीरामजी ने अपनी धर्मपत्नी ेको कहा- अब बालक पढ़ने योग्य हो गया है, अतः अब इसे पढ़ने के लिए विद्यालय में भेजना आरम्भ कर दो। धर्मपत्नी ने कहा- यह तो उचित ही है। मेरे विचार से पण्डित गोविन्दरामजी अच्छे विद्वान और शील स्वभाव के हैं तथा उनका विद्यालय अपने घर से ज्यादा दूर भी नही है। अतः गोविन्दरामजी के यहां ही भेजने का प्रबन्ध कर दीजिये।

लोधीराम ने गोविन्दरामजी को बुलाकर, बालक दादू को पढ़ाने की प्रार्थना की। गोविन्दरामजी ने कहा- बहुत अच्छा, आपका बालक दादू तो अभी ही दैवीगुणों से सम्पन्न है, उसको पढ़ाना तो अति सुगम ही है। आप भेजना आरम्भ कर दीजिये।

एक अच्छा दिन देखकर स्वयं लोधीरामजी बालक दादू को लेकर गोविन्दरामजी के विद्यालय में गये और विधिपूर्वक विद्यालय में प्रवेश कराया । फिर गोविन्दरामजी ने बालक के हाथ में पट्टी दी और अपने हाथ से दादूजी का हाथ पकड़कर 'श्रीराम' लिखवाया। 'श्रीराम' लिखते समय बालक को परमानन्द का अनुभव हुआ। आनन्द से बालक का मुखमंडल अति प्रसन्न देखकर, गोविन्दरामजी ने अपने मन में विचार किया कि यह बालक अवश्य कोई होनहार सन्त है। तभी तो इसे राम नाम लिखने में अति प्रसन्नता हुई है। दादूजी ने अपनी मातृभाषा गुजराती को थोड़े ही दिनों में पढ़ लिया। उन्होंने फारसी व संस्कृत भाषा पढ़ी। उस समय की राजभाषा उर्दू थी, उनका भी उन्होंने पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया। इस तरह तीन भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

सातवें वर्ष में सन्त रूप में ईश्वर दर्शन

दो वर्ष तक गोविन्दरामजी के विद्यालय में पढ़ते लिखते दादूजी सात वर्ष के हो

गये। एक दिन घर की तरफ जाते हुये मार्ग में एक दिव्य स्वरूप अवधूत सन्त मिले। उन्हें देखकर दादूजी ने शीश नवाया और उपदेश देने के लिए कहा। सन्त बोले- अभी बाल बुर्ि(है, ग्यारह वर्ष की अवस्था ज्ञानोपदेश के लिए उचित मानी गई है। यों कह कर सन्त अन्तर्ध्यान हो गए, बालक दादूजी हार्षित होते हुये घर आ गये।

दादूजी से उनके पिता ने कहा कि अब व्यापार कार्य भी समझो। वाणिज्य शिक्षा भी ग्रहण करो। बालक की अरूचि देखकर पिता लोधीराम उसे अपने साथ ले गए तथा बही खातों की प(ति समझाने लगे। दादूजी ने ऊपरी मन से काम किया। उनके मन में तो रामलगन समाई हुई थी।

इस तरह दादूजी के दस वर्ष के हो जाने पर माता- पिता ने दादूजी का विवाह करने का विचार किया। जब दादूजी ने विवाह रचाने की बात सुनी, तो व्याकुल हो गये। उन्होंने अपने माता -पिता से कहा कि आप मेरे विवाह का विचार त्याग दीजिये नही तो मै घर छोड़कर चला जाऊँगा। बालक का ऐसा विचार जानकर माता-पिता ने भी जिद्द करना ठीक नही समझा। माता -पिता की आज्ञानुसार कार्य करते हुये दादूजी भगवत भजन में लीन रहते थे। इस प्रकार उनकी अवस्था ग्यारह वर्ष की हो गयी थी।

वृ(भगवान का दर्शन

एक दिन दादूजी अपने साथी बालकों के साथ, दिन के तीसरे पहर में अहमदाबाद के कांकरिये तालाब पर खेलने गये थे। वहां खेलते-खेलते सायंकाल का समय होने वाला ही था कि उसी समय अकस्मात ही बालको से कुछ ही दूर पर भगवान एक वृ(मुनि के रूप में प्रकट हुये। उन मुनिजी को देखकर अन्य सब बालक तो भयभीत होकर भाग गए, किन्तु दादू नहीं भागे और सहज गति से वृ(रूप धारी भगवान के पास आये। श्र(ा भक्ति से प्रणाम करके भेंट देने के लिए अपने कुरते की जेब में हाथ डाला तो एक पैसा मिला, वही वृ(रूप ब्रह्म

को भेंटरूप में दे दिया। भगवान को तो भक्ति ही प्रिय होती है। बालक की भक्ति से प्रभु प्रसन्न होकर बोले- अन्य सब बालक भाग गए तो तुम क्यों नही भागे? दादूजी ने कहा- प्रभो! आप से भाग कर कहां जाता? आपके दर्शन से मुझे भय नही हुआ है अपितु निर्भयता ही आई है।

फिर वृ(;ब्रह्मद्ध ने कहा- अच्छा इस पैसे की जो वस्तु तुम को प्रथम मिले वही लेकर शीघ्र आ जाओ, देर नही करना। दादूजी गये, कुछ दूरी पर पान की दुकान थी। उससे पान लेकर शीघ्र ही आ गए और प्रभु को दिया। प्रभु ने पान खाया और बालक को भी प्रसाद दिया। मस्तक पर अपना वरदहस्त कमल भी रखा। उसी समय दादूजी के मुख कमल से निकला-

दादू गैब मॉंहि गुरूदेव मिल्या, पाया हम सु प्रसाद।
मस्तक मेरे कर धरचा, दीक्षा अगम अगाध।।3।।

;दादू वाणी-गुरूदेव के अंगद्ध

यह दादूजी का प्रथम पद्य है। ;इसके पश्चात उनके मुख से समय समय पर पद्यमय वाणि अन्त समय तक निकलती रही थी, उसे मोहनदास दफ्तरी, सन्तदासजी, रज्जबजी और जगन्नाथजी लिखते रहते थेद्ध

वृ(भगवान ने दादूजी को निर्गुण ब्रह्म भक्ति का उपदेश देकर कहा- इसे भूलना नही और इसका प्रचार करना। दादूजी ने कहा- कभी नही भूलूंगा। वृ(;ब्रह्मद्ध ने कहा तुम्हारी इच्छा हो तो वही वर मांग लो। दादूजी ने अनन्य भक्ति का वर मांगा। भगवान ने प्रसन्न होकर दादूजी से कहा- एक बार फिर तुमको दर्शन देकर आगे का कर्तव्य बताऊंगा। तुम मेरी बताई हुई प(ति से निर्गुण भक्ति करना और अन्यों से कराना। यह कहकर वृ(;ब्रह्मद्ध अन्तर्ध्यान हो गये।

बालकों ने जाकर अपने भावनानुसार लोधीराम को वृ(का परिचय दिया। बालकों की बातें सुनकर लोधीराम कांकरिये तालाब पर गए और दादूजी से पूछा- यहां

क्यों बैठे हो? घर चलो। दादूजी ने कहा- यहां मुझे वृ(भगवान मिले थे और निर्गुण भक्ति का उपदेश दिया था।

गृह त्याग

जब से भगवान दादूजी को वृ(सन्त के रूप में दर्शन का उपदेश दिया तब से दादूजी के हृदय में पवित्र ज्ञान का उज्जवल प्रकाश हो गया। मन में त्याग वैराग्य और भक्ति निवास करने लगी, जगत व्यवहार से चित उदास रहने लगा। सामग्री भण्डार के कपाट खोलकर धन सम्पत्ति, द्रव्य वस्तुयें वितरित करने लगे। खास जनों के रोकने पर भी नही माने साधु ब्राह्मणों को भोजन कराते रहते, द्रव्य बांटते रहते। इस तरह सात वर्ष बीत गए। यह देखकर माता पिता का मन बहुत दुखी हुआ। पिता ने समझाते हुये कहा - हे पुत्र! इस तरह धन संपत्ति क्यों बांट रहे हो? श्री दादूजी ने कहा- हे पिताजी! यह सब सम्पत्ति तो ईश्वर की ही है। जो उसकी है, उसे सर्वव्यापक मान कर लौटा दीजिए। धन का यही सदुपयोग है कि उसे ईश्वर के निमित्त लगा दो।

ऐसे वचन सुनकर नागर विप्र के आँखों से अश्रु बहने लगे। पिता ने बाहु पसार कर दादूजी को गले लगा लिया। श्री हरि की प्रेरणा से दादूजी ने पिता का सम्पूर्ण मोह आलिंगन के समय ही खींच लिया। विप्र लोधीरामजी के हृदयमें ज्ञान का प्रकाश फैल गया रात भर दादूजी पिता का मोह दूर करते रहे। रात्रि बीतने पर अपने वस्त्र और आभूषण उतार दिये। श्वेत वस्त्र धारण करके हार्द्रिक प्रसन्नता अनुभव करने लगे।

श्री दादूजी के मन में तो योग साधना की प्रबल इच्छा थी, अतः पिता की सब धन-सम्पत्ति, घर व प्रदेश को 18 वर्ष की अवस्था में त्याग कर चल दिए। निर्भय होकर पूर्व दिशा की ओर बढ़ने लगे। रमते हुये श्री दादूजी मालव देश के पेटलाद नगर के समीप पहुंचे कुछ दिन वहां निवास किया। उस समय उनके पास दो बालक आये और चरण स्पर्श किया। श्री दादूजी ने उनकी ज्ञान-पिपासा

पहचानकर सिर पर हाथ धरा, और उपदेश देकर अपना शिष्य बना लिया। माणकदास और ज्ञानदास नामक उन दोनों शिष्यों के साथ प्रस्थान करके दादूजी आबू पर्वत पहुंचे।

आबू पर्वत पर आगमन

आबू पर्वत पर सि(ों के साथ विचार गोष्ठि के दौरान दादूजी ने उनको प्रभु प्राप्ति का श्रेष्ठ साधन बताया। उसी समय अहमदाबाद में श्री दादूजी के माता-पिता ने भौतिक देह त्याग किया। आबू पर्वत पर खड़े हुये श्री दादूजी ने नभ मार्ग से जाते हुये अपने माता- पिता को देखा। अपने शिष्यों को योग शक्ति से दिखाते हुये वे बोले-देखो, मेरे इस शरीर के माता-पिता विमान पर बैठकर स्वर्गलोक को जा रहे हैं। उन्होंने यह भौतिक शरीर त्याग दिया है। शिष्य देखकर आश्चर्य चकित रह गये।

ज्ञानदास, माणकदास को केदार देश जाने की आज्ञा

आबू पर्वत पर ही ज्ञानदास, माणकदास को दादूजी महाराज ने कहा-अब तुम अच्छे योगी सन्त हो गये हो और सागर के मध्य केदार टापू में जाकर वहां के लोगों की हिंसा छुड़ाने का प्रयत्न करो । वहां के लोग देवी को इष्ट मानकर देवी को पशुबली देने के रूप में महान हिंसा करते हैं। उस देश में एक धरत्या जैमल और दूसरा पद्मसिंह दो राजा राज करते हैं। धरत्या जैमल तुम्हारे उपदेश से देवी की हिंसामय उपासना छोड़ भगवद् भक्त हो जाने से अहिंसक बन जायेगा। फिर वह अपनी प्रजा को भी भगवद् भक्ति द्वारा अहिंसक बना लेगा। पदम्सिंह हिंसामय देवी की उपासना नही छोड़ेगा। तब धरत्या जैमल और उसकी प्रजा तुमको कहेगी, किसी प्रकार भी पदमसिंह और उसकी प्रजा भी अहिंसक बननी चाहिए। तब तुम राजा प्रजा सहित मेरे से प्रार्थना करोगे उस समय मैं पदमसिंह और उसकी प्रजा को अहिंसक बना दूंगा। अब तुम केदार देश के लिए प्रस्थान करो और मैं भी हरि आज्ञानुसार राजस्थान में जाता हूं। तुम निरंतर निर्गुण ब्रह्म की भक्ति करते रहना। अब से पांच वर्ष व्यतीत होने पर तुमको सिंधु के पास योगीराज गोरक्षनाथजी के दर्शन भी होंगे। इस प्रकार आदेश देकर ज्ञानदास माणकदास को केदार देश टापू का मार्ग बता दिया। फिर दानों गुरू भाइयों ने

गुरूदेव दादूजी को साष्टांग दण्डवत प्रणाम 'सत्यराम' बोलकर किया। फिर केदार देश टापू को चल दिये। ये दानों गुरू भाई निरंतर निर्गुण भक्ति करते हुये भिक्षान्त से निर्वाह करते थे तथा अधिकारानुसार लोगों को ज्ञान भक्ति आदि का उपदेश करते थे। इस प्रकार गुरू आज्ञानुसार शनैः शनैः केदार देश के बताये हुये मार्ग से आगे बढ़ रहे थे और समुद्र के पास पहुंच गये थे।

पांच वर्ष पश्चात उनको महान् योगीराज गोरक्षनाथजी के दर्शन हुये और उन्होंने गोरक्षनाथजी से राज्य में हिंसा छुड़वाने के लिए कहा। गोरक्षनाथ जी ने कहा जब पद्मसिंह से हिंसा नही छुड़ा पाओगे तब सम्पूर्ण प्रजा की प्रार्थना पर दादूजी यहां योगमाया से प्रकट होंगे और अपने ज्ञानोपदेश से राजा को समझाकर हिंसा बन्द करवायेंगे। ऐसा मैंने योगशक्ति से जाना है।

ज्ञानदास और मानकदास उस टापू प्रदेश में अहिंसात्मक ईश्वर भक्ति का प्रचार करने लगे और उनका प्रचार दिन प्रतिदिन बढता गया। राजा धरचा जैयमल ने भी उनका उपदेश मान लिया।

ज्ञानदास और मानकदास दादूजी के सौ शिष्यों में हैं।

करडाला गमन

श्री दादूजी आबू पर्वत से प्रस्थान करके भक्तों के आग्रह से सिरोही, पाली, पीपाड़, अजमेर, पुष्कर, मेड़ता आदि नगरों में भ्रमण करते हुये कुचामण रोड़ से दक्षिण की ओर लगभग 12 मील तथा पर्वतसर से चार मील उत्तर की ओर कल्याणपुर ;करडालाद्ध पधारे और वहां के पर्वत को ही अपनी साधना का स्थान निश्चित किया। पर्वत की नीचाई में पास ही ग्राम बसता था। पर्वत के मध्य भाग में एक विशाल कक्केड़े का वृक्ष था। उसकी शाखायें इस प्रकार नीचे झुकी हुई थी कि उसके नीचे का भाग गुफा सा बन रहा था। उसके नीचे बैठने पर दृष्टि दूर नही जा सकती थी और उसके नीचे बैठा व्यक्ति भी पूर्ण ध्यान से देखने पर ही बाहर

खड़े दूर के व्यक्ति को दिखता था। अतः उसके नीचे ही दादूजी ने उपनी तपस्या आरम्भ कर दी। वह एकान्त स्थान तो था ही ध्यान में विघ्न का भी प्रसंग वहां नही आता था। अधिक समय उसके नीचे ही आप ध्यानस्थ रहते थे। करडाला ग्राम की जनता दादूजी को पूर्ण सन्तोष की मूर्ती ही समझती थी और स्वतः ही अपने से होने वाली सेवायें करती रहती थी। अब उस कक्केड़े के स्थान पर एक कुटिया और एक छत्री बनी हुई हैं। वहां जाकर भक्त लोग दण्ड़वत प्रणाम करते हैं, प्रसाद चढ़ाते हैं अपनी अपनी भावना के अनुसार लाभ उठाते हैं। करडाला स्थान ही दादूजी की प्रथम तपोभूमी है।

करडाले के प्रेत की मुक्ति

दादूजी के करडाला पधारने से पहले वहां एक प्रेत रहता था, उस प्रेत के भय से वहां कोई भी नही आता था। दादूजी के पधारने से वहां लोग आने लगे। वह प्रेत एक दिन सायंकाल आरती के समय आया और कुचेष्टा करने लगा, इससे आरती गाने वालों की लय भंग हो गई। उनको विक्षिप्त देख दादूजी ने पूछा क्या बात है? क्यों डर रहे हो? आरती गाने वाले सन्त और भक्तों ने कहा- कोई प्रेत ज्ञात होता है, वह अपनी कुचेष्टाओं से विघ्न डाल रहा है।

तब दादूजी ने भी उसको देखा और दयापूर्वक उस पर अपने कमण्डल का जल डालकर उसको प्रेतयोनी से मुक्त कर दिया। वह तत्काल एक सुन्दर पुरूष के रूप में बदल गया। दादूजी को प्रणाम करके तथा हाथ जोड़ के सामने खड़ा हो गया। दादूजी ने पूछा-तुम कौन हो? उसने कहा-भगवन् ! मैं पहले इसी ग्राम का ग्वाल था। इस पास की पहाड़ी में पशु चराया करता था। एक समय इस पहाड़ी पर एक महात्मा आ गये थे, वे पहाड़ी की एक शिला पर बैठे-बैठ भजन ही करते रहते थे, कहीं जाते आते नही थे। मेरी माँ मुझे दो रोटी देती थी और एक जल का पात्र भी भर देती थी। मैं उन दो रोटियों में से एक रोटी प्रतिदन महात्मा जी को देता था और मैं एक ही रोटी खाकर रह जाता था। अपने जलपात्र से उनको जल भी पिला देता था। रोटी तथा जल देने की बात

मैंने मेरे घर वालों को नही कही थी। इस प्रकार चिरकाल तक वे महात्मा उस शिला पर भजन करते रहे। फिर जब उनको विचरने की इच्छा हुई, तब वे एक दिन मेरे को बोले- भैया तुमने हमारी बहुत सेवा की है, अब हम यहां से विचरने वाले हैं । अतः तेरी इच्छा हो वही एक वर मांग ले। मैंने कहा- भगवन् ! मेरी आयु बड़ी हो जाए यही वर आप मुझे कृपा करके दें। महात्माजी ने कहा- बड़ी आयु प्रेत की होती है तू भी प्रेत हो जा। फिर मैं अत्यन्त दुःखी होकर महात्माजी से बोला- भगवन् ! यह आपने मुझे शाप दिया है। मुझे अति आश्चर्य हो रहा है, क्या सन्त सेवा का फल भी शाप होता है ? महात्माजी ने कहा- यह शाप नही वर ही है। मैने पूछा कैसे ? वे बोले इस प्रेत योनि में तेरे को ब्रह्म स्वरूप सनक जी के अवतार सन्तप्रवर दादूजी का दर्शन होगा। उनके दर्शन से तेरी प्रेतयोनि छूट जाएगी फिर उसी समय उत्तम लोक को प्राप्त हो जाओगे। तू चिन्ता मत कर यह कहकर सन्त तो विचर गये, फिर मेरा देहांत होने पर मैं प्रेत होकर यहां रहने लगा। आज उन महात्माजी की वाणी सत्य हो गई है। मैं आप के दर्शन से धन्य हो गया हूं।

इन्द्र द्वारा तपस्या में विघ्न

करडाले पर्वत पर दादूजी की कठोर तपस्या को देखकर देवराज इन्द्र को भय हुआ कि ये मेरे पद की इच्छा से ही इतना कठोर तप कर रहे हैं इस भय से व्यथित होकर, देवराज इन्द्र ने एक अप्सरा रूप माया को, दादूजी को तप से डिगाने के लिए दादूजी के पास करडाला के पर्वत पर भेजा। उसने आकर दादूजी के सामने काम को जाग्रत् करने की हाव भावादि रूप अनेक चेष्टायें की। किन्तु दादूजी तो निष्कामी सन्त थे, उनपर उसकी उन चेष्टाओं का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। तब उसने निश्चय किया- ये तो महान निष्कामी सन्त हैं। इनमें काम जाग्रत करना तो असंभव हैं किन्तु मुझे इन्द्र की आज्ञा इनको तपस्या से डिगाने की है। अतः इनको इनकी भावना के अनुसार कपट से डिगाने की चेष्टा की जाय तो कही सफलता मिल सके । किन्तु दादूजी उस माया के उक्त कपट से भी नही छले गये तदुपरान्त वह वापिस

देवराज पास चली गई।

इधर दादूजी की तपस्या कार्यक्रम छः वर्ष तक चलता रहा। अन्त में प्रभु ने आपको दर्शन दिया और कहा- अब मौन रखना त्याग दो, तरू पत्ते छोड़कर दूध पान किया करो।

मोरडा का वट वृक्ष हरा करना

करडाला से चलकर दादूजी विचरते हुये मोरडा ग्राम पधारे उस समय मंद-मंद वर्षा हो रही थी। दादूजी और उनके साथ वाले भक्त चाहते थे कि छाया में बैठकर वर्षा से वस्त्र बचावें किन्तु ग्राम वासी कहने लगे-आगे जाइये-आगे जाइये। इससे दादूजी ग्राम से बाहर निकल आये तालाब के किनारे पर विशाल वट का पेड़ सूखा खड़ा था। उसकी विशाल शाखाओं की ओट में दादूजी व उनके साथ जो भक्त व सन्त थे खड़े हो गये फिर दादूजी ने उपर देखा तो ज्ञात हुआ कि यह वृक्ष तो सूख गया है। तब श्री दादू ने भगवान से प्रार्थना कर कहा-

दादू सूखा रूखंड़ा, काहे ने हरिया होय।
आपे सीचें अमीरस, सुफल फलिया होय।।;7द्ध।।

;दादू वाणी- बेली का अंगद्ध

अर्थात्- हे प्रभु ! यह सन्तों को आश्रय देने वाला पेड़ सूखा है, किन्तु आप इस पर अपनी कृपारूप रस सींचे तो यह क्यों नही हरा होगा? इस प्रार्थना पर वह वट वृक्ष उसी समय हरा हो गया ।

इस घटना को इसी गाँव के एक सज्जन ने प्रत्यक्ष देखा था, उसने जाकर गांव में सबको सुनाया। तब गाँव के लोग दौड़-दौड़ कर दादूजी के पास आए और निवास करने की बहुत आग्रह पूर्वक प्राथना की। सन्त तो दयालु होते ही हैं कुछ समय के लिए वहां ठहर गये।

सांभर गमन

मोरडा से विचरते हुये भी दादूजी वि.स.1625 की प्रथम ज्येष्ठ कृष्णा द्वितीया को सांभर पधारे थे। झील के मध्य एक विशाल शिला पर उन्होंने अपना आसन बनाया। शिला के चारों तरफ पानी भरा हुआ था।

सांभर के लोग इनको शिला पर कई दिनों तक देखकर अति आश्चर्य करने लगे थे और सोचते थे कि ये सन्त क्या खाते पीते होंगे? शिला पर आने जाने का मार्ग तो पानी से भरा हुआ है, वहां भोजन और जल कोई कैस पहुंचा सकेगा? एक दिन विठ्ठलव्यास नामक एक विद्वान ब्राह्मण ने दादूजी की चर्चा जनसाधारण से सुनी। उन्होंने झील के तट पर जाकर देखा कि झील के मध्य में एक शिला पर दादूजी विराज रहे हैं । उनके मन में विचार आया- ये तो कोई महापुरूष ज्ञात होते हैं ये क्या खाते पीते होंगे? इन बातों का पता तब चले, जब मैं उनके पास स्वंय जाऊं। श्री दादूजी ने विठ्ठलव्यास को अपने पास आने की तीव्र इच्छा जान कर कहा- आप आना चाहते हो तो 'सत्यराम' मंत्र का जप करते हुये जल पर आ जाइये, आप डूबेंगे नही विठ्ठलव्यास को दादूजी के वचन ऐसे ज्ञात हुये मानो पास खड़े हुये ही बोल रहें हों। विठ्ठलव्यास ने कहा- आपके पास आने का कोई उपाय भी हैं क्या? दादूजी ने कहा-

ऐसा कौन अभागिया, कछु दृढावे और।
नाम बिना पग धरन को, कहो कहां है ठौर।।24।।

;दादू वाणी- स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्- यहां ऐसा अभागा पुरूष कोई नही है, परमात्मा के नाम को छोड़कर, इसके लिए अन्य उपाय बतावें जल पर ऐसे स्थान कहां है, जिस पर प्रभुनाम के बिना पैर रखकर तैर सके।

दादूजी के वचन पर तथा परमात्मा के नाम पर दृढ़ विश्वास करके विठ्ठलव्यास

जल पर स्थल के समान चलकर शिला पर पहुंच गये और दादूजी को प्रणाम करके पूछा- आप कहां से पधारे हैं? दादूजी ने कहा- मैं अहमदाबाद से विचरता हुआ अनेक स्थानो निवास करके यहां पहुंचा हूं। विट्ठलव्यास ने कहा- आप यहां क्यों आए हैं? यहां तो हमको शंख झालर बजाने की भी स्वतंत्रता नही है । फिर यहां आपका साधन निर्विध्न कैसे चलेगा? दादूजी ने कहा- भगवान चलाएंगे वैसे ही चलेगा। विट्ठलव्यास ने कहा- स्वामी जी! नगर में मेरे मंदिर में पधारिये वहां एकांत भी है तथा आपकी सर्व प्रकार की सेवा भी हम लोगों से हो सकेंगी। सांभर की जनता को भी आपके दर्शन व सन्तसंग का लाभ होगा। दादूजी ने कहा- जैसे हरि की आज्ञा होगी वैसा ही होगा। मैं तो प्रभु की आज्ञानुसार ही सब कुछ करता हूं। फिर दादूजी के हृदयाकाश में प्रभु ने प्रेरणा की- तुम विट्ठलव्यास के साथ जाओ और नगर के लोगों को उपदेश द्वारा सन्मार्ग में तथा निर्गुण भक्ति में लगाओ। तब प्रभु की आज्ञा मानकर दादूजी विट्ठलव्यास के मंदिर में पधार गए।

एक दिन विट्ठलव्यास ने दादूजी से प्रश्न किया कि आप मूर्तिपूजा क्यों नहीं करते हैं ? दादूजी ने कहा- मै मानस पूजा रूप अन्तः साधना करता हूं। अन्तः साध ाना करने वालों को मूर्तिपूजा की आवश्यकता नही रहती है और फिर कहा-

'पूजन हारे पास है, देही मांही देव।
दादू ताको छोड़कर, बाहर मांडी सेव'।।256।।

;दादूवाणी- परिचय का अंगद्ध

अर्थात् पूजने वाले के पास देह में ही देही ;आत्मस्वरूप रामद्ध देव विद्यमान हैं। उसका ज्ञान नही होने से ही बाहर मूर्ति की सेवा रूप साधना करनी पड़ती है। मूर्ति पूजा तब तक ही की जाती हे, जब तक मूर्ति वाले भगवान का यथार्थ ज्ञान नही होता है।

विट्ठलव्यास को माला प्रदान करना

कुछ दिनों के बाद विट्ठलव्यास के मन में भाव उठा कि ये सन्त ज्ञान की बातें तो बहुत सुन्दर करते हैं किन्तु बातों ही से क्या हो सकता है? आज मैं दादूजी के पास जाकर प्रणाम करूं, उस समय वे यदि मुझे बढ़िया चन्दन की माला दे देंगे तो मैं उनको साक्षात भगवान स्वरूप ही मानूंगा। विट्ठलव्यास के मन के भाव को दादूजी अपनी योग शक्ति से जान गए।

जब विट्ठलव्यास दादूजी को प्रणाम करने आया तब दादूजी ने उसके भाव के अनुसार सुन्दर चन्दन की माला उन्हें प्रदान की। यह देखकर विट्ठलव्यास अति आश्चर्यचकित हुआ। कारण उन्होंने दादूजी के पास कभी ऐसी माला देखी ही नही थी। फिर विट्ठलव्यास ने पूछा- भगवन्! यह माला कहां से आई? दादूजी ने कहा- भगवान ने तुम्हारे लिए ही भेजी है। तुमने जैसी इच्छा की थी भगवान ने वैसी ही व्यवस्था कर दी। विट्ठलव्यास के परिवार वालों की ऐसी श्र(ा हुई की दादूजी को भगवान स्वरूप मानने लगे।

दादूजी के उपदेश का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ता था। जनता बहुत आने जाने लगीं थी। सांभर के कुछ कथा वाचक और मुसलमान काजियों ने देखा कि हमारे पास आने वाले श्रोता भी दादू के पास जाने लगे है। उन लोगों ने दादूजी की निन्दा करना आरम्भ कर दिया। उक्त पण्डितों तथा काजियों की निन्दा का प्रभाव दादूजी के पास जाने वाले भक्तों पर विपरीत ही पड़ा। तब उनको अधिक ईर्ष्या सताने लगी । फिर कुछ ब्राह्मण पण्डितों और काजियों ने मिलकर अपना संगठन बनाया और सब मिलकर दादूजी के पास गए। तब दादूजी ने ब्राह्मण पण्ड़ितो और काजियों की बातें नही मानी।

निषेधाज्ञा पत्र के अंक बदलना

सांभर का मुस्लिम शासकाधिकारी श्री दादूजी की प्रतिष्ठा से द्वेष करता था। मतिहीन घर में बैठा-बैठा दुष्टता के विचार करता था। कुछ विद्वेषी ब्राह्मण और मुसलमान काजियों नें मिलकर शासकाधिकारी को श्री दादूजी के विरू(भड़काया

और निषेधाज्ञा निकलवाने का परामर्श दिया। शासकाधिकारी तो चाहता ही था और उसको अच्छा अवसर मिल गया। उसनें उन लोगों के कथनानुसार ही निषेध ाज्ञा निकालने की स्वीकृति दे दी। उसने एक आदेश लिखवाया- **जो कोई दादूजी के दर्शन करने जायेगा, वह दंडस्वरूप 500/- ;पाँच सौ रूपयेद्ध भरेगा।**

इस आदेश की घोषणा सारे शहर में करवा दी गयी। फिर भी दो सेवक दर्शन करने पहुंच गए। स्वामी जी ने कहा- भाई यहां मत आया करो। आपको व्यर्थ में दण्ड़ भरना पड़ेगा। सेवक बोले- हे स्वामी जी! जब तक हमारे पास द्रव्य है, हम दण्ड़ भरते रहेंगे। सेवकों का दृढ़ संकल्प जानकर स्वामी जी ने कहा- अच्छी बात है, आप लोग उस निषेधाज्ञा को सबके सम्मुख पढ़वा कर ही दण्ड भरना। इतने में दौड़ते हुये शासकाधिकारी के सिपाही आ गए और उनको पकड़कर कचहरी ले गए। वहां पदाधिकारी ने पूछा - तुम दादूजी के पास गये थे क्या? दोंनों ने कहा- गए थे । अधिकारी ने कहा- फिर पाँच-पाँच सौ रूपया दण्ड भरो। सेवकों ने कहा- इस निषेधाज्ञा को सबके सामने पढ़ा जाय। तब निषेध ाज्ञा सबके सामने पढ़ी गई। सभी लोगों ने सुना कि **जो कोई दादूजी के दर्शन करने नहीं जाएगा वह दण्ड़ स्वरूप पाँच सौ रूपये भरेगा।** फारसी में लिखे हुये पत्र के अंक बलते हुये देखकर शासकाधिकारी आश्चर्य चकित होकर लज्जित हुआ।तब शासकाधिकारी को निश्चय हो गया कि ये तो सच्चे सन्त हैं, इसमें उनका कोई दोष नही है। फिर उसने उन दोनों दादू भक्तों को छोड़ दिया। इस घटना के बाद सांभर की जनता में दादूजी के प्रति और भी अधिक श्र(ाभाव बढ़ गया। इसके बाद सांभर का शासका- धिकारी दादूजी के पास गया। और प्रणाम करके क्षमायाचना की।

काजी का मुष्ठि प्रहार

इस घटना के बाद पंडितों ने तो प्रकट रूप में ईर्ष्या करना छोड़ दिया किन्तु काजियों को पहले से भी अधिक ईर्ष्या सताने लगी। सांभर में श्री दादूजी के प्रति वहां की जनता का श्र(ा भाव बहुत अधिक बढ़ रहा था, और दर्शनार्थ व

सत्संगार्थ पहले से भी अधिक व्यक्ति आने लगे। दादूजी की भक्ति का प्रभाव देखकर सांभर का काजी बहुत दुःखी हुआ। उसे दादू नाम मात्र से पीड़ा होने लगी। क्रोध और मद में अन्धा होकर काजी दादूजी के पास गया और कहने लगा- अरे काफिर ! तूने सारे नगर के धर्म का नाश कर दिया है। स्वामिजी ने कहा- मूर्ख काजी ! तू क्रोध क्यों कर रहा है और अपने मद में चूर क्यों हो रहा है? पीर मोहम्मद साहब ने कुरान रचकर सबको समझाया था कि सब जीवों में एक खुदा का नूर बसा हुआ है, और तुम जीवों को मारते हो, अपनी जिह्वा के स्वाद के लिए उन्हें खा जाते हो। आगे जाकर क्या जबाब दोगे? इन करतूतों से तो तुम दोजख में ही पड़ोगे। यह सुनते ही काजी रोष से भर गया। उसने श्री दादूजी के मुख पर जोर से एक मुक्का मारा। उसका मुक्का खाकर भी दादूजी ने उस पर क्रोध नही किया और बोले- भैया तुमको मेरे शरीर पे चोट मारने से ही प्रसन्नता होती है तो इस दूसरे गाल पर भी मार सकते हो। वह काजी दुर्जन तो था ही, उसने दूसरे गाल पर मारने के लिए हाथ ऊंचा किया तब उसका हाथ उपर ही रह गया और नीचे नहीं हुआ। उसके हाथ में भयंकर पीड़ा शुरू हो गई। काजी हाय-हाय पुकारने लगा, चीखने चील्लाने लगा और तड़फता हुआ दादूजी को कोसने लगा। सन्त का अनादर श्री हरि को सहन नही हुआ तब दादूजी ने प्रभु का धन्यवाद करते हुए कहा-

राखणहारा एक तू, मारण हार अनेक।
दादू के दूजा नही, तूं आपै ही देख।।4।।

अर्थात्- हे प्रभो! मेरे शरीर पर मारने वाले तो बहुत हैं किन्तु रक्षा करने वाले आप एक ही हैं। मेरा तो आप को छोड़कर दूसरा आश्रय है ही नहीं, यह तो आप स्वयं ही देख रहे हैं ।

जिस हाथ से काजी ने मुक्का मारा था वह हाथ गलने लग गया और ईश्वर के कोप से तीन मास तक अत्यंत असहनीय दुःख से तड़फता रहा और अन्त में मरकर यमलोक चला गया।

उरमाइल काजी की रूई जलना

इस घटना के पश्चात् उरमाइल नामक दूसरा काजी सांभर में आया। उसने दादूजी से कुटिलता प्रारम्भ कर दी और सन्त से वैर विरोध करने लगा। अब मैं दादूजी को त्रास दे देकर मारूंगा। आधा जमीन में गाड़ दूंगा, लोह-बेड़ियों में जकड़ दूंगा, बाण चलाकर खोपड़ी छेद दूंगा और तोप के बांध के उड़ा दूंगा। भय दिखाये बिना हमारे खुदा का दीन ईमान के कैसे बना रहेगा? तब परमेश्वर ने दुष्टता को रोकने के लिए अग्निदेव को प्रेरणा दी। यह दुष्ट सन्त को दुःख देगा अतः इसके घर को जला दो। अग्निदेव ने उसी रात उसके घर में रखी हुई सात सौ मन रूई, उसकी स्त्री ओर बाल बच्चे आदि सब को भस्म कर दिया। वह काजी किसी दूसरे स्थान पर गया हुआ था इस कारण वह बच गया। इस घटना के पश्चात् वह काजी फिर दादूजी से डरने लगा और वैर विरोध छोड़ दिया और श्री दादूजी के चरणों में गिर गया।

एक दिन सांभर में एक व्यक्ति ने दादूजी के पास आकर दादूजी को गालियां देना आरंभ कर दिया। किसी सन्त ने दादूजी से कहा- यह व्यक्ति व्यर्थ में आपको गालियां देता है। तब दादूजी ने उसको एक पद सुनाया और प्रेम किया। तब वह बहुत लज्जित हुआ और मिठाई लेकर दादूजी के पास आया सन्तों का ऐसा महान स्वभाव होता है, वे किसी का बुरा चाहते ही नही हैं।

मतवाला हाथी छोड़ना

दादूजी की बढ़ती प्रतिष्ठा को देखकर मुसलमान दादूजी से ईर्ष्या करने लगे। इन्ही दिनों में विलंदखान खोजा दिल्ली से सांभर आया था। यह बादशाह का कृपापात्र था। काजी आदि मुख्य-मुख्य मुसलमान मिलकर विलंदखान के पास गये और उसके आगे दादूजी की मनमाने ढंग से निन्दा की । काजी का हाथ गलकर तीन मास में मरना, उसके ससुर उरमायल के घर में बिना अग्नि ही अग्नि प्रकट होकर उसके घर की सात सौ मण रूई, उसकी स्त्री, बाल बच्चे आदि का जल मरना आदि कथायें सुनाई इससे विलंदखान को भी क्रोध आ गया। उसने कहा -

ऐसा कौन काफिर है, जो यहां आकर सि(बना है और प्रजा को बिगाड़ रहा है। फिर विलंदखान ने दादूजी को मारने का विचार किया किन्तु साथ ही यह भी सोचा कि दादू की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई है, दादू को ऐसे ढंग से मारा जाय जिससे वह मर भी जाय और प्रजागण हमको बुरा भी न बतायें।

अंत में निश्चय हुआ कि हाथी को मतवाला करके दादूजी पर उस समय छोड़ दिया जाए, जब वह झील से नगर की ओर आता हो और जिस स्थान से भागने का मार्ग भी न हो। ऐसे स्थान में हाथी उनके पास पहुंचे। यह प्रस्ताव विलंदखान की सभा में पास हो गया।

हाथी को मतवाला करके छोड़ते समय शीघ्रता से पहले नगर में डूंडी पिटवा दी कि हाथी अपने मद से मतवाला होकर तथा अपना ठान ;स्थानद्ध छोड़ झील की ओर जा रहा है। मार्ग में कोई न रहे। लोग दुकानें बन्द करके अपने-अपने घरों में जा घुसें। हाथी के पीछे महावत लोग भाले लिए हुये और जोर-जोर से चिल्लाते हुए आ रहे थे तथा दादूजी के आने के मार्ग की ओर ऐसे स्थान में हाथी को ले जाने का यत्न कर रहे थे जहां से दादूजी भाग भी न सके। मार्ग में पूरी हलचल मच रही थी। उधर दादूजी सूर्य उदय होने पर झील से निकल कर नगर की ओर आ रहे थे। नगर के पास अते ही, उन्होंने मतवाले हाथी को आते देखा तथा कोलाहल भी सुना। किन्तु दादूजी तो अन्तर्यामी परमेश्वर का चिन्तन करते आ रहे थे, इससे सर्वथा निर्भय थे। लोगों को इधर उधर भागते देखकर दादूजी ने सोचा- भागने की आवश्यकता तो तब हो जब हाथी में मेरा रक्षक परमात्मा नहीं हो । मेरे रक्षक तो हाथी में विराजे हुये हैं। फिर मैं डरकर क्यों भागूं? वे किन्चित भी नहीं डरे और बोले-

"जे तू राखे साँइयाँ, मार सके नहिं कोय।
बाल न बांका कर सके, जो जग बैरी होय।।";79द्ध

;दादूवाणी-सूरातन का अंगद्ध

यद्यपि गजराज मदमस्त होकर आ रहा था किन्तु दादूजी भी सदा राम भक्ति रूप रस में मस्त रहने वाले महान सन्त थे। अतः निर्भयता से अपने मार्ग में चले जा रहे थे। जब गजराज ने दादूजी को अपने पास मार्ग में आते देखा तो वह शांत भाव से खड़ा हो गया और दादूजी का दर्शन करके परमानन्द को प्राप्त हुआ। फिर उसने अपनी सूंड से दादूजी के चरण स्पर्श किये और फिर वह हाथी शांत-भाव से अपने स्थान पर लौट गया।

कैद में बंद करना

दादूजी की रक्षा तो परमेश्वर करते ही थे। उन्हें कौन मार सकता था। किन्तु फिर भी ईर्ष्या वाले इन काजियों और मुसलमानों ने ईर्ष्या नही त्यागी थी। वे अवसर देखते ही रहते थे। इन सब ने मिलकर एक योजना बनाई कि यह काफिर हल्ला मचाकर हमारी नमाज में विघ्न डालता है। वे दस बीस व्यक्ति मिलकर दादूजी के पास आ गए और बोले- काफिर! हमारी नमाज के समय हल्ला मचाता है अतः दण्ड देने योग्य है। यह कहकर दादूजी को अपनी इच्छानुसार थप्पड़ मुक्के मारकर विलंदखान खोजा के पास ले जाने लगे। उस समय सांभर में मुसलमानों का इतना आतंक फैल रहा था कि प्रत्यक्ष अन्याय को रोकना हिन्दुओं के लिए कठिन था। दादूजी में श्र(ा रखने वाले हजारो हिन्दू थे। उनमें से किसी भी व्यक्ति में इतना साहस नही था कि वह दादूजी की सहायता कर सके। दादूजी के तो एक मात्र परमेश्वर ही सदा सहायक थे।

दादूजी ने उस समय अपनी मनोवृति परमेश्वर में ही लगा दी थी। इससे उनके शरीर की त्वचा उस समय मृतक के समान हो गई थी। उनको उन मुसलमानों के आघातों का भी पता नही लगता था क्योंकि जिस मन से पता लगता है, वह मन प्रभु में लीन था। वे अपने हाथों को अपनी काखों में दबाकर मन से भावनामय ताल बजाते हुये परमेश्वर के गुण ही गा रहे थे। यद्यपि उनको पकड़कर ले जाने वाले पापी, क्रोधी और कामी थे। किन्तु दादूजी उनमें स्थित अन्तर्यामी को ही देख रहे थे। कोई उनको पकड़कर घसीटता था। कोई हाथ पैरों

से चोट मारता था किन्तु दादूजी उन सभी शरीरों में रमने वाले राम का ही विचार करते थे।

उक्त प्रकार से वे लोग दादूजी को विलंदखान खोजा के पास ले गये। विलंदखन ने कुछ विचार नही किया। मुसलमानों के कथनानुसार हठपूर्वक दादूजी को कैद की कोठरी में बन्द कर दिया। दादूजी को सिर से पकड़कर लाने वाले तथा मारपीट करने वाले मुसलमान भी दादूजी की सहनशक्ति को देखकर आश्चर्यचकित रह गये। उन्होंने सोचा- इस बेचारे को हमने व्यर्थ ही मारा है, इसने हमारा बिगाड़ा तो कुछ भी नही था और इतनी मार खाने पर भी हमको इसने कुछ नही कहा। इस प्रकार पश्चाताप करते हुये अपने मनों में बहुत दुःखी हुये। विलंदखान ने दादूजी को कैद में बन्द करके कहा- अब मैं तेरी करामात देखूंगा, जिसके बल पर तू लागों को बिगाड़ रहा है। फिर दादूजी ने ये साखी बोली-

आगे पीछे संग रहे, आप उठावे भार।
साधु दुःखी तब हरि दुखी, ऐसा सिरजन हार।।34।।
सेवक की रक्षा करे, सेवक की प्रतिपाल।
सेवक की बाहर चढ़े, दादू दीन दयाल।।36।।

;दादू वाणी- विनती का अंगद्ध

फिर जैसे माता को पुत्र का कष्ट सहन नही होता, वैसे ही दादूजी का कष्ट परमेश्वर को सहन नही हो सका। वे दादूजी के उक्त पद और साखियों को सुनकर दादूजी के रूप में ही कैद के बाहर प्रकट हो गये। इससे सबको दादूजी के दो शरीर दीखने लगे। उक्त प्रकार कैद की कोठड़ी में तथा बाहर दादूजी को देखकर कैदियों के रक्षकों ने आश्चर्य किया और विलंदखान के पास जाकर कहा- दादू कैद की कोठड़ी में बैठा गा रहा है और बाहर भी गा रहा है। विलंदखान के रक्षक ने भी जाकर कहा- दादू तो ताल पर बैठे भजन गा रहा है, मैं देख कर आया हूं। फिर विलंदखान ने भी आकर दादूजी के दो शरीर, बाहर और भीतर देखे तब सहसा उसका अज्ञान नष्ट हो गया। उसने कैद की

कोठरी में बंद दादूजी को बाहर निकाला और बाहर से दादूरूप प्रभु सहसा अन्तर्ध्यान हो गये। विलंदखान दादूजी के चरणों में गिरकर बोला- आप तो परमेश्वर के प्यारे सन्त हो, अतः मेरे अपराध को अवश्य क्षमा करोगे। मैंने अनजाने मे लोगो के कहने से आपको कष्ट दिया है। विलंदखान ने दादूजी की बहुत प्रशंसा की और अति सत्कार पूर्वक बड़ी धूमधाम से सवारी निकाल कर दादूजी को उनके आश्रम तक पहुंचाया। फिर मुसलमानों ने दादूजी को सताना छोड़ दिया। उक्त घटना से भी दादूजी की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई।

इस प्रकार मुसलमानों के द्वारा बारंबार सताने से अद्भुत ढ़ंग से भगवान् द्वारा दादूजी की रक्षा होने से ही दादूजी की सांभर में बहुत प्रसिर्(ि हो गई थी। इससे पूर्व दादूजी को बहुत कम लोग जानते थे। सांभर की अद्भुत लीलाओं से दादूजी की ख्याति दूर दूर तक फैल गयी थी।

सप्त निमंत्रण एक साथ

दादूजी की कैद से मुक्ति तथा विलंदखान का श्र(ाभाव देखकर प्रसन्नता से एक दिन सात भक्तों ने उत्सव मनाये और सातों ने एक ही समय अपने-अपने घर भोजन करने दादूजी को बुलाया। दादूजी ने सोचा-सातों के तो मैं जा नही सकूंगा, मैं तो एक ही समय और वह भी अल्पाहार करता हूं। एक के जाऊं और अन्यों के नही जाऊं, तो जिनके नही जाऊंगा उनको दुःख होगा। इसलिए वे किसी के भी न जाने का विचार करके भजन में बैठ गये। प्रभु ने दादूजी का निश्चय जान ही लिया था कि वे नही जाएंगे। फिर जब भोजन के समय एक व्यक्ति दादूजी को बुलाने आया तब द्वार पर दादूजी के रूप में प्रभु उसे खड़े हुये मिले। उसने प्रार्थना की- पधारिये। दादूरूप प्रभु उस के साथ चले गये। फिर दूसरा आया तो उस को भी दादूरूप प्रभु द्वार पर मिल गये और उसके साथ चले गये। ऐसे ही सातों के भोजन करके सातों ही शरीर, दादू आश्रम के द्वार पर आकर अन्तध र्यान हो गये।

इस प्रकार परमात्मा ने दादूजी के सात शरीर धारण कर, सातों भक्तों के यहां एक ही समय में भोजन किया। सातों ही भक्त अत्यन्त प्रसन्न हुये। फिर परस्पर मिले तब कहने लगे, दादूजी मेरे आये, मेरे आये। तब सांभर में सब स्थानों में यही चर्चा होने लगी, दादूजी ने सात शरीर धारण कर सातों निमंत्रण एक साथ जीम लिये।

कुछ भक्त दादूजी के पास गये और प्रणाम करके उन्होंने कहा- प्रभो! आज तो आपने सातों भक्तों के यहां एक ही समय भोजन करके सातों को कृतार्थ दिया है। दादूजी ने कहा- मैं तो किसी के यहां नही गया था। उस समय तो मुझे विट्ठलव्यास ने यही भोजन कराया था। फिर विट्ठलव्यास ने भी कहा- उस समय तो स्वामीजी को मैंने आसन पर ही भोजन कराया था। दादूजी को तो पता भी नही था कि प्रभु ने उसके सात शरीर बना कर सातों निमंत्रण जीमे हैं। भक्तों के कहने पर दादूजी ने ध्यानस्थ होकर जाना कि प्रभु ने ही मेरे सात शरीर धारण करके भक्तों की भावना पूर्ण की है।

दादू आश्रम में तस्कर

सांभर में एक दिन रात्रि के समय एक चोर दादूजी के आश्रम में घुसा और इध
ार उधर देखने लगा किन्तु कही भी धन नही मिला। तब उसने पुस्तकें लेने का विचार किया । फिर पुस्तकें उठाने लगा तो किसी पुस्तक के गिरने से उसकी आवाज से सन्त लोग जाग गये। उन्होंने आपस में पूछा- कौन अपरिचित व्यक्ति आश्रम में घुसा है? पुस्तकें क्यों उठा रहा है? दिखाई दे रहा है किन्तु पूछने पर भी बोल कर उत्तर नही दे रहा है। अतः चोर ही होगा । फिर दादूजी ने कहा- भैया! तुम शीघ्र ही यहां से चले जाओ। यदि कोई नगर में पहरा देने वाला चौकीदार आ गया तो तुमको पकड़ लेगा फिर तुमको दुःख होगा, उससे हमको भी दुःख होगा।

दादूजी ने सन्तों से कहा-सन्तो ! अधिक उच्च स्वर में मत बोलो, और चोर- चोर मत पुकारो । ऐसा करने से जनसमूह एकत्र हो जाएगा। वह इस बेचारे के लिए

घातक होगा, अतः हल्ला मत करो। चोर ने दादूजी के मधुर वचन सुने और सोचने लगा, ये वास्तव में सच्चे सन्त ही है। मुझे भली बुरी न कहकर मेरे बचाव की ही बात कर रहे हैं। इनकी परीक्षा इस प्रकार से मुझे नही लेनी चाहिए थी ;अर्थात् यह चोर नही थाद्ध वह एक चौहाण जाति का क्षत्रिय था। सन्तों की समता का पता लगाने ही दादू आश्रम में घुसा था। उसने सोचा था कि अगर मैं चोर रूप में जाऊंगा तब दादूजी मेरे साथ जो व्यवहार करेंगे उससे दादूजी की समता का पता चल जायेगा। इसी आशय से वह चोररूप धारण कर आश्रम में घुसा था। फिर दादूजी के मधुर वचन सुनकर यह अति प्रसन्न हुआ और चला गया। प्रातःकाल वह चोर दादूजी के पास प्रसाद लेकर आया और दण्ड़वत की ओर कहा- भगवन् ! रात्रि को मैं ही चोर रूप में आया था। अब आप मुझे शिष्य बनाने की कृपा करें। फिर वह श्यामसिंह से श्यामदासजी हो गये। ये दादूजी के 52 शिष्यों में हैं

निज निन्दको की जलन मिटाना

सांभर में कुछ लोग ऐसे थे, जो प्रायः दादूजी की निन्दा किया करते थे और सब आपस में मित्र थे। दादूजी उनको कुछ भी नही कहते थे। किन्तु कुछ समय के पश्चात् एक ही साथ उन सबके शरीरों में भयंकर जलन का रोग हो गया। सबने अपनी-अपनी शक्ति भर जलन की चिकित्सा कराई, किन्तु कुछ भी लाभ नही हुआ। एक दिन उन सब मित्रों ने मिलकर चिकित्सक के सामने विचार किया कि यह क्या बात है? जो हम सभी मित्रों के एक ही दिन के एक ही समय में भयंकर जलन का रोग हुआ है और चिकित्सा करने पर भी किसी का रोग कम नही हुआ? चिकित्सक ने कहा- हमने जिन-जिन औषधियों का प्रयोग आप लोगो पर किया है, उनसे जलन का रोग अवश्य मिटता है । किन्तु आप लोगो में से किसी की भी जलन कम नही हुई है यह आश्चर्य की बात है। इससे ज्ञात होता है यह रोग आप लोगो के शरीरों में किसी अपराध से हुआ है। आप लोगो की बात सुनते रहने से मुझे ज्ञात हुआ है कि आप सब लोग सन्तप्रवर श्री दादूजी महाराज की निन्दा करते रहते हैं। हो सकता है उसी का

फल आपको मिल रहा हो। चिकित्सक की बात सुनकर वे सब लज्जित होकर बोले - यह दोष तो हम सब में है, पर अब जलन कैसे मिटे? तब वे सब दौड़कर दादूजी के चरणों में गिर पड़े। दादूजी ने दया करके अपने कमण्डल का जल उन पर छिड़का तब उनकी सब जलन समाप्त हो गई।

शासकाधिकारी द्वारा सांभर झील में कुटीर बनाना

एक समय सांभर झील में पानी सूख गया था। सांभर के शासकाधिकारी ने दादू जी से प्रार्थना की - भगवन्! झील में छत्री पर आप विराजते हैं वह छोटी है। इसके पास कुटीया बना दी जाय ऐसा मेरा विचार है। दादूजी ने कहा- क्या आवश्यकता है। शासकाधिकारी ने कहा- आपको तो आवश्यकता नही है, किन्तु कृपा करें यह सेवा करने का मेरा विचार है। दादूजी ने कहा तुम्हारी इच्छा है तो बनवा दो। फिर उसने बनवा दी।

छत्री की प्रतिष्ठा के दिन वहां सांभर की बहुत जनता गयी थी। दादूजी ने मध -यान्ह के समय शासकाधिकारी को कहा- आप लोग इस कार्य को शीघ्रता से पूर्ण करके नगर को लौट जाओ, वर्षा आने वाली है। शासकाधिकारी ने कहा- भगवन्! वर्षा कहां है? कोई बारिश:वाली घटा भी दीख नही रही है सूर्य तप रहा है, आकाश में धूली छा रही है। फिर कुछ ही देर के पश्चात् घटा चढ़कर वर्षा होने लगी। तब लोग भीगते हुये नगर में पहुंचे। किन्तु शासकाधिकारी सहित 25 मनुष्य कार्यकर्ता होने से वे नहीं जा सके। कुटिया पर ही रह गये। भारी वर्षा से कुटिया की फर्श के बराबर पानी आ गया। तब शासकाधिकारी ने दादूजी से कहा- भगवन्! अब हम किस उपाय से पार होकर नगर में जा सकेंगे? पानी तो बढ़ता ही जा रहा है। दादूजी ने कहा- धैर्य रखो, हम सबके रक्षक प्रभु कहीं गये नहीं हैं, वे सबको पार कर देंगे। फिर वर्षा बन्द हो गई। तब स्वामी जी ने कृपा करके योग शक्ति से जल भराव को बीच से फाड़ दिया, उसके दो विभाग कर दिये। पानी के बीच में से उभरी हुई जमीन दीखने लगी। सभी उस मार्ग से नगर के किनारे पहुंच गये। भक्तगण ज्योंही किनारे पर पहुंचे वह मार्ग

विलुप्त हो गया। यह लीला देखकर सभी को आश्चर्य हुआ।

अहमदाबाद में सांभर निवास की सूचना

ढूढांर देश के कुछ सन्त द्वारका जाते समय अहमदाबाद में गये । तब उन सन्तों से अहमदाबाद में दादूजी के परिवार वालों को दादूजी के सांभर निवास का पता लगा। दादूजी के परिवार वालो ने भी फिर नमक लाने वाले बणजारों से पूछा तब उन्होंने भी बताया कि दादूजी सांभर में निवास कर रहे हैं। इस प्रकार द्वारका जाने वाले सन्तों से तथा बणजारों से दादूजी का पता दादूजी के चाचा आनन्दरामजी को लगा। आनन्दरामजी ने अपनी पुत्री हवा ;हीराद्ध बाई को कहा- तुम्हारे भाई दादू तो आजकल सांभर ;राजस्थानद्ध में है। हवाबाई को ज्ञात होने पर उसकी इच्छा हुई, दादूजी के दर्शन करने अवश्य चलना चाहिये। हवाबाई ईश्वर की भक्त थी, बाल्यावस्था में ही अपने पिता आनन्दरराम के सत्संग से हवाबाई को भक्ति का रंग लग गया था। भक्ति के नाते ही हवाबाई दादूजी से स्नेह रखती थी। आनन्दराम जी सपरिवार पुष्कर हाते हुये सांभर पहुंचे।

परम तेजस्वी सन्तप्रवर श्री दादूजी का दर्शन करके सब को अति आनन्द हुआ। प्रणामादि करने पर आनन्दराम जी ने पूछा- आपने हम लोगों को पहचान लिया? दादूजी ने कहा- पहचान लिया। आप अहमदाबाद के निवासी और मेरे इस शरीर के चाचा आनन्दरामजी हो। यह इस शरीर की बड़ी बहन आपकी पुत्री हवाबाई है, ये सुखदेवजी हैं।

यह सुनकर आनन्दरामजी की आखों में अश्रुधारा चल पड़ी। उस समय आनन्दरामजी की जो स्थिति हुई थी, उसका वर्णन करना तो असम्भव ही है। आनन्दरामजी अवरू(कंठ से बोले- आपके गृह त्यागने के बाद आपके माता-पिता को आपका वियोग सहन नही हुआ और तीन मास पश्चात ही दोनों ने संग-संग प्राण त्याग दिये। दादूजी ने सबको धीरज देते हुये ज्ञानमयी उपदेश दिया।

सांभर में उपस्थित सन्तों व भक्तों ने आनन्दरामजी से दादूजी के अवतार से गृह त्याग तक का विवरण जानना चाहा। दादूजी के अवतार से गृह त्याग तक का वृतान्त सांभर में सन्तसभा के मध्य श्री दादूजी के चाचा आनन्दरामजी ने प्रत्यक्षदर्शी प्रमाण साक्ष्यों के साथ विस्तृत रूप से सभी सन्तों व भक्तों को सुनाया।

आनन्दरामजी ने एक मास तक सांभर में रहकर सन्त कृपा का लाभ अर्जित किया। फिर विदा होने की आज्ञा मांगने लगे । हवाबाई ने कहा- मैं तो आप सब सन्तों की सेवा भक्ति करते हुये यही सत्संग करना चाहती हूं। दादूजी ने कहा- जैसी तुम्हारी इच्छा। आनन्दरामजी संगी साथियों के साथ विदा हो गये। हवाबाई सांभर में रहते हुये हरिगुण गाने लगी।

तृतीय चरण

शिष्य बड़े सुन्दरदासजी

बड़े सुन्दरदासजी का पूर्व आश्रम का नाम भीमसिंह था। ये बीकानेर नरेश जैतसिंह के पुत्र थे। इनके बड़े भाई कल्याणसिंह थे। राजा जैतसिंह का देहांत होने पर कल्याणसिंह गद्दी पर बैठे। जोधपुर के राजा मालवदेव ने बीकानेर राज्य के आधे भाग पर अपना अधिकार कर लिया था। फिर कल्याणसिंह सिरसा में रहने लगे। कल्याणसिंह से आज्ञा लेकर भीमसिंह दिल्ली जाकर बादशाह हुमायूं के पास रहने लगे। फिर मालवदेव ने वीरमदेव को निकालकर मेड़ता राज्य पर भी अपना अधिकार कर लिया था। वीरमदेव भी दिल्ली जाकर रहने लगे। कुछ समय में इन दोनों के व्यवहार से हुमायूं प्रसन्न हुआ और एक विशाल सेना लेकर दोनों के साथ मालवदेव पर चढ़ाई की। मार्ग में कल्याणसिंह भी मिल गये। फिर मालवदेव को हरा कर हुमायूं ने बीकानेर का छिना हुआ प्रदेश कल्याणसिंह को और मेड़ता राज्य वीरमदेव को दे दिया। उस समय हुमायूं ने भीमसिंह को उनकी वीरता से प्रसन्न होकर उन्हें बीदासर के आसपास भीमसर प्रदेश का अधिकारी बना दिया।

भीमसिंहजी का काबुल यु(

हुमायूं के पश्चात् अकबर बादशाह बना। तब काबुल के आदमखोर अकबर को अपना बादशाह नही मानते थे। उनको विजय करने के लिए अकबर ने भीमसिंहजी को सेनापति बना कर भेजा । वहां काबुल में यु(करते-करते इनकी सेना पराजित हो गई और भीमसिंहजी यु(भूमि में घायल होकर गिर पड़े। इनके साथी सैनिक यह जानकर कि उनका सेनापति मारा गया, यु(भूमि से भाग गये। बीकानेर को समाचार भेज दिया गया कि भीमसिंहजी रणक्षेण में वीरगति को प्राप्त हो गये। बाद में भीमसिंहजी का एक शारीरिक सेवक रणक्षेत्र मे आया और उसने देखा कि भीमसिंह जी मुणित अवस्था में हैं, और वह उनको अपने सेना शिविर में न ले जा कर अन्य एक बड़े घर पर ले गया। उस बड़े घर के लोगो ने भीमसिंहजी की अच्छी सेवा करते हुये चिकित्सा की । इधर बीकानेर में भीमसिंहजी की रानी को वीर-गति प्राप्त होने का समाचार मिला तब वह सती हो गयी। उधर भीमसिंहजी अच्छे हो गये। तब वे उस घर में उन लोगो से बोले-

अब हम अपने देश की ओर जायेंगे। तब उन लोगों ने भीमसिंहजी का सब वस्त्र, शस्त्र, एक घोड़ा और मार्ग के लिए सब खर्च देकर सहर्ष इनकी देश जाने के लिए विदा कर दिया।

प्रहलादजी का मथुरा में मिलना

भीमसिंहजी अपने सेवक से साथ शनैः शनैः मथुरा पहुंचे। वहां इनके पुरोहित प्रहलादजी भीमसिंहजी का गया- श्रा(कर मथुरा लौटे थे जब प्रहलादजी ने भीमसिंहजी को मथुरा में देखा तब उनको आश्चर्य हुआ कि महाराज का तो मैं गया- श्रा(करके यहां लौटा हूं और महाराज तो जीवित हैं ! फिर प्रहलादजी ने सोचा कोइ और ही होगे, कभी-कभी एक समान आकृति मिल भी जाती है। किन्तु इनसे बात तो करनी ही चाहिये। जब प्रहलादजी भीमसिंहजी के पास आए, तब भीमसिंहजी ने उन्हें प्रणाम किया और फिर पूछा- आप यहां कैसे पधारे हैं? यात्रा करने ही आये हैं या और कोई अन्य कार्य हेतु आये हैं? तब प्रहलादजी का कंठ रूक गया, वे बोल न सके और उनके नेत्रों से अश्रु भी टपकने लगे। भीमसिंहजी ने पूछा- गुरूजी ऐसी क्या बात है? जो आप की ऐसी स्थिति हो गई है। प्रहलादजी बोले- महाराज क्या कहूं, कहा नही जाता है। मुंह से बोल नही निकलते हैं। भीमसिंहजी ने कहा- कहना तो पड़ेगा ही, क्यों संकोच करते हो, कह दो? प्रहलादजी ने कहा- महाराज हमको आपकी वीरगति का समाचार मिला था। इससे महारानी जी आपकी कुल परम्परा के अनुसार सती हो गई है और मैं आपका गया- श्रा(कर के लौटा हूं यहां आते ही आपके दर्शन हुये, इससे मुझे हर्ष और दुःख दोनों ने घेर लिया है। हर्ष तो आपके मिलने का है, दुःख महारानी जी के सती होने का है। भीमसिंहजी ने कहा- अच्छा, जो हरि इच्छा होती है वही होता है। जितने दिन संस्कार था, उतने दिन संयोग रहा, फिर वियोग तो होना ही था। दोनों में से एक तो जाता ही है। आप क्यों दुःखी होते हैं? प्रहलादजी ने कहा- ठीक है महाराज, जो होना था सो तो हो गया है, अब आप राजधानी को पधारें। घर पर चलकर सबको हर्षित करें।

भीमसिंहजी का वैराग्य

भीमसिंहजी ने कहा–अब घर जाकर क्या करना है ? घर तो गृहिणी तक ही होता है। अब मैं घर नही चलूंगा, आप जाओ। भीमसिंहजी के उक्त विचार सुनकर तथा वैराग्य को देखकर प्रहलादजी को भी वैराग्य हो गया। किन्तु वे एक बार घर गये। वहां जाकर परिवार वालों को सब समाचार दिया। तब परिवार वालों ने प्रहलादजी को भीमसिंहजी को घर लाने का परामर्श दिया। प्रहलादजी ने कहा– अब उनका घर न आने का दृढ़ निश्चय है, वे अब ईश्वर भजन ही करना चाहते हैं। अतः परलोक साधन तथा मोक्ष मार्ग में प्रवृत व्यक्ति के कार्य में विघ्न नहीं डालना चाहिए। इत्यादि वचनों से परिवार वालों को रोक दिया और स्वंय प्रहलादजी ने पुनः भीमसिंहजी के पास जाने का विचार स्थिर रखा।

चतुरानागाजी से मिलन

प्रहलादजी के जाने के पश्चात् भीमसिंहजी ने अपने पण्डे से पूछा– यहां आस–पास के प्रदेश में कोई उच्चकोटि के सन्त है क्या? यदि हो तो उसका परिचय मेरे को दो, और उनके पास मेरे को ले चलो। पण्डे ने कहा– आजकल यहां एक निम्बार्क सम्प्रदाय के चतुरानागाजी नामक प्रसि(सन्त हैं। ब्रज में आजकल वे सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं । इन्ही दिनों में प्रहलादजी भी लौट आये थे। भीमसिंहजी व प्रहलादजी चादर प्रसाद आदि सामग्री व दीक्षा लेने योग्य सब समान साथ लेकर पण्ड़े के साथ चतुरानागाजी के यहां गये । दर्शन करके दण्ड़वत की ओर भेंट चढ़ाकर सामने बैठ गये। अवसर देखकर भीमसिंहजी बोले– भगवन् ! मुझे दीक्षा गुरूमन्त्र देकर कृतार्थ कीजिये। तब चतुरानागाजी ने भीमसिंहजी की ओर देखा और थोड़ी देर के लिए ध्यानस्थ हो गए। फिर ध्यान टूटने पर बोले– आप तो सन्तप्रवर दादूजी की आत्मा हैं, आपको मैं शिष्य नही बना सकता हूं। दादूजी के पास जाकर उनके शिष्य बनो। भीमसिंहजी ने पूछा– दादूजी कौन हैं? वे कहां मिलेंगे? चतुरानागाजी ने कहा– वे सनक मुनिजी के अवतार है, परमेश्वर की आज्ञा से निर्गुण ब्रह्म की भक्ति का विस्तार करने के

लिये बालरूप धारण करके साबरमती नदी में बहते हुये अवतरित है औरअहमदाबाद के लोधीराम नागर को मिले थे। उन्हीं ने उनको पाला-पोसा था, अतः वे उन्हीं के पौष्य पुत्र हैं। वे अब करड़ाला ग्राम के पर्वत से सांभर आने वाले हैं। तुमको उनका दर्शन सांभर में ही होगा। सांभर आने पर तुम जाकर उनके शिष्य हो जाना। यह सब वृतांत मैने अभी ध्यान द्वारा जाना है और यह सब सत्य है।

चतुरानागाजी द्वारा सन्त प्रवर का परिचय प्राप्त होने पर भीमसिंह अति प्रसन्न हुये। अपने भविष्य में होने वाले गुरूदेव की प्रतिक्षा करने लगे। राजसी वेषभूषा त्याग दी । अश्व, शस्त्र, वस्त्र आदि सभी अपने साथ जो सेवक था उसको दे दिये और उसे कह दिया कि अब तुम अपने घर चले जाओ। नौकर के चले जाने पर भीमसिंह जी ने अपने वस्त्र भंगवा कर लिये। भीमसिंह जी को ऐसा देखकर प्रहलादजी को भी वैराग्य हो गया। उन्होंने भी पुनः घर जाने का विचार छोड़ दिया। मथुरा, वृन्दावन को त्यागकर ये दोनों महानुभाव सांभर आने के उद्देश्य से राजस्थान की ओर चल दिए। मार्ग में घाटड़ा ग्राम के पास इन्होंने पर्वत के पास ही बहती हुई नदी को और सुन्दर स्थान को देखकर संकल्प किया कि यह स्थान भी बैठकर भजन करने योग्य है।

भीमसिंहजी का सांभर आना

वहां से विचरते हुये विराट् नगर को आये। वहां के पर्वत की गुफा में एक वर्ष तक भगवद् भजन करते हुये निवास किया। यहां ही इनको दादूजी के सांभर निवास का समाचार मिला। सांभर में मुसलमानों ने ज्यों -ज्यों दादूजी को दुःख दिया त्यों-त्यों भगवान् ने उनकी अद्‌भूत रीति से रक्षा की। रक्षा के समय जो-जो चमत्कार प्रभु ने दिखाये उनसे दादूजी की ख्याति दूर-दूर तक हो गई थी। जब भीमसिंहजी और प्रहलादजी को पूरा पता मिला गया कि दादूजी सांभर में ही हैं, तब वे दोनों वैराठ से चलकर सांभर आये। सांभर में दादूजी का दर्शन

करके दोनों अति प्रसन्न हुये। दोनों ने दादूजी के पास जाकर उन्हें साष्टांग दण्ड़वत प्रणाम किया। फिर हाथ जोड़ के दोनो सामने बैठ गये। दादूजी ने पूछा- आप लोग कहां से आये हैं? भीमसिंहजी ने अपनी कथा सुनाकर कहा-ये मेरे पुरोहित हैं, मैं वृन्दावन में चतुरानागाजी का शिष्य होने गया था, उन्होंने आपका शिष्य होने की आज्ञा दी और कहा- वे सांभर में आने वाले हैं, तुमको उनका दर्शन सांभर में होगा। फिर हम दोनों वैराठ की गुफा में एक वर्ष रहे। वहां आपका पता लगा कि दादूजी महाराज सांभर में पधार गये हैं, तब हम दोनों आपकी चरण सेवा में आए है। अब आप हम लोगों पर कृपा करें।

भीमसिंहजी का दादूजी का शिष्य होना

दादूजी ने कहा-क्या कृपा चाहते हो? भीमसिंहजी ने कहा- मुझे अपना शिष्य करके कृतार्थ कीजिए। दादूजी ने कहा-आप तो राज-परिवार में पले हुये हैं। साध ु धर्म का निर्वाह कैसे करोगे? तब दादूजी ने कहा-

दादू मारग साधु का, खरा दुहेला जान।
जीवत-मृतक हो चले, राम नाम निशान।।19।।
दादू मारग कठिन है, जीवित चले न कोय।
सोई चल है बापुरा, जीवित मृतक होय।।20।।

;दादूवाणी- जीवित मृतक का अंगद्ध

अर्थात्- सन्तों का निर्गुण उपासना रूप मार्ग सच्चा है किन्तु कठिन भी है, यह सत्य समझो । परन्तु परब्रह्म को लक्ष्य बनाकर, राम नाम का चिन्तन करते हुये जीवितावस्था में ही शव के समान सम हो जाता है, वह अनायाश ही इस सूक्ष्म मार्ग में चला जा सकता हैं।;19द्ध

सन्तों का निर्गुण मार्ग कठिन है, रागद्वेषादि रूप जीवन युक्त प्राणी उसमें कोई भी नही चल सकता। वही शरीर धारी उसमें चल सकता है, जो जीवितावस्था में ही

शव के समान रागद्वेषादि से रहित सम होता है।;20द्ध

परमेश्वर ने दादूजी की प्रेरणा दी- तुम इनको शिष्य बना लो ये उच्चकोटि के सन्त हो जायेगें।अन्य भी जिसको शिष्य करोगे, वह अच्छा ही सन्त होगा। शिष्य बनने वालों को ना नही करना चाहिये। शिष्यों द्वारा निर्गुणभक्ति का प्रचार होगा। उक्त ईश्वर की आज्ञा सुनकर दादूजी ने भीमसिंहजी को गुरूमंत्र देकर सुन्दरदास नाम दिया तथा अपनी निर्गुणभक्ति की प(ति बताई और निष्काम भाव से भजन करने का आदेश दिया। दादूजी से दीक्षा प्राप्त करके सुन्दरदास जी कृतार्थ हो गये। बड़े सुन्दरदास जी वि.1626 में शिष्य बने थे।

दादूजी ने बड़े सुन्दरदासजी को कहा था कि तुम गुप्त रहकर भजन करना और पुण्यवान को दर्शन देना। तब से बड़े सुन्दरदासजी गुप्त भजन करने लगे थे। लोगों का मानना हे कि बड़े सुन्दरदासजी हिमालय में अब भी तपस्या कर रहे है और वे अभी तक विद्यमान हैं। इसलिए बड़े सुन्दरदासजी का समाज में निर्वाण दिवस नहीं मनाया जाता है।

प्रहलादजी को उपदेश

प्रहलादजी ने हाथ जोड़कर पूछा- भगवन्! मुझे भी आज्ञा दीजिये, मेरा क्या कर्तव्य है? मैं इनके साथ रहूं या अलग होकर रहूं तथा किस मत को धारण करूं? दादूजी ने कहा- तुम्हारा कर्तव्य है कि इनके साथ रहकर इनकी सेवा करो। पूर्व आश्रम में भी ये आपकी धनादि की सहायता करते थे। अब भी इनके द्वारा ही आपको वैराग्य हुआ हैं यहां भी इनके साथ ही आए हैं। इनको ही अपना गुरू मानकर निष्काम भाव से भजन करो । रही मत की बात-

आपा मेटे हरि भजे, तन मन तजे विकार।
निर्वैरी सब जीव सों, दादू यहु मत सार।।2।।

;दादू वाणी- दया निर्वैरता का अंगद्ध

अर्थात्– अहंकार निवृति द्वारा तन मन के सभी विकारों को त्याग कर तथा सभी जीवों से निर्वैर होकर हरि भजन करना यही सब सन्तों का सार मत है।

जब तक तुम्हारी इच्छा हो यहां रहकर सत्संग करो फिर मथुरा से आते समय जहां तुम्हारा संकल्प हुआ था कि यह बैठकर भजन करने का स्थान है, वहां ही जाकर भजन करना। सुन्दरदासजी व प्रहलादजी सांभर में लगभग एक वर्ष तक रहे। प्रतिदिन सांभर में सत्संग व भोजन करके, भैराणा की गुफा में जाकर भजन करते थे। प्रहलादजी भी सुन्दरदासजी के शिष्य बनकर प्रहलाददासजी कहलाने लगे। बड़े सुन्दरदासजी दादूजी के 52 शिष्यों में हैं।

मुकुन्द भारतीजी का सांभर आना

मुकुन्द भारतीजी को 5जब ज्ञात हुआ कि दादूजी सांभर में आ गये हैं और दादूजी को मुसलमानों ने बहुत कष्ट दिया है तब वे दादूजी के दर्शनार्थ सांभर आये। दादूजी ने कहा– आज प्रभु की महान कृपा से मांडव्य मुनि के अवतार मुकुन्द भारतीजी से सन्त मिलन हुआ है। मुकुन्द भारतीजी ने दादूजी से कहा– अब यह आपका दर्शन अंतिम ही है। अब मेरा शरीर छः मास ही रहेगा और आप सनकजी के अवतार हैं ऐसा मैने अपनी योग शक्ति से जाना है। फिर दोनों सन्तों ने आपस में विचारादि किया और पांच दिन दादू आश्रम पर विराज कर मुकुन्द भारतीजी चले गये।

शिष्य जग्गाजी

एक दिन सांभर में एक गुजराती सज्जन आये। उनका नाम जगिया भाई था। वे अपनी पत्नी की प्रेरणा से धन प्राप्ति के लिए भ्रमण कर रहे थे। जब उनको कही भी विशेष रूप से धन नही मिला तब उन्होंने निश्चय किया कि सांभर से लवण खरीदकर देश को ले चलें, इससे कुछ तो प्राप्त होगा ही वे सांभर में आये तब उन्होंनें सुना– यहां दादू नाम के एक गुजराती सन्त हैं, वे बड़े सि(पुरूष हैं तब

तो मुझे धन भी दे सकते हैं, मुझे उनके पास अवश्य चलना चाहिये। फिर वे दादूजी के आश्रम में गये।

दादूजी के चरणों में मस्तक रखकर प्रणाम कर सामने बैठ गये। फिर अपनी कथा सुनाकर बोले- स्वामिन्! मुझे धन की अभिलाषा है, आप सि(पुरूष है, अतः मेरी आशा पूर्ण कर दीजिए। यदि मैं बिना धन घर को जाऊंगा तो मेरी स्त्री क्रोधि ात होकर मुझे गालियां देगी। वह मुझे बहुत दुःख देती है। जगिया भाई की उक्त बातें सुनकर दादूजी ने उन्हें उपदेश दिया। दादूजी के रहस्यमय उपदेश को श्रवण करके जगिया भाई दादूजी के शिष्य बन गये और भगवद् भजन करके एक महान् सि(पुरूष हो गये। फिर ये जग्गाजी के नाम से प्रसि(हुये। ये दादूजी के 52 शिष्यों में हैं।

शिष्य चांदाजी

सांभर में एक दिन एक देवजी का भक्त साधु आया था, उनका नाम चांदा था। उसने अपनी कमर में मोटे-मोटे घुंघरू बांध रखे थे। उसके चलते समय वे घुंघरू खण-खण शब्द करते थे। वह देवजी को अपना इष्ट मानता था। वह नगर में ऊंचे स्वर से देवजी का यश करता हुआ दादूजी के आश्रम पर भी जा पहुंचा। दादूजी ने उसका रंग ढ़ंग देखकर तथा गायन सुनकर कहा- भाई! अभी देवजी के दर्शन करने योग्य साधनों की धारणा तुम्हारे में नही ज्ञात होती है। यदि तुमने वैसे साधन करे होते तो तुम्हारी आशा नष्ट हो जाती और तुम एक आसन पर बैठे हुये ही साधन जन्य अद्भुत खेल देखते, ऐसे नही फिरते। तब चांदा ने मस्तक नमाकर के कहा- फिर आप ही कृपा करके वैसा साधन बताइये। तब दादूजी ने कहा- अब तुम अपनी आंखे बन्द करके अपनी हृदय-मंदिर में देखो। उसने जब आंखे बन्द करके देखा तो उसे करोड़ों देव परमेश्वर की स्तुति करते हुये दिखाई दिये। तब उसे निश्चय हो गया कि परम देव तो एक परमेश्वर ही हैं, उसके कार्यरूप देव अनेक हैं । फिर तो उसने सबसे श्रेष्ठ देव एक परमेश्वर को जानकर दादूजी को अपने मन में गुरू मान लिया और दादूजी से मंत्र दीक्षा

की प्रार्थना की। तब दादूजी ने उसे दीक्षा देकर निर्गुण ब्रह्म की उपासना की प(ति बता दी। फिर ये सम्यक साधना करके अच्छे भजनानन्दी सन्त हो गये और दादूजी के 52 थांमायती शिष्यों में है।

शिष्य टीलाजी

एक दिन सांभर में एक पुरूष आये, उनका नाम टीला था। वे)(-सि(की खोज में जहां तहां भ्रमण कर रहे थे और सोच रहे थे कहीं कोई रसायनी मिल जाय तो मेरा कार्य हो सकता है। इस अभिलाषा से वे दादूजी के पास भी आये। प्रणामादि शिष्टाचार करके हाथ जोड़े हुये सामने बैठ गये। किन्तु उनके मन में रसायन प्राप्ति की तीव्र इच्छा हो रही थी। उनके मनकी बात जानकर दादूजी ने उनको उपदेश दिया । उपदेश सुनकर उनके मन में जो)(-सिर्(ि रसायन आदि की इच्छा थी सो सब नष्ट हो गई। उन्होंने दादूजी के चरणों में अपना मस्तक रख दिया । अब इनको)(-सिर्(ि रसायन आदि प्रत्यक्ष में ही मिथ्या भासने लगी। दादूजी की सेवा में रहने का निश्चय कर लिया। फिर ये दादूजी के मुख्य सेवक कहलाने लगे।

आपकी अति प्रतिष्ठित समाधि फोफल्या ग्राम में है। आपकी वाणी भी है।

शिष्य बखनाजी

दादूजी अपने शिष्यों के साथ मार्ग से जा रहे थे। फाल्गुण मास था, मार्ग में बखना को होली के गीत गाते देखा। बखना के सुन्दर कण्ठों की आवाज सुनकर दादूजी ने कहा-भैया ! तुम निरंजनराम के गुण गाओ, ये गंदे गीत क्यों गाते हो? दादूजी के उपदेश का बखना पर बहुत प्रभाव पड़ा ओर ये दादूजी के शिष्य हो गये। बखनाजी की वाणी राजस्थानी भाषा में बहुत अच्छी रचना मानी जाती है। आप की समाधि नारायणा
में है।

बालिका का बालक बनना

सांभर में एक दिन एक वैश्य परिवार के लोग दादूजी के दर्शन करने आये थे। उनके साथ एक पांच वर्ष की लघु बालिका थी। वह प्रथम दादूजी को प्रणाम करके फिर प्रत्येक सन्त के पास जा जाकर उनके चरणों में प्रणाम कर रही थी। दादू जी की दृष्टि उस पर पड़ी तब उसकी श्र(ा भक्ति देखकर दादूजीके मुख से वचन निकला-"यह बालक बड़ा भक्त है।" यह सुनकर उसकी माता बोली -भगवन्। यह तो बालिका है। किन्तु वह तो दादूजी के मुख से उक्त वचन निकलते ही बालक बन गई थी और फिर बालक रूप में ही रही कन्या से बदलकर कुमार होने की बात सांभर में फैल गई। इससे लोगों को अति आश्चर्य हुआ। दादूजी के शिष्य सन्तों ने दादूजी से पूछा- हे भगवन्! यह कन्या से कुमार कैसे बन गई, यह कृपा करके बताइये? दादूजी ने कहा- मुझे भी पता नही है हो सकता है परमेश्वर ने ही कन्या से कुमार बना दिया होगा। तब सन्त तथा भक्तों ने निश्चय किया कि दादूजी के मुख से बालक शब्द निकल गया था, उसको सत्य करने के लिए बालिका को ईश्वर ने बालक बना दिया है। ईश्वर तो सर्व प्रकार से समर्थ हैं और दादूजी के लिए अनेक कार्य करते रहे हैं, जैसे - सात शरीर बनाकर सात नोंते जीमना, कैद में डालने के समय दूसरे दादू बनकर दादू को छुड़ाना इत्यादि प्रसि(ही है। बालिका से बालक बनना असंभव नही है।

नारायणबाला का सांभर आना

सांभर में दादूजी की अधिक प्रतिष्ठा होने से आसपास के प्रदेश में भी पूर्णरूप से दादूजी की प्रतिष्ठा हो गई थी। सलेमाबाद के निम्बार्क संप्रदाय के आचार्य महान् सन्त परसरामजी भी दादूजी का बहुत यश सुनते रहते थे। परसरामजी ने एक दिन दादूजी का ठीक ठीक परिचय प्राप्त करने के लिए अपने शिष्य नारायणबाला को कहा- तुम सांभर जाकर सन्त दादू की यथार्थ रूप में परीक्षा करके आओ, वे किस कोटि के सन्त हैं । नारायणबाला ने कहा- जो आपने आज्ञा दी है, उसका उसी रूप में पालन करूंगा। नारायणबाला सांभर पहुंचकर दादूजी के आश्रम में गये और ध्यानस्थ दादूजी का दर्शन किया। ध्यान से उठने

पर शिष्टाचार के अनुसार प्रणामादि करके सत्संग का लाभ प्राप्त किया और कुछ दिन रहकर दादूजी की रहन सहन जीवनचर्या आदि सब देखकर उनको सन्तोष हो गया कि मैंने दादूजी की यथार्थ रूप में परीक्षा कर ली है, फिर वे दादूजी से आज्ञा मांगकर सलेमाबाद अपने गुरूदेव परसरामजी के पास आये। तब परसरामजी महाराज ने पूछा - सुनाओ वे कैसे सन्त हैं ? तब नारायणबाला ने पद्य में उत्तर दिया, कारण वे कवि थे और अच्छे सन्त भी थे। तभी तो परसरामजी ने दादूजी की परीक्षा के लिए उनको भेजा था। सन्त की परीक्षा सन्त ही कर सकता है। असन्त से तो सन्त की परीक्षा होना ही संभव नही है ।

नारायणबाला ने कहा कि दादूजी बहुत अच्छे सन्त हैं और वह दादूजी की प्रशंसा करने लगे और परसरामजी ने कहा- अगर तुमको दादूजी अच्छे लगते हैं तो तुम उनके पास जाकर उनके शिष्य बनकर साधना करो। नारायणबाला दादूजी के पास आये और अपना शिष्य बनाने के लिए कहा और दादूजी ने उनको अपना शिष्य बना लिया।

संशय से टीला जी का डूबना

एक दिन वर्षा)तु के श्रावण मास में झील में छत्री के पास कुटीर में दादूजी ध्यानस्थ थे, वही दादूजी के कई शिष्य भी साधन में संलग्न थे। उस दिन वर्षा बहुत आई थी, नदी का जल प्रवाह भी अधिक बढ़ गया था। कुटीर के चबूतरे के फर्श तक पानी चढ़ आया था, तब दादूजी और सब सन्त नगर की ओर चले। दादूजी ने कहा- संशय त्यागकर 'सत्यराम' जपते चलो, इसी उपाय से पार पहुंच सकोगे, पार जाने का अन्य उपाय इस समय आप लोगों के पास कुछ नही है। उसी समय टीला के मन में संशय हो गया कि दादूजी ने हमको 'सत्यराम' जपने को कहा है परन्तु स्वंय तो कुछ और ही जपते हैं। यह विचार आते ही टीलाजी जल में डूबने लगे। तब टीलाजी ने संशय त्यागकर दृढ निश्चय से पुनः 'सत्यराम' जपना आरम्भ किया तो पूर्ववत ही जल पर स्थल के समान चलने लगे।

सांभर में दो सि(ों का आना

सांभर में मुसलमानों द्वारा अति कष्ट देने से भगवान द्वारा दादूजी की रक्षा करना रूप चमत्कारों से दादूजी की ख्याति दूर-दूर तक हो गई थी। दादूजी की कीर्ति सुनकर एक दिन सांभर में दो सि(आये। उनमें एक का नाम परमानन्द सरस्वती था और दूसरे का नाम सादातीर्थ था। दोनों ने सांभर के लोगों से पूछा- हमने सुना है यहां सन्त दादू जी रहते है? लोगों ने कहा - रहते हैं। सि(ों ने कहा - हम उनके पास जायेंगे। लोगों ने कहा- इस समय तो वे झील के मध्य कुटीर में ध्यानस्थ होंगे। सि(ों ने कहा कोई बात नही, ध्यानास्थ में हो तो भी हम जा सकते हैं। ऐसा कहकर वे तत्काल झील के मध्य के कुटीर में पहुंच गये और ध्यानास्थ दादूजी के सामने बैठ गये । फिर अपनी दूर दर्शन रूप योगशक्ति से काबुल मे दौड़ने वाले घोड़ो को देखने लगे ओर अपनी दूरदर्शन शक्ति का मन मे गर्व करके मंद-मंद हंसने लगे। दादूजी ने ध्यानावस्था में ही इनका आना तथा दूरदर्शन रूप सि(ि के गर्व को भी जान लिया। फिर ध्यान को त्याग कर बोले- आप लोगों ने प्रभु स्मरण छोड़कर कहां अनात्म पदार्थों में मन लगाया है ? आप इस दूरदर्शन रूप सि(ि का गर्व करके प्रसन्न हो रहे हैं किन्तु यह सि(ि भी आप लोगों की पूर्ण नही है।

सि(ों ने कहा- क्यों पूर्ण नही है? दादूजी बोले- यदि पूर्ण है तो बताइये आगे कौन सा घोड़ा है ? इस पर सि(कुछ मौन होकर बोले- यह तो हमें ज्ञात नही हो सका है। दादूजी ने कहा- नीले कानों वाला घोड़ा आगे है अब देखो, फिर दादूजी ने अपनी योगशक्ति द्वारा उनको दिखाया, तब उन्होंने देखकर स्वीकार कर लिया कि आप सत्य कह रहे हैं। सि(ों ने कहा- आपकी इतनी सूक्ष्म दृष्टि कैसे हुई? दादूजी ने कहा- मैंने तो एक अद्वैत ब्रह्म का ही चिन्तन किया है। फिर वे दोनों दादूजी के शिष्य बनकर ब्रह्म भजन में मन लगाने लगे।
ये दादूजी के 52 शिष्यों में है।

शिष्य ब्रह्मदास, मुनिराम, बरवारीदास व हरिदास

हरियाणा प्रांत के रतिया ग्राम निवासी गौड़ ब्राह्मण चार भाई ;ब्रह्मदास, मुनिराम, बनवारीदास व हरिदासद्ध श्री दादूजी के शिष्य बने। भजन करके चारों ही सि(सन्त बन गये। दो शिष्य ;ब्रह्मदास और मुनिरामद्ध गुरूजी के समीप रहकर ही भजन करते रहे जिनकी गणना सौ शिष्यों में है। दो शिष्य ;बनवारीदास व हरिदासद्ध उत्तर दिशा के प्रांत में हरि भक्ति जगाने लगे। जिनकी गणना मुख्य 52 शिष्यों में है।

रतिया में इन्होंने आश्रम स्थापित किया।

दादूजी का सार ग्राहकता

सांभर में दादूजी के शिष्य टीलाजी को रामसिंह नामक राजपूत ईर्ष्यावश गालियां देता था। टीलाजी ने उसे तो कुछ नही कहा किन्तु एक दिन अपने गुरूदेव दादूजी को कहा- भगवन् ! एक रामसिंह नामक व्यक्ति बिना कारण ही ईर्ष्यावश मुझे गालियां देता है किन्तु मैंने तो उसे कुछ नही कहा है। दादूजी ने कहा-"दाता को क्या कहा जाय, उसने तो आप को कुछ दिया ही है, आप से कुछ छीना तो नही है। जिसके पास जो हो, वही देगा। आप उससे व गालियों से बुरा न मानकर प्रसन्न रहें। दूसरों के वचनों से सुख दुःख तो अपनी मान्यता के अनुसार ही होता है। आप उसकी गालियों को अपनी स्तुति मान कर प्रसन्न रहो।"

रामसिंह ने एक व्यक्ति ;जो टीलाजी को उक्त परामर्श देते समय दादूजी के पास बैठा थाद्ध से दादूजी के उक्त विचारपूर्ण शीतल वचन सुने, तब उसको अति प्रसन्नता हुई। वह एक फेणियों की छाब लेकर दादूजी के दर्शन करने गया और छाब दादूजी के चरणों में रखकर साष्टांग दण्ड़वत किया। फिर हाथ जोड़कर सामने बैठ गया। तब टीलाजी ने कहा- भगवन्! ये सन्तों को गालियां देते हैं,

अतः इनकी फेणियां सन्तों को नही लेनी चाहिय। दादूजी ने कहा-"जब सन्तों ने गालियां ली थी तब फेणी क्यों नही लेगें दादूजी के उक्त वचन सुनकर रामसिंह को अति हर्ष हुआ। उसकी सब दुर्भावनायें उसके हृदय से निकल गई। वह दादूजी को गुरू मानकर भगवद् भजन करने लगा। दादूजी का उक्त वचन सुनकर सब सन्त भी मन ही मन अति हर्षित हुये, कुछ नहीं बोले।

गलता से चार साधुओं का सांभर आना

सांभर में नाना स्थानों से साधक लोग आकर दादूजी से उपदेश ग्रहण करने लगे, इससे दादूजी की निर्गुण, निराकार, निरंजन ब्रह्म भक्ति का विस्तार उत्तरोत्तर होने लगा। यह देखकर कुछ वैष्णव महन्तों ने मिलकर गलता में विचार किया। दादूजी का निर्गुण, निराकार, निरंजन ब्रह्मवाद बढ़ता चला जा रहा है, इससे हमारे सगुण साकार रूप साधना में लोगों की रूचि कम होती जा रही है। अतः दादू को किसी भी प्रकार से अपने में मिला लेना चाहिये अर्थात् माला तिलकादि देकर वैष्णव बना लेना चाहिए। जिससे उसका प्रचार रूक जायेगा और उसके निमित्त से हमारी साधन प(ति का और भी अधिक प्रचार होगा। कारण उनके उपदेश का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। उक्त प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हो गया।

गलता से चार साधुओं को कंठी, माला तिलकादिक अपने संप्रदाय की भेष-भूषा देकर कहा- तुम सांभर में जाकर दादू को वैष्णव बनाने का अपनी शक्ति अनुसार पूर्ण प्रयत्न करो। उन साधुओं के नाम थे-गैबीदास, जंगीदास रामघटादास, छीतरदास। चारो साधु सांभर में दादूजी के पास पहुंचे और दादूजी को कहा- हमारे महाराज ने तुम पर दया करके तुम्हारे लिये कंठी, माला भेजी हैं, इनको धारण करो और तिलक लगाओ। फिर हम आपको अपने संप्रदाय में मिलाकर अच्छा पद देंगे जिससे आपकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ जायेगी।
उनकी बात सुनकर दादूजी ने कहा-

"सतगुरू माला मन दिया, पवन सूत से पोइ।
बिन हार्थों निशिदिन जपैं, परम जाप यूं होय।।69।।

;दादूवाणी-गुरूदेव का अंगद्ध

माला तिलक से कुछ नही, काहू सेती काम।
अन्तर मेरे एक है, अह निशि उसका नाम।।24।।

;दादूवाणी-भेष का अंगद्ध

आत्मा सबकी एक ही है, सब में ही परमात्मा विद्यमान है। उस परमात्मा के संबंध से तो मैं सब से मिलता हूं किन्तु भेष पंथ के संबन्ध से नही मिलता हूं और आप तो माला तिलक आदि की बात कहते हैं सो तो मेरे सद्गुरू वृ(;ब्रह्मद्ध ने मुझे अहमदाबाद के कांकरिया तालाब पर मन से निरंतर चिन्त करना रूप माला दी थी। उसको मैं पवन रूप सूत में पिरोकर बिना ही हार्थों से निशिदिन जपा करता हूं। मेरे गुरूदेव वृ(भगवान् ने इसी को परम जाप कहा था। फिर वे साधु बोले - क्या करें यहां मुसलमानों का राज्य है, इससे हमारा वश नही चलता, हिन्दु राजा होता तो हम अवश्य तुमको हमारे संप्रदाय का भेष देकर हमारे संप्रदाय में मिला लेते।

दादूजी ने कहा- आप का हिन्दु राज्य कहां है? साधुओं ने कहा-आमेर। दादूजी बोले- वहां भी यह शरीर किसी दिन आ ही जायेगा। साधुओं ने कहा- वहां आने पर हम अपनी इच्छानुसार तुमको भेष दे सकते हैं, वहां तो राजा प्रजा आदि सब हमारे ही भक्त हैं। दादूजी बोले- बहुत अच्छा। फिर उनमें से तीन साधु तो रूष्ट हो उठकर चले गये। छितरदासज बैठे ही रहे। उन्होंने पहले भी कुछ नही कहा था, वे बैठे-बैठे सुन ही रहे थे। जाते समय तीनों साधुओं ने छीतरदास को चलने को कहा किन्तु वे नही गये। उक्त तीनों साधुओं के चले जाने पर छीतरदासजी ने दादूजी से प्रार्थना की- भगवन्! मुझे भी अपना शिष्य बनाकर अपनी निर्गुण ब्रह्म भक्ति की प(ति बताकर कृतार्थ कीजिये। दादूजी ने अपनी साधना छीतरदास को बता दी। उक्त तीनों साधु रात्रि को सांभर में भूधरदास वैरागी के पास रहे और प्रातः उठकर आमेर को चल दिये। गलता पहुंचकर जैसा हुआ वह सब समाचार कहा। दादू ने छीतरदास को और बहका लिया है । इससे

महन्त अधिक रूष्ट हुये और आपस में कुछ परामर्श करके दादूजी को मारने की योजना बनाई।

दादूजी को मारने हेतु मीणों का आना

गलता के महन्त ने झांझू बांझू दो मीणों को बुलाकर कहा- हम तुम्हें धन, मान आदि से सन्तुष्ट करेंगे, तुम सांभर जाकर दादूजी को मार आओ। दोनों मीणें प्रलोभन में आ गए और जैसा उन्होंने कहा था वैसे ही दादूजी को मारने सांभर को चल दिये। जब दादूजी के आश्रम के पास आये तब भगवान् ने सोचा, ये दुष्ट तो सन्त को मारने का साहस करेंगे ही अतः इनको अंधा कर देता हूं । वे दोनों अंधे हो गये। फिर न दीखने के कारण एक कूप में पड़ गये । मीणों ने कूप में पड़ते ही भगवत् प्रेरणा से दादूजी का नाम उच्चारण करते हुये प्रार्थना की- हे दादूजी महाराज ! हमारी रक्षा करो।

दादूजी ने उनकी प्रार्थना अपनी योगशक्ति द्वारा सुन ली। उनकी रक्षा के लिए प्रभु से प्रार्थना की । प्रभु ने उनको कूप से निकाल कर नेत्र भी प्रदान कर दिये। यह चमत्कार देखकर दोनों मीणें दादूजी के पास आये और चरणों में प्रणाम करके प्रार्थना की - भगवन् हमारी रक्षा करो। हम धन के लोभ से तथा दूसरों के बहकाने से आपको मारने का अपराध करने का विचार करके आये थे। अब हम आपकी शरण हैं। झांझु बांझू के जीवन में इस प्रकार का परिवर्तन देखकर प्रतिपक्षी एक बार तो शान्त हो गये थे। ये दोनों दादूजी के शिष्य बन गये।
ये दादूजी के 52 शिष्यों में हैं।
इनकी समाधी का स्थान झोटवाडा में स्थित है।

जग्गाजी की करडाला यात्रा

एक दिन सांभर में जग्गाजी ने दादूजी महाराज को प्रणाम करके प्रार्थना की- भगवन् ! मेरा मन करता है, आपकी तपोभूमी करड़ाला के तथा मोरड़ा वटवृक्ष के दर्शन कर आऊं। अतः आप मुझे जाने की आज्ञा दीजिये। वे भ्रमण करते हुये करड़ाला गांव पहुंचे वहां उन्होंने पर्वत के मध्य केकड़ा वृक्ष के दर्शन किये।

फिर विचरते हुये सलेमाबाद के पास पहुंच गये। किसी से पूछा इस ग्राम का नाम क्या है? एक व्यक्ति ने कहा इस ग्राम का नाम तो सलेमाबाद है किन्तु आजकल इसको परशुरामपुरी भी कहते हैं। जग्गाजी ने सोचा अब परशुरामजी के दर्शन करके ही आगे चलूंगा। फिर परशुरामजी के स्थान पर गये किन्तु उनके द्वार पर स्थित लोगों ने इनको अन्दर नही जाने दिया । जग्गाजी समझ गये कि इन्होने मुझे कंगाल जानकर रोक दिया है। फिर वे ग्राम में एक वैश्य की दुकान पर गये और कहा- कुछ समय के लिए आप मुझे अपने पहनने के वस्त्र दे दीजिये। वैश्य ने जग्गाजी से अन्य कुछ भी न पूछकर अपने वस्त्र दे दिये।

जग्गाजी अपने वस्त्र उतारकर सेठ का भेष बनाकर चल दिये । मार्ग में ऊंट के मेगने पड़े थे। उनमें से लगभग पांच शेर मेगने कपड़े में बांधकर चल पड़े। जब परशुरामजी के द्वार पर आये तब उनके हाथ मे मेगने की गठड़ी लटकती हुई देखकर द्वार पर स्थित लोगों ने देखा कोई सेठ आ रहे हैं और हाथ में प्रसाद की गठड़ी लटकाए हुये हैं। हमें भी प्रसाद मिलेगा तथा महाराज को भी भेंट चढ़ायेंगे। तत्काल दो तीन व्यक्ति उठकर सामने आए और बोले- आइए सेठ साहब! हम आपको महन्त महाराज के पास ले चलते हैं । फिर वे सेठ भेषध ारी जग्गाजी को परशुरामजी महाराज के पास ले गये।

परशुरामजी के पास जाकर जग्गाजी ने मेगने की गठड़ी एक ओर रखकर पहले उसे दण्ड़वत की। फिर वह गठड़ी परशुरामजी के चरणों में रखकर परशुरामजी महाराज को दण्डवत करके सामने बैठ गये। इनका यह विचित्र व्यवहार देखकर परशुरामजी महाराज ने सोचा इस में कोई रहस्य अवश्य है। परशुरामजी ने पूछा- आप कौन हैं? कहां से आए हैं? और इन मेगने की गठड़ी को प्रथम दण्ड़वत करने का क्या रहस्य है? मेरे पास आप किस लिए आए है ?
परशुरामजी महाराज के उक्त चार प्रश्न सुनकर परमसि(पुरूष जग्गाजी बोले- भगवन्! मैं सन्तप्रवर दादूजी का शिष्य हूं, जग्गा मेरे इस शरीर का नाम है इस समय मैं दादूजी महाराज की तपोभूमि करड़ाला की यात्रा करके इधर आ रहा हूं। आपके धाम के पास आकर मैंने पूछा - इस ग्राम का क्या नाम है? तब एक

ने कहा- ये परशुरामपुरी है। यह सुनकर मेरी प्रबल इच्छा हुई कि परशुरामजी महाराज का दर्शन करके आगे चलूंगा किन्तु आपके द्वार पर स्थित लोगों ने मुझे दरिद्र जानकर आगे नही जाने दिया। तब मैंने सोचा परशुरामजी के दर्शन अवश्य करने हैं। कोई उपाय करना ही चाहिये। फिर मैं एक वैश्य के पास से, जो मैंने पहन रखें हैं, ये वस्त्र मांग लाया। लोगों को यह दिखाने के लिए कि यह सेठ प्रसाद लाया है, मार्ग में पड़े मेंगने एक गठड़ी में बांध लाया हूं।मेगने की गठड़ी को प्रथम दण्ड्वत करने का रहस्य यही है कि इसकी कृपा से अपके दर्शन हो सके हैं। इतना कहकर जग्गाजी मौन हो गए।

पंक्ति में श्वान दर्शन

परशुरामजी और जग्गाजी ने आपस में विचार किया तब परशुरामजी ने पूछा - आपके गुरूजी ने आपको क्या मंत्र दिया है? जग्गाजी ने कहा - हमारे गुरूजी तो 'सत्यराम' मंत्र का जाप ही करना कहते हैं। परशुरामजी ने कहा- सत्यराम तो शिरोमणी मंत्र है किन्तु दादूजी के सम्प्रदाय का कोई भिन्न मंत्र होना ही चाहिए। इतने में भोजन तैयार होने का समाचार मिला।

परशुरामजी ने भोजन प्रबन्धक को बुलाकर कहा- ये सन्त दादूजी के शिष्य हैं इनको पंक्ति में ले जाकर बिना भेद भाव के अच्छी प्रकार भोजन कराना। परन्तु भोजन प्रबन्धक ने भेद-भाव का विचार कर उन्हें बर्तन साफ करने वाली जगह पर बैठा दिया और उनको एक फूटे हुये बर्तन में भोजन परोस दिया। जग्गाजी ने सोचा- स्थान, पात्र आदि सब कुत्तों के योग्य हैं। अतः मुझे कुत्ते के रूप में भोजन करना चाहिए। जग्गाजी तो सि(पुरूष थे, वे कुत्ते के रूप में दिखने लगे और सब पंक्ति में प्रत्येक साधु को दूसरे की थाली में कुत्ता खाता हुआ दीखने लगा। इस प्रकार कोलाहल हो गया।

तब परशुराम जी आये और उन्होंने स्थिति को देखा और पूछा- वे सन्त दादूजी के शिष्य कहां हैं? परशुरामजी उस स्थान पर गये जहां राख फैली हुई थी और

एक कुत्ता निडर होकर खा रहा था। यह देखकर परशुरामजी समझ गये इन मुर्खों ने सन्त के साथ अनुचित व्यवहार किया है। परशुरामजी ने प्रार्थना की- सन्तजी ये लोग तो मूर्ख हैं, अब आप अपनी लीला समेट लीजिये इतना कहते ही जग्गाजी अपने रूप में भासने लगे। वैश्य के वस्त्र देकर अपने वस्त्र पहन कर जग्गाजी मोरडा को चल दिये।

इसके बाद जग्गाजी मोरड़ा वट वृक्ष के दर्शन करके सांभर दादूजी के पास आ गए। जग्गाजी ने सारा वृतान्त दादूजी को सुनाया और उनसे एक गुरूमंत्र निश्चित करने की प्रार्थना की। तब दादूजी ने कहा- अच्छा ऐसी बात है, तो सुनो-

अविचल मंत्र

दादू अविचल मंत्र, अमर मंत्र, अखै मंत्र।
अभय मंत्र, राम मंत्र, निजसार।।
सजीवन मंत्र, सवीरज मंत्र, सुन्दर मंत्र।
शिरोमणि मंत्र, निर्मल मंत्र, निराकार।।
अलख मंत्र, अकल मंत्र, अगाध मंत्र।
अपार मंत्र, अनन्त मंत्र, राया।।
नूर मंत्र, तेज मंत्र, ज्योति मंत्र।
प्रकाश मंत्र, परम मंत्र पाया।।
उपदेश दीक्षा ;दादू गुरू रायाब्

दादू जी ने उक्त अविचल मंत्र का उपदेश देकर कहा- जो साधक इस अविचल मंत्र का जप करेंगे वे कल्याण को प्राप्त होंगे। मेरी परम्परा के लोगों में यह मंत्र गुरू मंत्र के नाम से प्रसि(होगा । फिर यह मंत्र सभी शिष्यों ने धारण कर लिया।

दादूवाणी के 'गुरूदेव का अंग' के अंत में इस मंत्र को स्थान दिया गया है।

इसमें 24 मंत्र हें, इनका जप करते समय मंत्र पद छोड़कर जप करना चाहिए अर्थात्

अविचल अमर अखै अभय राम निज सार।
सजीवन सुन्दर शिरोमणि निर्मल निराकार।।
अलख अकल अगाध अपार अनन्त राया।
नूर तेज ज्योति प्रकाश परम मंत्र पाया।।

उपदेश दीक्षा दादू गुरू राया

इस प्रकार जप करना चाहिए । ऐसी ही परम्परा चली आ रही है। दादू सम्प्रदाय में यह 24 अक्षरात्मक गायत्रीमंत्र के समान माना जाता है दादू सम्प्रदाय में जहां गुरूमंत्र का उल्लेख होता है, वहां इसी मंत्र का संकेत होता है।

चतुर्थ चरण

सांभर से प्रस्थान

सांभर में वैश्य माहेश्वरी सेवक ईश्वर और गोविन्दराम ने दादू जी की सेवा में पक्का सतसंग भवन बनवाया था। कुछ दिन के पश्चात हरि इच्छा से दादूजी के मन में आमेर चलने का संकल्प हो गया। जिस दिन प्रस्थान करना था उस दिन सब भक्त जनों ने एक सभा का आयोजन किया। उसका स्थान देवयानी तीर्थ के गोघाट के पूर्व की ओर निश्चित किया गया। प्रातःकाल नगर के मुख्य-मुख्य व्यक्ति, काजी विलंदखान शासकाधिकारी, मुख्य राज्याधिकारी, विद्वान ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य सभी भक्तगण सभा में आये। सांभर की जनता और आसपास के लोग बहुत संख्या में आये। दादूजी अपनी शिष्य मंडली के साथ नगर से देवयानी तीर्थ के गोघाट पर पधारे। काजी, विलंदखान, राज्याधिकारियों व व्यक्तियों ने सभा में उठकर थोड़े -थोड़े शब्दों में अपनी-अपनी गलतियों और दादूजी की परमकृपा का परिचय दिया । विट्ठलव्यास ने कहा- दादूजी महाराज ने 12 वर्ष तक यहां विराजकर अनन्त लोगों के अज्ञानांधकार को नष्ट किया है। हम तो चाहते हैं दादूजी सांभर में ही विराजें, किन्तु सन्त तो सर्व हितैषी होते हैं, सब का कल्याण चाहते हैं। जब दादूजी उठकर प्रस्थान करने लगे तो सबने मिलकर जय बोली। वि.सं.1637 चैत्र शुक्ला द्वितीया वार रविवार को दादूजी ने सांभर से प्रस्थान किया।

भैराणा पर्वत पर भैरू को उपदेश

सांभर से चलकर दादूजी नोरंगपूरे, त्योंध, जोबनेर, कालख व धावके ग्राम होते हुए भैराणे पधारे। वहां पर्वत पर ही आसन लगया। वहां कपिल नामक भैरू रहता था। वह रात्रि को आया और दादूजी से बोला- स्वामिन्! यह तो मेरा स्थान है। आप यहां कैसे रह सकेंगे? मेरे भक्त तो तामस प्रकृति के होते हैं। वे यहां बकरा चढायेगें, मदिरा पान करेंगे। फिर भैरू को दादूजी ने उपदेश दिया। उपदेश सुनकर भैरू ने कहा- स्वामिन्। आप मेरे स्थान में विराजेंगे तो मैं कहां जाऊं? दादूजी ने कहा- अब तुम बिचूण ग्राम की सीमा में रहो। फिर वहां ही भैरू का मन्दिर बन गया।

दादूजी भैराणा से विचरते हुये बिचूण पधारे। वहां ही पुन्याणा ग्राम का तोला बागड़ा भी आ गया। तोला बागड़ा ने तो दादूजी के दिए हुये नाम का ऐसी विलक्षण रीति

से चिन्तन किया कि प्रतिदिन भगवान उनके साथ भोजन करते थे। उनके खाने के समय दो पत्तलें एक साथ लगती थी। फिर दादूजी वहां से विचरते हुये क्रांजल्या ग्राम पधारे। फिर झांझू बांझू जी के आग्रह से झोटवाड़ा पधारे। झोटवाड़ा में लघु- गोपालजी ने दादूजी से दीक्षा ली और ये दादूजी के शिष्य बन गये। ये झोटवाड़ा में ही रहकर साधना करते थे। ये दादूजी के 52 शिष्यों में है।

आमेर आगमन

झोटवाड़ा से दादूजी अपनी शिष्य मण्डली सहित आमेर पधारे । मावठा तालाब के पास रामबाग में ठहरने योग्य स्थान देखकर ठहर गये। सन्तो का आना सुनकर नगर के सत्संगी लोग दर्शन करने आने लगे। सब सन्तों ने वाणी सुनाना व सत्संग करना आम्भ कर दिया। तीसरे दिन राजपुरोहित जी पधारे। पुराहित जी ने आमेर नरेश भगवतदास को श्री दादूजी के आमेर पधारने के बारे मे जानकारी दी। राजा ने मेवा, वस्त्र और सन्तों के उपयोग में आने वाली वस्तुएं मंगवायी और दादूजी के दर्शनार्थ गये। दादूजी के चरणों में प्रणाम किया।

जयमल्ल प्रसंग-।।

जयमल्ल - माता ने जब गुरूदेव श्री दादूजी के आमेर आगमन का वृतान्त सुना तो पूर्वकाल में कथित सन्त मुकुन्दभारतीजी के वचनानुसार अपने भाग्योदय का समय जाना, और पुत्र को साथ लेकर शीघ्र ही सन्तधाम पर पहुंची। चरणों मे शीश नवाया। गुरूदेव का दर्शन करते हुये माता और पुत्र दोनों हर्ष-गद् हो गये। माता ने कहा- हे महात्मन् ! सन्त मुकुन्दभारतीजी ने मेरे पुत्र जयमल्ल को गुरू प्राप्ति व ज्ञानोपदेश के लिए जो भविष्यवाणी करके वरदान दिया था, वह आज साकार हुआ। उन्होने बताया था कि आज वे तीस वर्ष बाद आप आमेर पधारेंगे जो आज सत्य हुआ। आप इसे ज्ञानोपदेश देकर शिष्य बना लीजिए। फिर जयमल्ल के सिर पर हाथ धरकर उसे शिष्य बनाया।

विद्वान पण्ड़ित जगजीवन जिन्होंने शास्त्रार्थ में अनेको विद्वानों को हराया था। ये जब दादूजी के पास आए तो उनके उपदेश के प्रभाव से दादूजी के शिष्य बन गये और 52 शिष्यों में हैं।

आमेर में दादूजी की प्रतिष्ठा बहुत हो गयी थी और शिष्य होने के लिए अनेक सज्जन आने लगे थे।

शिष्य मनोहरदासजी

आमेर में एक दिन मनोहरदासनामक व्यक्ति दादूजी के दर्शन करने आये। दादूजी को प्रणाम करके प्रश्न किया कि स्वामिन्! हृदय की जलन मिटने का उपाय बताने की कृपा करें। तब दादूजी ने कहा–

“एक राम के नाम बिन, जिव की जलन नहि जाय।
दादू केते पचि मुए, कर कर बहुत उपाय।।4।।”

;दादूवाणी–स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्– अनेक उपायों के करने पर भी चिन्ताग्नि द्वारा होने वाली जीव के हृदय की जलन नष्ट नही होती है परब्रह्म के नाम चिन्तन बिना हृदय की जलन नही मिटती है।

तब दादूजी ने मनोहरदासजी को अपना शिष्य बनाया। मनोहरदासजी दादूजी के सौ शिष्यों मे हैं।

शिष्य नेताजी

एक दिन आमेर में नेताजी नामक सज्जन दादूजी के दर्शन करने आये और अवसर देखकर बोले स्वामिन्! मैं तो संसार के दुःखो से व्याकुल हो रहा हूं। आप

कृपा करके वह स्थान बताइये जहां सुख मिले तब दादूजी ने कहा–

“दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तज बेकाम।।29।।

;दादूवाणी–स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्– यह संसार तो दुख का ही समुद्र है और सुख का सागर तो राम है अतः सुख चाहते हो तो दुःखप्रद व्यर्थ कार्यो को त्याग कर निष्काम भाव से निरंजन राम के नाम का चिन्तन करो। उक्त उपदेश सुनकर वे दादूजी के शिष्य हो गये और नेताजी दादूजी के सौ शिष्यों में हैं।

शिष्य देवा जी

एक दिन आमेर में एक देवा नामक व्यक्ति दादूजी के दर्शन करने आये और प्रणाम करके कहा–स्वामिन्! यह मन शरीर के गुणों को भूल सके वह साधन बताने की कृपा करे तब दादूजी ने कहा–

“देह रहै संसार में, जीव राम के पास।
दादू कुछ व्यापे नही, काल झाल दुख त्रास।।27।।

;दादूवाणी–विचार का अंगद्ध

अर्थात्– शरीर संसार में रहे और जीवात्मा विचार पूर्वक नाम चिन्तन द्वारा अभेद रूप से निरंजन राम के पास रहे तो उसे कालाग्नि की ज्वाला रूप आधि व्याधि ा कुछ भी नही व्यथित करती है।

उक्त उपदेश सुनकर देवाजी दादूजी के शिष्य बन गये और वे दादूजी के सौ शिष्यों में हैं।

शिष्य दुर्गाजी

एक दिन आमेर मे दुर्गाजी नामक सज्जन दादूजी की ख्याति सुनकर आये और प्रणाम करके कहा- स्वामिन्! सन्तजन कहते हैं कि साधक को संसार से अलग ही रहना चाहिये। आप कृपा करके समझाऐं कि साधक संसार से अलग कैसे रहता है? तब दादूजी ने कहा-

"दादू एक विचार से, सब तैं न्यारा होय।
मांही है पर मन नही, सहज निरंजन सोय।।10।।

;दादूवाणी विचार का अंगद्ध

अर्थात्- साधक वैराग्यपूर्वक एक अद्वैत ब्रह्मविचार द्वारा बल द्वारा सब संसार से अलग हो जाता है। यद्यपि शरीर संसार में ही रहता है किन्तु मन संसार में नही रहकर निरंजन राम के चिन्तन में ही रहता है। वह अनायास ही निरंजन ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

दुर्गाजी दादूजी की साधना प(ति से साधन करके अपने मन को संसारिक भावनाओं से अलग रखने में समर्थ हो गये।
ये दादूजी के सौ शिष्यों में है।

शिष्य भवनजी

एक दिन आमेर में भवनजी नामक एक सज्जन दादूजी के पास आये और विनती की- भगवन्! विवेक और ज्ञान की बातें तो बहुत लोग करते हैं किन्तु जिस व्यक्ति का विवेक उत्तम हो उसके क्या लक्षण हैं? बिना लक्षण जाने अनेक बार

धोखा भी हो जाता है तब दादूजी ने कहा-

"सहज विचार सुख में रहै, दादू बड़ा विवेक।
मन इन्द्रिय पसरे नही, अंतर राखे एक।।3।।
मन इन्द्रिय पसरे नही, अहनिशि एक ध्यान।
पर उपकारी प्राणियां, दादू उत्तम ज्ञान।।32।।

;दादू वाणी विचार का अंगद्ध

अर्थात्– जिसके मन इन्द्रिय विषयों में नही जाते, जो चित्त को एक अन्तर आत्मा में ही रखाता है और सहज स्वरूप ब्रह्म विचार द्वारा ब्रह्मानन्द में ही निमग्न रहता है, उसका विवेक श्रेष्ठ है। जिसके मन इन्द्रिय विषयों में नही फैलते, दिनरात निरंतर एक परब्रह्म के ध्यान में ही अनुरक्त रहते हैं और जो सत्योपदेश द्वारा परोपकार करता रहता है, उस प्राणी का ज्ञान उत्तम है।

दादूजी का उक्त उपदेश सुनकर वे दादूजी के शिष्य हो गये और वे दादूजी के सौ शिष्यों मे है।

शिष्य वीराजी

एक दिन आमेर में एक वीराजी नामक सज्जन दादूजी के दर्शन करने आये और नम्रता पूर्वक हाथ जोड़कर बोले स्वामिन्! प्राणी के हृदय से काम क्रोधादि द्वन्द्व कैसे दूर होते है? कृपा करके उनके दूर करने का सुगम उपाय मुझे अवश्य बताइये। वीराजी का उक्त प्रश्न सुनकर दादूजी महाराज ने कहा–

"साधू संगति पाइये, तब द्वन्द्वर दूर नशाय।
दादू बोहित बैस कर, डूंडे निकट न जाय।।20।।

;दादूवाणी– विश्वास का अंगद्ध

अर्थात्– जब वास्तविक सत्संगति प्राप्त होती हे, तब काम क्रोधादि द्वन्द्व हृदय से अनायास ही दूर हो जाते है। फिर जैसे जहाज पर बैठकर यात्रा करने वाला यात्री

छोटी नाव के पास नही जाता है। वैसे ही द्वन्द्वों से रहित व्यक्ति निरंजन ब्रह्म चिन्तन को छोड़कर तीर्थ व्रतादि साधारण साधनों के पास भी नही जाता है। निरंतर ब्रह्म चिन्तनानन्द में ही निमग्न रहता है।
वीराजी दादूजी के सौ शिष्यों में है।

शिष्य धीराजी

एक दिन आमेर में एक धीराजी नामक सज्जन दादूजी के दर्शन करने आये और प्रणाम करके दादूजी से कहा- भगवन्! संसार में ज्ञान नाना प्रकार के हैं किन्तु आपके विचार में प्रभु की प्राप्ति कराने वाला शु(ज्ञान कौनसा है? साधक किस ज्ञान का विचार करे ? आप कृपा करके बतावें। तब दादूजी ने कहा-

"प्रेम भक्ति दिन दिन बधे, सोई ज्ञान विचार।
दादू आतम शोध कर, मथकर काढया सार।।36।।

;दादूवाणी विचार का अंगद्ध

अर्थात्- जिस ज्ञान के द्वारा प्रतिदिन प्रेमा भक्ति की वृ(हो उसी ज्ञान का विचार करना चाहिये।

धीराजी दादूजी के सौ शिष्यों मे है।

महामाला वाले रामदास

एक समय एक बहुत मोटे काष्ठ के मणियों की बनी हुई और बहुत लंबी माला वाले रामदासजी नामक वैरागी साधु आमेर में आये हुये थे। वे अपनी उक्त माला को बैल पर लाद कर ही इधर उधर ले जाते थे। वे आमेर में एक कूप के पास ठहरे थे। कूप में से पानी निकालते समय जैसे ही रस्सा को पकड़ पकड़ कर

खीचतें हैं, वैसे ही वे चाकली पर माला डालकर, कूप में लटका कर, एक एक मणियां पकड़-पकड़ कर खेचते थे। और प्रति मणि के साथ-साथ सीताराम बोलते थे। उनके दर्शन करने को बहुत जनता आती थी, मेला -सा लगा रहता था। जब उनका माला फेरना रूप साधन समाप्त हो जाता था, तब वे भक्तलोगों से वार्तालाप भी करते थे। एक दिन एक भक्त ने कहा-भगवन! यहाँ एक दादूजी नामक बहुत उच्च कोटि के सन्त विराजते हैं। जब रामदासजी ने दादूजी का नाम सुना तब वे बहुत प्रसन्न हुये, कारण उन्होने पहले दादूजी की महिमा बहुत सुनी थी। इससे रामदासजी की इच्छा हुई कि दादूजी के दर्शन करने को एक दिन अवश्य चलना है।

रामदासजी ने दादूजी के मिलने का समय पूछां तब ज्ञात हुआ कि सत्संग के समय में ही प्रायः मिलते हैं। सत्संग के आगे पीछे आगत सज्जनों से परमार्थ सम्बन्धी वार्तालाप भी करते है। फिर एक दिन रामदासजी अपनी माला फेरने का साधन पूरा करके दादूजी के दर्शनार्थ दादू आश्रम पर गये। नमस्कार आदि शिष्टाचार के पश्चात बैठ गये और दादूजी के हाथ में माला नही देखकर बोले- भगवन ! मैं एक लाख नाम प्रतिदिन जपता हूं और माला भी बहुत मोटी और बड़ी रखता हूं। जनता भी मेरे दर्शन को बहुत आती है। फिर भी मैं देखता हूं कि आपके समान न तो मुझे शांति प्राप्त है और न आपके समान ख्याति ही प्राप्त है। आपके पास तो माला भी नही है फिर भी आपकी ख्याति बहुत है। मैने अनेक स्थानों पर आपकी महान महिमा सुनी है और आज भाग्यवश आपके दर्शन भी कर रहा हूं। अब आप मुझे बताइये, मुझे आपके समान शांति और ख्याति क्यों नही प्राप्त हो रही है?
दादूजी ने कहा- जब पैर पर नख से मस्तक की शिखा पर्यन्त प्रत्येक रोम से स्मरण होने लगता है, तब वह ऐसा स्मरण ही परम जाप कहलाता है। उक्त उपदेश सुनकर रामदासजी ने दादूजी को अपना गुरू मान लिया। फिर उन्होने दादूजी की बताई प(ति से अपनी साधना आरम्भ की और उक्त माला का भार त्याग दिया। फिर तो अन्तः भजन के प्रताप से उन्हें परम शांति प्राप्ति हो गई।

ये दादूजी के 52 शिष्यों में गिने जाते हैं।

बाग से नोहरे में पधारना

रामबाग में दादूजी को अंतराय ज्ञात होता था, कारण- लोगों का आना जाना अधिक रहता था तथा पक्षियों की ध्वनि भी अधिक रहती थी । अतः स्थान बदलने का विचार हुआ। तब राजपुरोहित ने राजा भवतदासजी को कहा- स्वामीजी का विचार स्थान बदलने का है, सो मेरा विचार है कि बाग से पूर्व की और पर्वत की जड़ में नोहरा है। वह एकान्त भी है। स्वामीजी तथा सभी सन्तों को वहां सुविधा रहेगी। स्वामीजी को वहां ठहरा दिया जाय तो अच्छा रहेगा । राजा ने कहा- बहुत अच्छा, ठहरा दो। राजपुरोहित ने स्वामीजी को वह निजी स्थान दिखाया तो स्वामीजी को भी वह स्थान अच्छा लगा। फिर दादूजी अपने शिष्यों सहित नोहरे में पधार गये और वहां ही विराजने लगे। कुछ समय के पश्चात नोहरे के पास ही दादूजी के लिए एक भजनशाला बनवा दी गई थी। उसके बनने के पश्चात् दादूजी उसमें ही भजन करते थे। अब वह वर्तमान दादू द्वारा जो मावठा सरोवर के तट पर स्थित है, उसके नीचे दादू गुहा के रूप में विद्यमान है।

दो सि(ों का गुफा में प्रवेश

आमेर में एक दिन दादूजी महाराज उक्त भजनशाला रूप गुफा में ध्यानस्थ थे, उसी समय दो सि(दादू आश्रम पर आये और वहां दादूजी के शिष्य सन्तों से पूछा- सन्त दादूजी कहां है ? शिष्य सन्तों ने कहा- वे तो इस समय गुफा में ध्यानस्थ हैं। सि(ों ने कहा- ध्यानस्थ है तो भी क्या है? हम उनके पास चले जायेंगे। सन्तों ने कहा- गुफा बन्द है। वे अब कुछ ही समय में गुफा के बाहर पधारेंगे, तब हम भी प्रणाम करने जायेंगे उस समय आप भी साथ चलना। किन्तु उन सि(ों ने सन्तों के उक्त परामर्श को उचित नही समझा, फिर वे अपने शरीरों को अपनी योग शक्ति से सुक्ष्म बनाकर गुफा के कपाटों की दरार से गुफा में प्रवेश कर गए ओर ध्यानस्थ दादूजी के सामने बैठ गये। दादूजी के ध्यान का

समय समाप्त होने ही वाला था। समय पर ही दादूजी ने नेत्र खोले तो सामने दो सन्तों को बैठे देखा। दादूजी ने उनसे पूछा - गुफा के कपाट तो भीतर से बन्द थे आप लोग भीतर कैसे आये ? तब उन्होंने अपनी सिर्(ि का अभिमान दिखाते हुए कहा- कपाटों की दरार से आ गये। हमारे लिये यह कोई आश्चर्य की बात नही है। यह सुनकर दादूजी उनके मन के भावों को समझ गये और बोले- एक योगी की दृष्टि से आपकी यह सिर्(ि कुछ भी नही है। आप लोगों ने इस सिर्(ि के लिए चिरकाल तक तपस्या की होगी यह सिर्(ि तो मच्छर और चीटियों को भी प्राप्त होता है। वे भी कपाट की दरार से सुगमता से भीतर आ जाते है, और चले जाते हैं। तब बताइये आपकी इस सिर्(ि का क्या महत्व रह जाता है ? आप लोगों को ब्रह्म चिन्तन द्वारा परब्रह्म का साक्षात्कार करना था, वही सच्ची सिर्(ि होती है। दादूजी का उक्त उपदेश सुनकर दोनों सि(बड़े प्रभावित हुये और दादूजी को अपना गुरू मानकर दादूजी की प(ति से निर्गुण ब्रह्म का चिन्तन करने में लग गए और अंत में ब्रह्मसाक्षात्कार करके ब्रह्म भाव को ही प्राप्त हुये।

शिष्य मोहन मेवाड़ा

मोहन मेवाड़ा, मेवाड़ देश के देवगढ़ नगर के पंवार क्षत्रिय थे। ये गुजरात के सूरतनगर के इच्छाराम सेठ के यहां मुनीम के रूप में रहा करते थे। सेठ का जहाज से माल आता- जाता था। मोहन मेवाड़ा भी जहाज के साथ माल खरीदने तथा बेचने जाते थे। एक समय विदेश से माल खरीदकर जहाज द्वारा समुद्र के मार्ग से मोहन मेवाड़ा आ रहे थे। समुद्र में एक महान् मच्छ से जहाज टकराकर टूट गया। उस जहाज के टूटे हुये एक काष्ठ खंड पर बैठकर मोहन मेवाड़ा समुद्र में डूबने से बच गये। अन्य सब लोग और माल समुद्र में डूब गया। फिर वायु की सहायता से वे उस काष्ठ पर बैठे हुये एक पर्वत की ओर चलकर एक टापू की ओर पहुंच गये। वह टापू समुद्र के बीच में था। मोहनजी एक पर्वत की चट्टान को पकड़कर उस पर चढ़ गये और काष्ठ खंड को छोड़ दिया इस प्रकार समुद्रतट पर उतरकर वे पर्वत पर गये । वहां एक स्थान पर उन्होंने तीन सन्तों को एक आसन की पूजा करते हुये देखा। मोहनजी भी उनके पास जाकर

शिष्टाचार के अनुसार प्रणाम करके सामने बैठ गये। आसन की पूजा करने के पश्चात् उन सन्तों में एक सन्त ने पूछा - तुम कौन हो? यहां कैसे आ गये? यहां तो मनुष्य का आना अति कठिन है। तब मोहन मेवाड़ा ने अपनी पूर्व की जहाज टुटने की सब कथा सुनाई और पूछा - जिनका यह आसन है, वे सन्त कहां गये हैं ? यह कृपा करके बताइये वे कब पधारेंगे, मैं भी उनका दर्शन करना चाहता हूं। और मैं आप महानुभावों से यह भी प्रार्थना करता हूं कि आप मुझे भी अपना शिष्य बना लें, अन्यथा तो मेरी गति नही है। अब मैं जाऊं कहां?

सन्त बोले- जिनका आसन खाली है, वे हम में श्रेष्ठ सनक मुनि भगवान् की आज्ञा से लोक कल्याणार्थ गुजरात देश के अहमदाबाद नगर के लोधीराम नागर ब्राह्मण के पौष्य पुत्र होकर कई स्थानों में विचरते हुये तथा लोगों को उपदेश देते हुये अब राजस्थान के आमेर नगर में है। वे निर्गुण ब्रह्मभक्ति का विस्तार कर रहे हैं । उन्ही के पास तुम भी जाओ, वे तुमको शिष्य बना लेंगे। यहां तुम्हारे खाने-पीने का भी प्रबन्ध होना अति कठिन है, मोहनजी ने पूछा- आप क्या खाते हैं ? सन्तों ने कहा- हमारी रक्षा तो तुम को जहाज डूबने पर बचाने वाला प्रभु ही करता है। मोहनजी ने कहा- भगवन्! मुझे अभी भूख बहुत सता रही है। तब सन्तों ने उन्हें दो फल दिये, उनको पाकर मोहन मेवड़ा परम तृप्त हो गये। पुनः मोहनजी ने कहा- आप सन्तों के दर्शन से मुझे बहुत आनन्द हुआ है अतः मैं आपके पास ही रहना चाहता हूं। सन्तों ने कहा- तुम यहां तो नही रह सकते, सन्त दादूजी के पास राजस्थान के आमेर नगर में चले जाओ। फिर मोहनजी ने कहा- मैं आमेर कैसे जा सकूंगा? उस चिन्ता में निमग्न होकर निद्रा के वश हो गये। उन सन्तों ने मोहनजी को निद्रा के समय ही अपनी योगशक्ति से आमेर पहुंचा दिया।

प्रातः मोहनजी की निद्रा टूटी तो उन्होंने देखा यह तो कोई और ही स्थान है। वह टापू और सन्त तो यहां नही है। उन्होने किसी से पूछा - यह नगर कौन सा है? उत्तर मिला- यह आमेर है। यह सुनकर मोहनजी के आश्चर्य की सीमा नही रही फिर मन में विचार आया, उन सन्तों ने अपनी योगशक्ति से मुझे यहां पहुंचा दिया

है। पुनः उस व्यक्ति से पूछा- यहां दादूजी कहां निवास करते हैं? उनसे कहा यहां पास ही मावठा सरोवर के तट पर दादूआश्रम है, उसी में रहते हैं। मोहन मेवाड़ा दादूजी के आश्रम में गये, और उन्होंने सन्त समाज तथा भक्तगण के मध्य विराजे हुये दादूजी का दर्शन किया। फिर दादूजी के चरण कमलों में बारंबार दण्डवत प्रणाम करके हाथ जोड़े हुये सामने बैठ गये। दादूजी ने मोहन मेवाड़ा की श्र(ा भक्ति देखकर पूछा- कहां से आये हो? मोहन मेवाड़ा ने कहा- भगवन्! मैं उस स्थान का नाम तो नही जानता हूं किन्तु जहां सनन्दन सनत्सुजात, सनत्कुमार, आपके भ्राता तपस्या करते हैं, वहां से आया हूं। दादूजी ने पूछा तुम वहां कैसे चले गये? तब मोहन मेवाड़ा ने अपनी पूर्व कथा जहाज टूटने आदि की अपनी आप बीती सुना दी । फिर कहा- मैंने आपका आसन देखकर उन सन्तों से पूछा था, इस आसन पर विराजने वाले सन्त कहां पधारे हैं? तब उन्होंने आप का परिचय दिया। मैंने उनसे प्रार्थना की कि मुझे भी अपना शिष्य बनाकर आपके पास रहने की आज्ञा दें, तब उन्होंने आपके पास जाने को कहा और यह भी कहा वे तुम को शिष्य बना लेंगे। फिर मैं यह चिन्ता करता हुआ कि मैं उनके पास कैसे पहुंचूगां, समुद्र को पार कैसे करूंगा, रात्रि को सो गया था। सोते समय ही उन सन्तों ने आपके आश्रम के पास यहां आमेर में पहुंचा दिया। मैं जब प्रातः निद्रा से उठा तो जहां सोया था वह स्थान न देखकर एक व्यक्ति से पूछा तो उसने कहा- यह तो आमेर है। फिर आपका आश्रम पूछकर आपके चरणों में आया हूं। मैं आपका शिष्य हूं । दादूजी ने मोहन मेवाड़ा को निर्गुण, निराकार, सबमें रमने वाले राम का परिचय दिया। और इस प्रकार मोहनमेवाड़ा दादूजी के शिष्य बन गये। ये 52 शिष्यों में हैं।

यहा सारा वृतांत मोहन मेवाड़ा ने वहां उपस्थित सब सज्जनों को सुनाया। उक्त कथा आमेर में बहुत तेजी से फैल गई और दादूजी की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई। मोहनजी मेवाड़ा उच्चकोटि के समाधि सि(योगी थे और भानगढ़ में रहते थे। कुछ दुर्जनों ने षडयंत्र रच कर उस गुफा में आग लगा दी थी जिस गुफा में मोहनजी मेवाड़ा समाधिस्थ थे।

दादूजी को वैष्णव बनाने का प्रयत्न

गलता के वैष्णवों ने विचार किया कि दादू की प्रतिष्ठा बढ़ने से उनके पास भक्तों का आना कम हो गया और दादूजी को अपने सम्प्रदाय में मिलाना चाहिये। इस विचार से इन्होंने 25 साधुओं को दादूजी के पास भेजा। और उन्होंने दादूजी से अपने सम्प्रदाय में मिलने के लिए कहा। दादूजी ने कहा -कोई बात नही, मै आपके सम्प्रदाय में मिलने के लिए आपके सामने एक शर्त रखता हूं, उसको आप पूरी कर दें तो मैं आपके सम्प्रदाय में मिलकर आप जैसा भेष प्रदान करेंगे, वैसा ही धारण कर लूंगा। दादूजी के उक्त वचन सुनकर बोले ठीक है आप अपनी शर्त बताओ, दादूजी ने कहा-मेरा यह कमंडल जल से भर दीजिये।

फिर साधु लोग अपने जलपात्रों का जल दादूजी के कमंडल में डालने लगे किन्तु उस कमंडल में जितना जल पहले से भरा था उतना ही रहा। तब सरोवर से बडे-बड़े बर्तनों मे पानी ला कर डालने लगे, परन्तु कमंडल नही भरा। फिर गलता के वैरागियों ने दादूजी को अपने सम्प्रदाय में मिलाने का विचार छोड़ दिया।

शिष्य मोहन दफतरी

मोहनजी दफतरी महाराजा उदयपुर के दफतर का काम करने वाले कायस्थ थे। इनके विरोधियों ने इनके ऊपर कोई दोष लगाकर महाराणा को इनके विपरीत बातें सुनाकर इनसे रूष्ट कर दिया था। इससे महाराणा ने इनको चित्तौड़ में कैद कर लिया था। ये एक साल तक कैद में पड़े रहे तब तक भी महाराणा ने इनके दोष संबंधी कुछ भी खोज नही की। फिर इनको सन्तप्रवर दादूजी का स्मरण आ गया। इन्होंने सन्त दादूजी का यश बहुत सुन रखा था। एक दिन रात्रि को यह संकल्प किया- हे सन्तप्रवर दादूजी महाराज ! मेरे पर दया करो। यदि मैं इस कैद से निकल जाऊंगा तो आगे आपका शिष्य होकर भजन करूंगा, मेरे को इस कैद से निकालो। इस प्रकार प्रार्थना करने पर उसी रात्रि को इनके हाथ पैरों की बेड़िया खुल गई । जेल के ताले और कपाट भी अनायास ही खुल

गये। जेल के रक्षकों को गहरी निद्रा आ गई। तब जेल से निकलकर चित्तौड़ को उसी रात छोड़ दिया। उदयपुर राज्य से भागकर आमेर में दादूजी के चरणों में जाकर साष्टांग प्रणाम किया और अपनी कैद की सब बातें सुनाकर दीक्षा की प्रार्थना भी की। दादूजी ने इनके सर पर हाथ रखकर अपना आशिर्वाद दिया, फिर वे दादूजी के शिष्य बनकर रहने लगे। दादूजी के मुख कमल से जो भी पद साखियां निकलती थी उनको प्रसंगानुसार लिख लेते थे। दादूजी की वाणी मोहनजी दफतरी ने लिखी थी इन्होंने अपना साधना धाम मारोठ को बनाया था।

जग्गाजी को सचेत करना

जग्गाजी आमेर में भिक्षा लाने जाया करते थे। उनके कटिके बांधने का आडबन्ध ा जीर्ण हो गया था। उन्होंने विचार किया कि अब दूसरा आडबन्ध बनाना चाहियें एक दिन जब वे भिक्षा लाने गये उस दिन वे बोलने लगे– "दे माई सूत, ले माई पूत।" एक खण्डेलवाल वैश्य परिवार की बाई जिसका नाम शान्ति था, उसने जग्गाजी का उक्त वचन सुना तब वह अपने घर से काता हुआ सूत लाकर जग्गाजी को बोली– 'लो बाबाजी सूत, दो बाबाजी पूत'।जग्गाजी ने वह सूत ले लिया और कह दिया तेरे पुत्र हो जायगा। दादूजी महाराज ने यह वृतांत अपनी योगशक्ति से उसी क्षण जान लिया। जग्गाजी ने भिक्षा की झोली टीलाजी को दे दी। फिर वे जब दादूजी को प्रणाम करने गये तब दादूजी महाराज ने कहा– हे शिष्य जग्गाजी ! आपको अपने भरोसे पर ही सचेत होकर किसी को वरदान देना चाहिये ।आज आपने सूत के बदले पूत प्रदान करने की ध्वनि - "दे माई सूत, ले माई पूत" की थी किन्तु आपको विचार तो करना चाहिये था, उसके प्रारब्ध में पुत्र है या नही बिना जाने ही अपनी शक्ति का दुरूपयोग करना कहां तक उचित है। उस बाई के प्रारब्ध में तो पुत्र है ही नही और आपने पुत्र होने का वरदान दे दिया है। जब उसके पुत्र नही होगा तब सन्तों का यह अपवाद फैलेगा कि सन्त भी मिथ्या बोलते हैं। अतः सन्तों के अपवादी को रोकने के लिये अब आपको ही उसके पुत्र रूप से जन्म लेना होगा, तब ही आपका वचन सत्य होगा । जग्गाजी ने कहा– मैं अवश्य उसका पुत्र बनूंगा किन्तु

इच्छानुसार आपके सत्संग का लाभ उठाकर ही शरीर त्यागकर उसके उदर में चला जाऊंगा। मैं पुनः आपही के चरणों में आना चाहता हूं इतनी कृपा मुझ शिष्य पर आप अवश्य करें, यही मेरी हार्दिक प्रार्थना है। जग्गाजी की उक्त प्रार्थना दादूजी ने स्वीकार करके यह कह दिया तथास्तु अर्थात्- ऐसा ही हो जायेगा। दूसरे जन्म में यही छोटे सुन्दरदास हुये थे।

ठग द्वारा दादूजी का स्वांग धरना

उत्तरी क्षेत्र में एक ठग दादूजी का स्वांग धरकर अपने को पुजवाने लगा। उसने जनता से बहुत भेंट राशि एकत्र करली। घुमता हुआ जब वह आमेर पहुंचा, तो दादूजी का तप देखकर उनके चरणों में गिरकर बोला- मुझ पर दया कीजिये, मुझे इस पास से उबारिये, मैं आपकी शरणागत हूं । मैने आपके नाम से बहुत धन राशि जनता से ठग ली है। अब मैं क्या करूं? तब दादूजी ने कहा- इस धन को दीन दुखियों में वितरित कर दो। तब उसने दादूजी के आगे ठगी न करने की शपथ ली, अपना सब धन दीन दुखियों में वितरित कर दिया और हरि गुण गाने लगा।

आमेर में विराजते हुये दादूजी के बहुत शिष्य बने। जगदीशजी ने दादूजी का नाम सुनकर शिष्य होने के लिए घर त्याग दिया और सन्त शरण में आ गये। जगन्नाथजी आमेर से चुंगी विभाग के अधिकारी थे और दादूजी के दर्शन करने व प्रवचन सुनने आया करते थे। उनको वैराग्य हो गया और दादूजी के शिष्य हो गये थे।

रज्जब प्रसंग

चांदखां के पुत्र रज्जब अली खां का विवाह सम्बंध 16वे वर्ष की अवस्था में आमेर के प्रतिष्ठित पठान परिवार में हुआ थां विवाह के लिये बारात आमेर गयी थी। मावठा सरोवर पर पहुंचे तब रज्जब को सन्त दादूजी का स्मरण हो आया।

इससे रज्जब ने सरोवर पर एक व्यक्ति से पूछा- यहां जो सन्त दादूजी रहा करते हैं, वे आजकल यहां हैं या नही? व्यक्ति ने कहा- यहां ही हैं और यह सामने ही उनका आश्रम है, इसी में वे विराजते हैं।

रज्जब ने अपने साथियों से कहा-"दादूजी का दर्शन करके आगे चलेंगे।" उन लोगों ने कहा- दादूजी का दर्शन तो फिर कर लेना, अभी तो चलो देर हो जायेगी।किन्तु रज्जब ने उन लोगों की बात नही मानी और हट पूर्वक कहा- "मैं दादूजी का दर्शन करके ही आगे चलूंगा"। फिर तो बाराती क्या करते, रूकना ही पड़ा। रज्जब अपने कुछ साथियों के साथ दादूजी के दर्शनार्थ दादू आश्रम में प्रविष्ट हुये तो आगे दादूजी ध्यानस्थ थे। ये सब चुपचाप शांत भाव से दादूजी के सामने बैठ गये। रज्जब ठीक सामने बैठे थे। थोड़ी देर पश्चात् साथियों ने कहा- दर्शन हो गये, अब चलो। तब रज्जब ने कहा- हमको तो दर्शन हो गये किन्तु दादूजी ने हमको नही देखा है। अतः इनके नेत्र खुले तब तक बैठो जिससे कि ये भी हमको देख लें। इतने में दादूजी की आंखे खुली। तब रज्जब उठे और प्रणाम करके फिर वहां ही जा बैठे। अपने सामने एक सुन्दर सुडौल युवक वर के भेष में बैठा है, यह देखकर तथा उसका मुखमंडल परमशांत और ज्ञान पिपासु ज्ञात होता है यह समझकर दादूजी ने उसपर कृपा पूर्ण दृष्टि डाली।

दादूजी ने कहा- तुम्हारा यह सुन्दर शरीर परमात्मा ने भक्ति के लिये रचा है और तुम यह भक्ति मार्ग छोड़कर अन्य मार्ग से परमात्मा को नहीं प्राप्त कर सकते हो। इस प्रकार दादूजी ने रज्जबजी को उपदेश द्वारा समझाया। दादूजी के उपदेश का रज्जब पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होंने उसी समय अपने सिर पर मौड़ उतारकर अपने छोटे भाई के सामने रखकर कहा- अब तुम इस मौड़ को अपने सिर पर रखकर विवाह कर लो, मैं विवाह नही करूंगा। इस बात पर बहुत हलचल हो गई। सब लोगों ने दादूजी से प्रार्थना की कि रज्जब को विवाह करने की आज्ञा दें। तब दादूजी ने रज्जब को कहा कि साधुपने का निर्वाह करना बड़ा कठिन कार्य है अतः तुम विवाह कर लो। रज्जब का दृढ़ निश्चय देखकर दादूजी ने उन्हें अपना शिष्य बनाकर अपनी साध

ान प(ति बताई और सांगानेर में रहकर ही साधना करने की आज्ञा दी। रज्जब के शिष्य होने पर कुछ लोग ईर्ष्या वश दादूजी को मारने के लिये आश्रम में घुस गये और दादूजी पर तलवार चलाने लगे। उनकी तलवारे दादूजी के शरीर को नही काट सकी। सब आश्चर्य चकित होकर दादूजी के चरणों में क्षमा मांगने लगे।

रज्जब जी ने जीवन पर्यन्त अपना भेष दूल्हे का ही रखा। वे कहते थे इसी भेष में मुझे गुरूदेव तथा ज्ञान की प्राप्ति हुई थी, इसको कैसे त्याग सकता हूं? इन्होंने वाणी की रचना की है।

योग शक्ति से केदार देश में जाना

ज्ञानदास और मानकदास के उपदेश के प्रभाव से धरत्या जैयमल और प्रजा ने तो देवी की उपासना छोड़ दी तथा हिंसा छोड़कर अहिंसक बनकर ईश्वर भक्ति में लग गई। किन्तु पद्मसिंह को वे अहिंसक नही बना सके। ज्ञानदास और मानकदास ने राजा से कहा- हम सब मिलकर दादूजी से प्रार्थना करते हैं ओर वे योगशक्ति द्वारा हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर लेंगे। फिर सम्पूर्ण प्रजा ने व राजा ने अन्न जल त्याग दिया ओर प्रतिज्ञा की कि जब तक दादूजी यहां केदार देश नही पधारेंगे तब तक हम अन्न जल ग्रहण नही करेंगे।

उधर जिस मंदिर में पद्मसिंह देवी की पूजा कर रहे थे, उसी स्थान पर दादूजी प्रकट हुये। दादूजी को देखकर पदमसिंह ने कहा- यह कौन आ गया है? इसे मंदिर से बाहर निकालो। राजपुरूषों ने दादूजी को पकड़कर मंदिर से बाहर किया तो मंदिर में दो दादू दिखने लगे। दो को बाहर निकाला तो चार दादू हो गये। इस प्रकार जितनी संख्या में निकालते थे उससे दुगुनी संख्या में दादू हो जाते थे। देवी का सारा मंदिर दादूजी के शरीरों से भर गया। जिधर देखो उधर दादू ही दादू दीख रहे थे। यह देखकर पद्मसिंह अति आश्चर्य में पड़ गया। देवी से प्रार्थना की- हे भगवती जी! यह क्या लीला है? राजा की प्रार्थना सुनकर देवी

प्रकट हो गई तब दादूजी के अनन्त शरीर अर्न्तध्यान हो गये केवल एक ही शरीर रहा। देवी दादूजी के चरणों में प्रणाम करके बोली- भगवन्! आप तो परब्रह्म स्वरूप सनकजी हैं, मैं आपको पहचानती हूं, आप ने यहां पधार कर हम सब को दर्शन दिया है और हम लोगों पर अति कृपा की है।

देवी के उक्त वचन सुनकर दादूजी ने कहा- अब से आगे आप किसी भी प्राणी का बलि नही लेने की प्रतिज्ञा करें। और केदार देश को छोड़कर अन्य देश को चली जाएं दादूजी का उक्त उपदेश सुनकर देवी ने कहा- मैं अब के बाद प्राणियों की बलि स्वीकार नही करूंगी। देवी ने राजा पदमसिंह को कहा- मैं तो तुम्हे सांसारिक भोग ही दे सकती हूं। किन्तु ये सन्त तो तुम्हे चारों पदार्थ देने में समर्थ हैं। जहां सन्त पधार जाते हैं वहां परमेश्वर की भक्ति ही रहती है, हमारे जैसों की भक्ति नही रहती है। फिर देवी ने दादूजी को प्रणाम किया और कहा- भगवन्! अब मैं जा रही हूं मुझपर दया रखना।

दादूजी ने पद्मसिंह को कहा- राजन! तुमने मर्यादा त्याग कर कुकर्म किये हैं, उसका तो फल भोगना ही पड़ेगा। राजा ने कहा- अब तो जो आप आज्ञा देंगे वही करूंगा और आप मुझे नही अपनायेंगे तो कूप में पड़कर शरीर त्याग दूंगा। पद्मसिंह का उक्त वचन सुनकर परीक्षा में निमित्त दादूजी ने कहा- कूप मे पड़ने से तुम्हारा उ(ार हो तो पड़ जाओ, कौन निषेध करता हैं राजा उठा और पास के कूप में कूद पड़ा किन्तु दादूजी ने अपनी योग शक्ति से उसे बीच में ही पकड़कर अपनी गोद में ले लिया और पूर्ण धैर्य देते हुये उपदेश दिया तथा कुछ दिन एकान्त स्थान में अपने पास रखकर अपनी साधना प(ति बताई फिर उसी स्थान पर धरया, जैमल, ज्ञानदास और माणकदास भी आ पहुंचे। उन सबको दादूजी का दर्शन करने से अति आनन्द की प्राप्ति हुई।

सबको आशीर्वाद देकर दादूजी वहां से सबके देखते देखते अर्न्तध्यान हो गये और अपनी योग शक्ति से वापिस आ गये। एक केदार देश के योगीराज जो दादूजी के दर्शन करने आमेर आये थे, उन्होंने ही यह केदार देश की कथा सबको सुनाई

थी। ऐसा गुरूप(ति ग्रंथ के 16वें प्रकाश में लिखा हैं

शिष्य माधवदास

आमेर में एक दिन माधव नामक ब्राह्मण तीर्थ यात्रा करते हुये आये थे। किसी सत्संगी सज्जन ने उनको कहा- हमारे नगर में एक महान् सन्त निवास कर रहे हैं फिर माधव दादूजी के आश्रम में गये और दादूजी के दर्शन करके अति प्रसन्न हुये। माधवजी ने दादूजी से प्रार्थना की कि उन्हें शिष्य बना लें। फिर ये माधवदास कहलाने लगे और विरक्त सन्त के समान रहने लगे। कुछ दिन सत्संग करके माधवदास दादूजी से आज्ञा लेकर आमेर से विचर गये और भ्रमण करते हुये सीकरी जा पहुचे ।

एक दिन माधवदास सीकरी के एक मंदिर में मध्य दिन में विश्राम कर रहे थे। उसी समय उनकी पीठ ठाकुरजी की ओर हो गई। उसे देखकर पुजारी रूष्ट होकर बोला- तू कौन है? भगवत् मूर्ति को पीठ देकर कैसे पड़ा है? ऐसा कहकर माधवदास जी को उठा दिया। वे दीवार के पास जाकर बैठ गये। पुजारी के ऊंचे स्वर को सुनकर और कई व्यक्ति वहां आ गए और बोले- क्या बात है? पुजारी ने पूर्व घटना सुना दी। तब सबने कहा- तुम नामदेव के समान अनन्य भक्त हो गये हो क्या? जिससे तुमको इतना भी ज्ञान ही है कि इधर पीठ नही करनी चाहिये। माधव दास ने पूछा- नामदेव ने क्या किया था? पुजारी आदि बोले- नामदेव ने तो मंदिर की मूर्ति को दूध पिलाया था। माधवदास ने कहा- परमात्मा तो व्यापक है, उनको जहां भी भाव से भक्त दूध ा पिलाता है, वहां ही पी लेते हैं वे समर्थ हैं, भक्त की इच्छा के अनुसार ही कर देते हैं । यह सुनकर पुजारी ने एक व्यक्ति को कहा- शीघ्र दूध का कटोरा ले आओ। दूध का कटोरा आ जाने पर बोले- जहां पिलाये वहां ही पी लेते हैं, तो तुम यहां ही पिलाओ। तब माधवदास ने दूध का कटोरा हाथ में ले लिया और व्यापक परब्रह्म से प्रार्थना की- प्रभो। यह दूधपान करके इन लोगों का संशय दूर कर दीजिये। ऐसा कहकर माधवदास ने दूध का कटोरा दीवार के ऐसे लगा दिया

मानो उसे ही दूध पिला रहे हों । फिर अपने हृदय में रमने वाले व्यापक राम का ध्यान किया, तब उस समय व्यापक परमेश्वर ने उस दूध को पी लिया। उस कटोरे में एक बूंद भी दूध नही रहा। यह देखकर सब आश्चर्य में पड़ गये फिर यह समाचार अति शीघ्र ही सारे सीकर नगर में फैल गया। बहुत लोग दर्शन को आने लगे । माधवदासजी की धर्मपत्नी का पिता तुलसी देखने आया और देखते ही पहचान गया कि यह तो मेरा जंवाई माधव ही है, फिर वह वहां से यह सोचकर कि इसने मेरी पुत्री को दुःख में डाला है, इसे मरवाना ही है, अकबर बादशाह के पास गया।

वह अकबर बादशाह की राजसभा में किसी विभाग का कार्यकर्ता था और बादशाह से अच्छा परिचित था। बिना समय तुलसी को आया देखकर बादशाह ने पूछा- कैसे आये हो? तुलसी ने कहा- नगर में एक साधु भेषधारी पाखंडी आया है और उसने दीवार को दूध पिलाकर जनता को धोखे में डाल दिया है। इस प्रकार के पाखंडियों से जनता में गलत प्रचार होता है। जनता धोखे में आती रहती हैं सरकार को चाहिये उसके मिथ्या प्रचार को रोके। अकबर बादशाह ने पूछा- कैसे रोकना चाहिए? तुलसी ने कहा- मृत्यु दंड देने से हिन्दु प्रजा को अति दुःख होगा, सिंह के पींजरे में बन्द कर देना चाहिये, सिंह मार देगा तब जनता में भी यह बात फैल जायेगी कि साधु दंभी था तब ही सिंह को मार दिया है, सच्चा सन्त होता तो सिंह कभी नहीं मारता।

माधवदास को सिंह के पींजरे में बन्द करना

यह बात अकबर बादशाह के भी समझ में आ गई उसने सोचा सत्य, झूठ की परीक्षा तो अवश्य हो ही जायेगी। अकबर बादशाह ने माधवदास को राज पुरूषों द्वारा पकड़वा लिया और सायंकाल के समय सिंह के पींजरे के खाली भाग में माधवदास को बन्द दिया गया। फिर रात्रि में उस पींजरे का फाटक खोल दिया।

तब सिंह माधवदासजी की ओर आया और माधवदासजी को भगवत् भजन करते देखकर शांतभाव से पींजरे के एक कोणे में बैठ गया। उनमें पूर्णरूप से अहिंसा प्रतिष्ठित थी। अतः सिंह ने उनको द्वेष से नही देखा और माधवदासजी सबको ब्रह्मरूप ही देखने वाले सन्त थे उनको कुछ भी भय नही हुआ, भय तो द्वेत में ही होता है। फिर ब्रह्म मुहर्त्त में माधवदास जी ने प्रभाती राग में प्रभु सम्बन्धी भजन गाने आरंभ किये तब तो सिंह को अत्यंत भय हुआ, वह भय का मारा पींजरे के एक कोणे में बिल्ली के समान छिपकर बैठ गया। सूर्योदय होने पर बादशाह ने आज्ञा दी- उस साधु की खबर लाओ। यदि उसे सिंह ने खा लिया हो तो उसकी हड्डियां आदि बाहर करके पीजंरा साफ कर दो ओर नही खाया हो तो हमको शीघ्र सूचना दो। दूतों ने आकर देखा तो सन्त पींजरे के मध्य भाग में विराजे हुये हैं और सिंह भयभीत हुआ पींजरे के एक कोणे में छिपकर बैठा है। यह सूचना अकबर बादशाह को दी। सूचना मिलते ही अकबर आये और अपने सब सभा के तथा नगर के श्रीमान् तथा राजा आदि को भी धटना स्थल पर आने की आज्ञा दी। समय पर सब आ गये। सबने देखा सन्त पींजरे के मध्यभाग में ध्यानस्थ हैं और सिंह भयभीत हुआ पींजरे के एक कोणें में छिपकर बैठा है। बादशाह ने माधवदासजी से प्रार्थना की कि आप हमलोगों के अपराध को क्षमा कर पींजरे के दूसरे खाली भाग पर पधार जायें, जिसे पींजरे में सिंह बैठा है वह भाग बंद कर दिया जाय। बादशाह की प्रार्थना मान ली गई।

माधवदासजी से अकबर की क्षमायाचना

माधवदासी पींजरे के खाली भाग में आ गये । तब पींजरे के बीच का द्वार बन्द कर देने से सिंह बन्द हो गया । फिर सिंह भी निर्भय होकर पींजरे के कोणे से उठकर इच्छानुसार पींजरे में विचरते हुये आगत लोगों को देखने लगा। माधवदासजी को बाहर निकाल कर बादशाह ने क्षमायाचना करते हुये कहा- भगवन्! सन्तों को पहचानना सहज नही है। किन्तु आज आप के इस चरित्र से ज्ञात हुआ है कि आप तो ईश्वर स्वरूप ही है। फिर तुलसी की ओर देखते हुये बादशााह ने कहा- ये तो अति श्रेष्ठ सन्त हैं, हीरे की परीक्षा जौहरी को ही होती है, सन्तों की परीक्षा भी श्रेष्ठ पुरूष ही कर सकते है अन्य नही यह सुनकर तुलसी

लज्जित सा हो गया। अन्य सब तो नम्रतापूर्वक माधवदासजी से अपराध क्षमा कर देने की प्रार्थना करके उनके वचन सुनने में दत्तचित्त थे। किन्तु तुलसी अन्य ही सोच रहा था। माधवदासजी ने बादसाह को कहा- आपका कोई अपराध नही, आप लोगों ने तो मेरा ईश्वर विश्वास बढ़ाया है। मैने प्रत्यक्ष में आज अनुभव किया है कि भगवान के भक्तों को कही भी भय नहीं होता हैं बादशाह ने पूछा- आपका गुरू कौन है ? तब माधवदासजी ने कहा- हम परमसन्त श्री दादूजी के शिष्य है। तब बादशाह ने सोचा - जब शिष्य ही इतना करामाती है तो गुरू और भी अधिक चमत्कारी होगा, उनके दर्शन करने चाहिए। अकबर बादशाह ने पूछा- दादूजी आजकल कहां विराज रहे हैं? माधवदासजी ने कहा- दादूजी आजकल आमेर में हैं।

पंचम चरण

बादशाह अकबर द्वारा दादूजी को बूलाने का विचार

बादशाह अकबर ने आमेर नरेश को बुलवाया और कहा कि तुम्हारी नगरी में सन्त दादूजी विराजते है, हम उनके दर्शन करना चाहते हैं। आप उनको यहां बुलवाओ। अगर वे यहां न आयें, तो हम उनके पास जाकर दर्शन करेंगे। यह सुनकर आमेर-नरेश उदास हो गये, मन ही मन सोचने लगे कि- बादशाह मेरे नगर राज्य में पधारेगें तो सारा खर्चा मुझे ही भुगतना पड़ेगा, और मेरे नगर किले की सुन्दरता देखकर उसे हथिया भी सकते हैं। फिर धीरज के साथ सोचकर बोले हे बादशाह! ये सन्त केवल हरि के दास होते हैं इनका दर्शन पाना सहज नही है। मैं कोशिश

करता हूं कि वे सीकरी में पधार जावें। यह वायदा करके आमेर नरेश अपने निवास पर चले गये। यदि सन्त सीकरी नही पधारेंगे तो बादशाह मेरे पर कोप करके दुःख देगा, इसी सोच विचार में वे दो दिन तक भोजन भी नहीं कर पाये। तब सुरजसिंह खींची उनके पास आया और उनकी सोच का कारण पूछा राजा ने सारी बात बताते हुये कहा- हे खींची ! तुम बुद्धिमान मंत्री हो, किसी तरह गुरूदेव श्री दादूजी को यहां ले आओ। यह कहकर राजा ने अपने हाथ में गुरूदेव को पत्र लिखा, साथ में भेंट स्वरूप पच्चीस मोहरें भी भिजवाई। खींची तुरन्त विदा होकर आमेर पहुंचा।

सुरजसिंह खींची का आमेर आना

सुरजसिंह खींची गुरूचरणों में शीश नवाकर अपने राजा का सन्देश पत्र और मोहरें चरणों में रखकर हाथ जोड़े खड़ा हो गया। दादूजी ने कहा- राजा ने भेंट क्यों भिजवाई है? ये मोहरें मेरे किस काम की? सूरजसिंह ने निवेदन किया- अब तो ये गुरूदेव को अर्पित हो गई है, आप इन्हें परोपकार में लगा दीजिए। किन्तु स्वामीजी ने हाथ से छुआ तक नही उन मोंहरों से साधु सन्तों के उपयोगी वस्त्र आदि बाजार से मंगवाकर वितरित कर दिये गये। फिर सूरजसिंह खींची ने सादर निवेदन किया - हे गुरूदेव। मैं आपको लेने आया हूं, आप सीकरी पधारें। खींची ने कहा- माधवदास जी का दीवार को दूध-पिलावन चमत्कार प्रसंग सुनकर बादशाह अकबर ने उन्हे सिंह के पिंजड़े में डलवा दिया। किन्तु सन्त प्रभाव से वह सिंह पालतू बिल्ली जैसा पास में बैठा रहा। यह सब करामत देखकर बादशाह के मन में माधव जी के गुरू(आपके) दर्शन की उत्कंठा जाग उठी। हठ करके बादशाह अकबर ने आमेर-नरेश को बुलाया और आमेर आने की जिद्द करने लगा। तब आमेर नरेश ने उनसे वादा कर लिया है कि वे बादशाह अकबर को सन्त दर्शन करा देंगे।

अब मैं आमेर-नरेश द्वारा भेजने पर आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूं। दादूजी ने कहा- राजा बादशाहों की इच्छा पूरी करना, उन्हें खुश करना हमारा काम नही

है। हमें उनसे कुछ आशा अपेक्षा भी नही हैं अतः हे सेवक! सीकरी चलने का हमारा क्या प्रयोजन? हम तो जगत् व्यवहार छोड़कर केवल भगवत्-स्मरण में लीन रहते हैं, राजसभाओं में हमारा क्या काम? तब खीचीं ने कहा- गुरूदेव! दया करो, एक बार सीकरी पधारो। बु(िमान खींची ने सोचा- अब क्या उपाय करूं? सन्त को कैसे मनाऊं? कुछ देर सोचकर वह बोला- यदि आप मेरे साथ सीकरी नही पधारेंगे तो भी लौट कर नही जाऊंगा, अतः अन्न जल त्यागकर यही प्राण दे दूंगा।

दादूजी का सीकरी प्रस्थान

स्वामीजी ने उसकी श्र(ा-हठ देखकर कहा- अच्छी बात है, अभी तो तुम अपने निवास पर जाकर विश्राम करो। ध्यान के समय यदि परमेश्वर -प्रेरणा होगी तो प्रातः सीकरी चलने का निर्णय बताऊंगा। फिर दादूजी गुफा में ध्यान करने लगे। श्री दादूजी को रात्रि समय ध्यान में ईश्वर आज्ञा हुई कि- सीकरी जाकर बादशाह का अज्ञान दूर करो, सेवक भक्तों की लाज रखो, इससे तुम्हारा तप तेज बढ़ेगा। प्रातः होते ही दादूजी ने कहा- सीकरी गमन के लिये ईश्वर आज्ञा प्राप्त हो गई है। अब बिना विलम्ब किये प्रस्थान करना चाहिये। टीलाजी, चांदादास, जगजीवन, लाहोरी श्यामादास, जगदीश, धर्मदास, सुगनाराम इन सात शिष्यों को संग चलने का आदेश दिया। इतने में सूरजसिंह खींची आकर सेवा में उपस्थित हो गया। उसने हाथ जोड़कर शीश नवाया। तब दादूजी ने कहा- हम सीकरी आ रहे हैं, तुम आगे जाकर आमेर नरेश को सूचित कर दो। अपने कर्मचारियों को खीची ने तुरन्त सवारी लाने का आदेश दिया और निवेदन किया- गुरूदेव! पालकी, रथ, हाथी या घोड़े में से यथा रूचि सवारी पर विराजिये, सभी आपके द्वार पर हाजिर है। किन्तु दादूजी ने कहा- हमें सवारी नही चाहिये, हम पैदल ही आएंगे। रामजी की कृपा से सब सन्त समर्थ हैं। हम कुछ ही दिनों में सीकरी पहुंच रहे हैं । तब आज्ञा पाकर खींची आगे रवाना हुआ, पीछे से दादूजी ने भी शिष्यों के साथ प्रस्थान किया।

सन्त शिष्यों ने हाथ जोड़कर स्वामी जी से निवेदन किया–गुरूदेव! बादशाह ने सात हजार साधुओं को कारागार में बन्द कर रखा है, उनके गले में सांकल और हाथों में हथकड़ी पड़ी हुई है, वे चक्की पीसते हैं, उन्हें बहुत कष्ट दिया जाता है। अतः आप उस दुष्ट खूंखार मुस्लिम बादशाह से मिलने क्यों जा रहें हैं? वह तुर्क महाखल बु(है। उसके आध्यात्मिक प्रश्नों का उत्तर देकर यदि सन्तुष्ट नही कर पाये तो वह हमें भी कारागार में डाल देगा। तब दादूजी ने कहा– तुम बिलकुल मत डरो। श्री हरि हमारे हितकारी सदा साथ हैं जैसे भक्त प्रहलाद को दुःख देने पर नृसिंह रूप धारण करके श्री हरि नै दैत्य को मारा था, नामदेव और कबीरदास का संकट दूर किया था, और उन्हें बादशाह के कोप से बचाया था। और अभी माधवदास का वृतान्त तो खींची से सुना ही है, अतः धीरज धारण करो। श्री हरि आप ही सहायता करेंगे। यों गुरूदेव के वचन सुनकर सभी सन्त आश्वस्त हो गये, और निःशंक होकर चलने लगे। दादूजी के सीकरी पधारने का समाचार सुनकर जग्गाजी, राघवदासजी व माधवदासजी सीकरी के पास दादूजी से आकर मिले और प्रणामादि करके साथ ही चल दिये। जब सीकरी शहर कुछ दूरी पर रह गया तब स्वामी जी ने जग्गाजी को आगमन संदेश के लिए आमेर नरेश के पास भेजा। आमेर नरेश प्रसन्नता से दादूजी से स्वागत के लिए पहुंचा। राजा के अत्यंत निवेदन करने पर दादूजी हाथी पर आरूढ होकर पधारे और इस प्रकार आमेर नरेश भगवतदास को तीन दिनों तक दादूजी की सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। तब दादूजी ने कहा– अब बादशाह को सूचितक्यों नही करते?

बादशाह अकबर को दादूजी आगमन की सूचना

आमेर नरेश भगवतदास दादूजी से आज्ञा पाकर राजा ने तुरन्त अकबर बादशाह के पास जाकर दादूजी के आगमन की सूचना दी। तब अकबर ने दादूजी के परीक्षा के लिए बीरबल, तुलसी ब्राह्मण और अब्बुलफजल, को भेजा। ये तीनों दादूजी के पास गये और कहा– आप तो महान् हैं, अब आप कृपा करके हमें अपना ज्ञानोपदेश सुनाइये। दादूजी के वचनों को सुनकर ये तीनों अत्यंत प्रसन्न

हुये और अकबर के पास जाकर कहा- ये सन्त तो अति महान् हैं, आज से पूर्व ऐसा सन्त यहां कोई नही आया है। अब भी दादूजी से अन्य ऐसा कोई नही है और आगे भी ऐसे सन्त का मिलना कठिन ही है। तब अकबर बादशाह ने कहा-बहुत अच्छा, अब उन्हें शीघ्र ही यहां ले आओ। मेरे मन में उनके दर्शन की अति उत्कट इच्छा हो रही है। बादशाह के उक्त वचन सुनकर शेख अब्बुलफजल, बीरबल और राजा भगवतदास श्री दादूजी के पास आये और कहा- भगवन् अब आप बादशाह के पास पधारने की कृपा करें। तब दादूजी उक्त तीनों सज्जनों के साथ अकबर बादशाह के पास गये। अकबर बादशाह ने शिष्टाचार के साथ ससम्मान दादूजी को आसन पर विराजने की प्रार्थना की।

नित्य प्रति अकबर बादशाह दादूजी को सत्संग के लिए आमन्त्रित करते और जो जिज्ञासा थी उसके बारे में प्रश्न पूछते रहते। दादूजी के उत्तर सुनकर अकबर बादशाह का संशय दूर होता जा रहा था।

राजान्न से विघ्न

एक दिन अकबर ने कहा- कृपालु ! मैने सुना है कि आप अपने सब शिष्यों सहित भिक्षान्न ही पाते हैं। सो यह मुझे उचित ज्ञात नही होता है। बीरबल आपके भोजन का प्रबंध कर देगा आप सब मेरे यहां ही भोजन करें । तब दादूजी ने कहा- हम राजान्न नही खाना चाहते हैं । राजान्न से हमारे साधन में विघ्न होगा। राजान्न राजसी होता है, और साधुओं को सात्विक अन्न ही खाना चाहिये। दादूजी द्वारा भोजन स्वीकार नही करने की बात अकबर को बुरी लगी। फिर अवसर देखकर तुलसी ब्राह्मण ने अकबर से कहा- वास्तव में राजान्न की बात नही है, दादू आपको मुसलमान समझकर आपका अन्न नही खा रहे हैं। तब तो अकबर को और अधिक बुरा लगा। तब अकबर ने कुपित होकर कहा- ऐसा सन्त कहां से आया है? जो हमारा अन्न नहीं खाना चाहता है। हमारा अन्न नहीं खायेगा तो वे किस देश में रहेगा। फिर आदेश दिया- जब भिक्षा के लिए सन्त जाने लगे तब किले के कपाट बंद कर दिये जायें। विप्र को बुलाकर

भोजन बनवा दें। सन्तों को जब क्षुधा सतायेगी, तब समीप रखा हुआ भोजन अवश्य ग्रहण कर लेंगे।

जग्गाजी का दीवार लाघंना

यथा समय भिक्षा के लिए जब शिष्य सन्त जग्गाजी जाने लगे तो किले के कपाट बंद देखकर गुरू-कृपा से अन्तर की बात समझ गये। अपने मुख से 'सत्यराम' मंत्र का उच्चारण करते हुये वामन अवतार के सामान अपना शरीर विशाल बना लिया, और किले के दीर्घतम विशाल द्वार के उपर से डग भरते हुये बाहर चले गये। किले के बाहर निकलकर पुनः स्वाभाविक शरीर बना लिया और भिक्षा के लिए नगर में चले गये। किले के द्वारपाल भागकर बादशाह के पास गये और सारा वृतान्त सुनाया।

बादशाह को सुनी हुई बात पर विश्वास नही आया, वह शीघ्रता से दौड़कर किले के दरवाजे समीप छिप कर बैठ गया। कुछ समय बाद जग्गाजी भिक्षा लेकर लौट आये, किले के द्वार बंद देखकर पूर्ववत् 'सत्यराम' उच्चारण करते हुये अपनी देह को बढ़ाया और ऊपर से डग भरते हुये भीतर आ गये, पुनः शरीर को वैसा बनाकर गुरू निवास की तरफ चले गये। सन्त जग्गाजी की इस करामात को देखकर अकबर स्तम्भित रह गया और बोला- ऐसे करामाती सन्त से डरकर रहो, इन पर हमारा जोर नही चलेगा। इनकी जैसी मर्जी हो, वैसे ही रहें । जब एक शिष्य में ऐसी करामत है तो गुरू की गति व समर्थाई कौन जान सकता है? इन सन्तों की श्र(ा सहित सेवा करो और आमेर नरेश भगवतदास को बुलाकर कहा कि तुम शीघ्र जाकर सन्तों के चरणों में गिरकर अर्ज करो कि दया करके मेरा गुनाह माफ कर दें। बादशाह की बात सुनकर राजा शीघ्रता से सन्तों के उपस्थित हुआ और शीश नवाते हुये मुस्कुराकर कहने लगा- हे गुरूदेव! सन्तों का चमत्कार देखकर अकबर भयभीत हो गया है, और माफी चाहने हेतु मुझे शीघ्रता से यहां भेजा है। बादशाह ने गुरूचरणों में प्रणाम कहलवा कर अपने गुनाहों की

माफी चाही है।

सीकरी में जग्गाजी की उक्त शक्ति का समाचार शीघ्रता से फैल गया और लोग आश्चर्य चकित थे। फिर तो जग्गाजी जब नगर में भिक्षा लेने जाते तब लोग अति प्रेम पूर्वक प्रणाम करते थे और अतिशीघ्र भिक्षा लाकर देते थे।

शिष्य जनगोपालजी

सीकरी के मार्ग में एक भेषधारी को भिक्षा मांगते हुये दादूजी ने देखा और नेत्रों के संकेत से अपने पास बुलाया। भेषधारी दादूजी का नाम सुन चुका था। दादूजी कहा- यह सुंदर मुक्ति साधन रूप मनुष्य जन्म भिक्षा मांगने में ही खो दोगे क्या? फिर दादूजी ने एक पद सुनाया। दादुजी के उपदेश का उन पर प्रभाव पड़ा और दादूजी के शिष्य हो गये और ये जनगोपालजी के नाम से प्रसि(हुये। ये उच्च्च कोटि के कवि सन्त हुये हैं।

अकबर का ब्रह्मज्योति के रूप में प्रश्न

चौथे दिन अकबर ने दादूजी से प्रश्न किया कि आप ब्रह्म को ज्योतिरूप बताते है वह ज्योति कैसी है तो दादूजी ने कहा-

"सूरज कोटि प्रकाश है रोम रोम की लार।
दादूज्योति जगदीश की अन्त न आवे पार।।88।।

;दादूवाणी-परिचय का अंगद्ध

अर्थात्- उस परमात्मा के एक एक रोम के साथ करोड़ो सूर्यो जैसा प्रकाशित हो रहा है और जगदीश की ज्योति स्वरूप का न तो आदि है और न ही अन्त है।

निगुर्ण ब्रह्म परिचय

छठे दिन अकबर ने दादूजी से प्रश्न किया आप निर्गुण ब्रह्म संबंधी वचन बहुत कहते हैं। अतः आप निगुर्ण ब्रह्म का परिचय अपने अनुभव के आधार पर दें। तब दादूजी ने कहा–

दादू अविनाशी अंग तेज का, ऐसा तत्व अनुप।
सौ हम देखा नैन भर, सुन्दर सहज स्वरूप।।93।।
परम तेज प्रकट भया, तँह मन रहा समाय।
दादू खेले पीव सो, नाही आवे नहि जाय।।94।।

;दादूवाणी परिचय का अंगद्ध

अर्थात्– अविनाशी ब्रह्म के सभी अंग तेजोमय है और वह ऐसा अनुपम तत्व है उसकी कोई उपमा नही दी जा सकती। उसको हमने विचार नेत्रों से इच्छा भरकर देखा है। जबसे हृदय में आत्मज्ञान प्रकाश प्रकट हुआ है तबसे हमारा मन उसी प्रकाश में समाया रहता है और उसी का चिन्तन रूप खेल खेलता रहता है और दूसरे विषय में नही जाता है।

गोबध निषेध करवाना

इस प्रकार नितप्रति अकबर बादशाह दादूजी से ज्ञानोपदेश ग्रहण करता रहता था। सातवें दिन दादूजी ने कहा– गत दिनों के उपदेश से कुछ तो धारण करना चाहिये। केवल सुनने मात्र से क्या लाभ? अकबर ने कहा– भगवन्! आप आज्ञा दीजिये वही करूंगा। दादूजी ने कहा– आप अपने राज्य में गोवध बंद करा दो, तब ही हमारा गत दिनों का उपदेश सार्थक समझा जायेगा। अकबर ने कहा– अच्छी बात है, आज से मेरे राज्य में गोवध नही होगा और उसी समय फरमान जारी करवा दिया।

अकबर का राम के विषय में प्रश्न

आठवें दिन अकबर ने दादूजी से कहा- आप बारंबार राम का भजन करने का उपदेश करते हैं। मैने तीन राम सुने हैं- एक परशुराम, दूसरा दशरथ पुत्र राम और तीसरा बलराम। इनमें आप किस राम का भजन करते हैं कृपा करके कहिए। यह सुन दादूजी ने कहा-

"ना वह जन्मे ना मरे, ना आवे गर्भवास।
दादू ऊंचे मुख नही नरक कुंड दश मास।।4।।
कृत्रिम नही सो राम है, घटे बधे नहि जाय।
पूरण निश्चल एक रस जगत न नाचे आय।।5।।
उपजे विनशे गुण धरे, यहु माया का रूप।
दादू देखत थिर नही, क्षण छाही क्षण धुप।।6।।

;दादू वाणी- पीव पहचान का अंगद्ध

अर्थात्- वह परमात्मा न जन्मता है और नही मरता है और न गर्भवास में आकर दस मास तक अधोमुख मलासय रूप नरककुण्ड के पास रहता है। वह ब्रह्म किसी से रचित नही है, घटता बढ़ता नही है वह तो निश्चल एक रस व्यापक है उत्पन्न होना, विनाश होना यह सब माया कृत जीव का स्वरूप है। इसे सब देखते ही है इसका स्वरूप स्थिर नही है। छाया और धुप के परिवर्तन समान क्षण-क्षण में सुखी दुखी होता रहता है।

"ऐसा राम हमारे आवे, बार पार कोई अंत न पावे।।टेक।
हलका भारी कह्या न जाइ, मोल माप नहिं रह्या समाई।।
कीमत लेखा नहिं परिमाण, सब पचहारे साधु सुजाणा।
आगो पीछो परिमिति नाही, केते पारिख आवहिं जांही।।
आदि अन्त मधि कहै न कोय, दादू देखे अचरज होय।

;दादू वाणी- पदसंख्या 54द्ध

अर्थात् हमारे अनुभव में ऐसा राम आता है, उसका वार-पार जानकर कोई भी अन्त नही

पा सकता। वह हल्का और भारी नही कहा जा सकता। वह अमूल्य है तथा माप रहित है। वह सब विश्व में समा रहा है। उसकी कीमत नही हो सकती, तोल का हिसाब नही हो सकता। सब बु(िमान संत परिश्रम करके हार गये हैं किन्तु उसके आगे पीछे का माप नही कर सके। कितने ही लक्षणों द्वारा परीक्षा करने वाले विद्वान संसार में आते है और उसके स्वरूप परीक्षण के लिये पूर्ण प्रयत्न करते हैं किन्तु उसका आदि, मध्य, अन्त कहे बिना ही चले जाते हैं। अतः हमें उसके स्वरूप का साक्षात्कार करके अति आश्चर्य होता है।

उसी राम का हम भजन करते हैं और 'सत्यराम' शब्द से उसी का निर्देश करते हैं। उसी का भजन करना अन्य साधकों को बताते हैं। उक्त निरंजन राम के स्वरूप संबंधी प्रवचन सुनकर बादशाह अति प्रसन्न हुआ और धन्य-धन्य करते हुये बोला- भगवन्! गत रात्रि को अन्तःपुर की महिलाओं ने आपके दर्शन की तीव्र इच्छा जाहिर की है अतः आप पधारने की कृपा करें। दादूजी ने स्वीकार कर लिया। अन्तःपुर की सब मातायें एकत्रित हो गई तब दादूजी ने उन्हें पतिव्रत धर्म का पालन करने का उपदेश दिया।

काजीयों का अकबर के पास जाना

गोवध निषेधाज्ञा सुनकर काजी-मुल्ला बहुत दुःखी हुये। वे एकत्र होकर विचार-विमर्श करने लगे कि इस दादू ने बादशाह को भरमा दियाळहै। जिससे बादशाह कुरान का मत छोड़कर हिन्दुओं की धर्मनीति को अपनाने लगा है। अब अपने दीन इमान का क्या होगा? वे सब मिलकर बादशाह के पास पहुंचे और कहा कि आपने दादूजी की करामात को देखे बिना ही उनका कथन कैसे मान लिया? अपने असली तखत पर बैठकर दादू को बुलवाओ। असली तखत की रक्षा चौबीस पीर अपनी शक्ति से करते हैं। इससे तखत के उपर किसी की भी करामात नही चलती है। अकबर ने कहा- अच्छा, कल उनकी करामात देखने का प्रयत्न किया जायेगा।

उस दिन जोधपुर नरेश उदयसिंह और करौली नरेश गोपालदासजी को दादूजी के विपरीत षड़यंत्र की बात का पता चल गया था और वे दादूजी के पास आये और कहा- ऐसे समाचार सुनने में आये है कि मुसलमानों ने आपके विपरीत बादशाह को भड़का दिया है और बादशाह आप पर रूष्ट हो रहा है। कुसंग के प्रभाव से बादशाह में कुमति आ गई है। बादशाह ने दादूजी की शक्ति देखने के लिये योजना बनाई है। अपने सब राजाओं , नवाबों और अपने सब दरबारी कर्मचारियों को नियत समय पर दरबार में आकर अपने अपने स्थान पर बैठने की आज्ञा दी है और हुक्म दिया है कि जो नियत समय पर दरबार में आकर अपने स्थान पर नहीं बैठेगा, वह दोषी माना जायेगा और सरकार उसे दण्ड़ देगी।

नियत समय पर दरबार पूर्ण रूप से भर गया । तब बादशाह आकर अपने शाही तखत पर बैठा और बीरबल को कहा- तुम शीघ्र ही दादूजी को यहां बुला लाओ। पूरे दरबार भवन में तिल रखने की भी जगह नही थी। दादूजी ने अपनी योग शक्ति द्वारा जान लिया की आज अकबर ने षड़यंत्र रचा है। दादूजी शिष्यों के संग दरबार में पहुंच गये और आगे जाकर देखा कि दरबार तो पूर्ण रूप से भरा हुआ है। उसमें खड़े रहने को भी स्थान खाली नहीं था और किसी ने भी दादूजी को पधारने के लिए नहीं कहा।

तेजोमय तखत का प्रकट होना

दादूजी ने वहां की स्थिति देखकर प्रभु से प्रार्थना की। भगवान तो दादूजी के सदा ही रक्षक थे । प्रत्येक परिस्थिति में रक्षा करते ही रहे थे। दादूजी के हृदय की प्रीति का विचार करके परमेश्वर ने तत्काल एक परम अद्भुत लीला दिखाई। सभा के मध्य आकाश में तेजपुंजमय एक तखत दीख पड़ा। वह बादशाह के तखत से अत्यधिक तेजयुक्त था। ईश्वर ने क्षण भर दादूजी को उस पर बैठा दिया और शिष्यों को दादूजी की पीठ के पीछे तखत पर खड़े कर दिया। वह तखत पृथ्वी को स्पर्श नही कर रहा था। बादशाह के सन्मुख अधर आकाश में स्थित

सबको दूसरे सूर्य के समान भास रहा था।
ओर कहा भी है-

नूर ही के तखत रू पाये जाके नूर ही के।
नूर ही के दादूदास नूर मन भाव ही।।
नूर ही के गुणीजन गावत गुणनुवाद।
नूर ही की सभाकर जोरि शीश नाव ही।।
धरनी आकाश नांही देखे सो अधर मांही।
नूर को दीदार किये पाप ताप जावही।।
राघो कहै ताकि छवि मानो उदै कोटि रवि।
तखत की शोभा कछु कहत न आवही।।

अर्थात् - तेजोमय प्रकाश का ही तखत, तेजोमय प्रकाश के ही पाये, दादूदास भी तेजोमय प्रकाशमय, मन के भाव भी तेजोमय प्रकाशमय, गुणानुवाद गाने वाले भी प्रकाशमय, और सभा भी प्रकाशमय हाथ जोड़कर शिर झुका रहे हैं। जमीन और आसमान में उसका कोई आधार नही है। प्रकाश के दर्शन से पाप ताप नष्ट हो गये हैं। राघवदास जी कहते हैं कि उस तेजोमय प्रकाश की तखत की ऐसी सुन्दर शोभा है जैसे करोड़ों सूर्य उदय हुये हों। उस शोभा का वर्णन नही किया जा सकता है।

भूमि और आकाश के बीच दिव्य आसन को देखकर सभी दरबारी खड़े हो गये। बादशाह अकबर इस अद्भूत लीला को देखकर स्तम्भित रह गया और दिव्यासन के तेज से डरने लगा। वह अपना सिंहासन छोड़कर, हाथ जोड़े हुये भूमि पर गिर पड़ा, तथा प्रार्थना करने लगा- करामात कहर ;भयंकरद्ध है भारी। हे दादू दयाल! मैं आपकी गति नही पहचान सका, आप तो साहिब जैसी समर्थाई धारण करने वाले हैं। हे सन्त! दया करके मुझे उबारो, अब अपना कोप शान्त करो। यह सारी करतूत इन दुष्ट काजी मुल्लाओं की है, जिन्होंने आपका आसन छिपा दिया। ये कुटिलमति आप जैसे सि(-सन्तों की सुखदायक क्षमता भला कैसे जान

सकते हैं? काजी मुल्लाओं ने भयभीत होकर कहा- हम मुरीद तुम पीर हमारे। फिर अकबर ने कहा-

दादू नूर अलाह है, दादू नूर खुदाय।
दादू मेरा पीर है, कहे अकबर शाह।।

अकबर ने कहा कि दादूजी अल्लाह खुदा का नूर ;स्वरूपद्ध हैं और मेरे गुरू हैं।

तब तेजोमय तखत की लीला समेट कर सन्त श्री दादूजी दरबारी आसन पर देदीप्यमान हुये। सभी सभासद सन्त का गुणगान करने लगे।

अकबर के चार प्रश्नों के उत्तर

11वें दिन अकबर ने दादूजी से प्रश्न किया कि अब आप मुझे बताइये कि ईश्वर की जाति क्या है? ईश्वर को प्रिय क्या है? ईश्वर का शरीर क्या है? और ईश्वर का रंग क्या है? इन चार प्रश्नों का उत्तर कृपा करके दीजिये। दादूजी ने कहा-

दादू इश्क अलह की जाति है, इश्क अल्लाह का अंग।
इश्क अल्लाह वजूद है, इश्क अल्लाह का रंग।।42।।

;दादूवाणी - विरह का अंगद्ध

अर्थात्- प्रेम ही ईश्वर की जाति है। प्रेम ही ईश्वर को प्रिय है। प्रेम ही ईश्वर की शरीर है और प्रेम ही ईश्वर का रंग है। दादूजी का यह उत्तर सुनकर अकबर अति प्रसन्न हुआ।

तोता नही लेना

अकबर ने सोचा कि सन्तों की सेवा करनी चाहिये परंतु क्या सेवा करें ये कुछ सेवा स्वीकार नही करते हैं। फिर अकबर को याद आया कि मेरा कुरान सुनाने वाला तोता इनको रूचि कर हो सकता है, यदि उसको ये लेना स्वीकार कर लें तो उसके बहाने से उसका रत्न जड़ित स्वर्ण पींजरा इनकी सेवा में जा सकता है। तोता मंगवाकर बादशाह ने दादूजी को कहा- भगवन्! यह तोता कुरान पढा हुआ है, आप इसे ग्रहण करने की कृपा करें। दादूजी ने कहा-

दादू यह तन पींजरा, मांही मन सूवा।
एक नाम अल्लाह का, पढ़ हाफिज हुआ।।89।।

;दादूवाणी -स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्- हमारा यह शरीर ही पींजरा है और तन में मन है वही तोता है। वह एक परमेश्वर का नाम पढ़कर ही हाफिज ;पण्ड़ितद्ध बन गया है। हमें तुम्हारे ताते की आवश्कता नही है। अपने तोते को आप ही रखें और कुरान सुने।

असद्गुरू संबंधी प्रश्न

17वें दिन अकबर ने दादूजी से पूछा- महाराज असदगुरू किसे कहते है? तब दादूजी ने कहा-

"झूंठे अंधे गुरू घणे, भरम दिढ़ावें काम।
बंधे माया मोह से, दादू मुख में राम।।27।।
झूठे अंधे गुरू घणे, भटके घर-घर बार।
कारज को सीझे नही, दादू माथे मार।।28।।

;दादूवाणी गुरूदेव का अंगद्ध

अर्थात्- कपटी, कामांध, मायिक-मोह-बन्धन से बंधे हुये, केवल लोक दिखावे के लिये मुख से राम राम कहने वाले और अपने स्वार्थ सि(ि के लिये लोगों को

भ्रम में डालकर अपने लौकिक काम कराने वाले अदस्गुरू बहुत मिलते है। थोड़ी बात के लिये मिथ्या बोलने वाले,लोभांध, सांसारिक नाना वस्तुओं की आशा लेकर उनकी याचना के लिये घर-घर के द्वारों पर भटकने वाले गुरू तो बहुत मिलते हैं किन्तु उनमें कोई पारमार्थिक कार्य सि(नही होता
अतः ऐसे गुरू को दूर से ही त्याग देना चाहिये।

सद्गुरू संबन्धि विचार

18वे दिन अकबर ने दादूजी से कहा कि आपने गत दिन असद्गुरू संबंन्धि विचार सुनाये उनको सुनकर मैं असद्गुरू के लक्षण समझ गया हूं। अब सद्गुरू के लक्षण बताने की कृपा करें तब दादूजी ने कहा-

साचा सदगुरू जे मिले, सब साज सँवारै।
दादू नाव चढाय कर ले पार उतारै।।11।।
;दादूवाणी गुरूदेव का अंगद्ध

अर्थात्- यदि सच्चे सद्गुरू मिल जाते हैं, तो वे मन, इन्द्रिय आदि सभी सामग्री को सुधारकर भगवतपरायण कर देते हैं। फिर आत्मज्ञान नौका पर बैठाकर संसार से पार कर देते हैं।

कृष्ण के अनन्त शरीरों संबंधी प्रश्न

अकबर ने कहा- मैंने सुना है कि कृष्ण ने रास के समय जितनी गोपियां थी उतने ही शरीर धारण कर लिये थे। यह क्या बात थी? यह प्रश्न सुनकर दादूजी ने कहा- कृष्ण तो ईश्वर के अवतार थे। उनके बालक होने पर भी अनेक रूप भासना कोई बड़ी बात नही थी। ईश्वर अवतार सर्वसमर्थ होते हैं। अकबर ने कहा- भगवन! कोई प्रत्यक्ष उदाहरण बताइये। दादूजी ने कहा- अच्छा थोड़ी देर के लिए बाग में भ्रमण कर आओ। वहां ये प्रश्न हल हो जाएगा।

दादूजी की आज्ञा से अकबर आमेर नरेश भगवतदास और बीरबल के साथ बाग में गये तो आगे देखा कि वृक्ष के नीचे दादूजी विराज रहे हैं। इस प्रकार उन्होंने प्रत्येक वृक्ष के नीचे दादूजी को देखा तब अति आश्चर्य करते हुये भवन में गये तो वहां भी आसन पर दादूजी को विराजते हुये देखा। यह देखकर अकबर अचम्भित रह गया। तब अकबर ने दादूजी से कहा- हम आपको यहां छोड़कर गये थे और बाग में प्रत्येक वृक्ष के नीचे आपको ध्यानस्थ देखा। यह क्या बात है? दादूजी ने कहा- यह तुम्हारे प्रश्न का प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा उत्तर है।

अन्तशुर्(विचार

21वें दिन अकबर ने दादूजी से प्रार्थना की भगवन्! शरीर की शुर्(तो जल आदि से हो जाती है किन्तु अन्दर की शुर्(कैसे हो इसका उपाय बतायें।
तब दादूजी ने कहा-

दादू मन ही सूं मल ऊपजै, मन ही सूं मल धोइ।
सीख चले गुरू साधु की, तो तू निर्मल होइ।।88।।

;दादूवाणी-गुरूदेव का अंगद्ध

अर्थात् मन में निषि(विषय-वासना उत्पन्न होने से मन सेही पाप उत्पन्न होते हैं और निषि(विषयाशा के त्याग पूर्वक मन द्वारा ब्रह्म-चिन्तन से पाप धोये जाते हैं। यदि तू सद्गुरू और संतो की शिक्षा के अनुसार साधन करेगा तो मन, विक्षेप, आवरण से रहित होकर निर्मल ब्रह्म रूप ही बन जायेगा।

भक्ति भेदों का वर्णन

27वें दिन अकबर ने प्रभु की भक्ति के भेदों के बारे में जानना चाहा। तब दादूजी ने नवधाभक्ति के भेदों के बारे में विस्तृत रूप से जानकारी दी और अन्त में आत्मनिवेदन भक्ति के बारे में कहा-

तन भी तेरा मन भी तेरा, तेरा पिंड प्राण।

सब कुछ तेरा तू है मेरा यह दादू का ज्ञान।।20।।

;दादूवाणी- सुन्दरी का अंगद्ध

अर्थात्- मेरे मन, प्राणदि सूक्ष्म शरीर तथा स्थूल शरीरादि सब आपके ही हैं और आप मेरे हैं, यही मेरा ज्ञान है।

श्रा(संबंन्धि विचार

29वें दिन अकबर ने दादूजी से कहा-भगवन्! आपने कहा है कि जीवित रहते हुये ही मुक्ति हो जाती है, किन्तु अन्य सब हिन्दु तो मरने के पश्चात् श्रा(करने से मुक्ति मानते हैं इस संबंन्ध में आपका क्या विचार है। तब दादूजी ने कहा-

जीवित पद पाया नही, जीवित मिले न जाइ।
जीवित जे छूटे नही, दादू गये विलाई।।38।।
दादू छूटे जीवतां, मुवाँ छूटे नांहि।
मूवाँ पीछे छूटिये, तो सब आये उस माहि।।39।।
मूवाँ पीछे मुक्ति बतावैं, मूवां पीछे मेला।
मूवाँ पीछे अमर अभय पद, दादू भूले गहला।।40।।
मूवाँ पीछे वैकुँठ वासा, मूवाँ स्वर्ग पठावै।
मूवाँ पीछे मुक्ति बतावैं, दादू जब बोरावै।।4।।
मूवाँ पीछे पद पहूंचावै, मूवाँ पीछे तारै।
मूवाँ पीछे सद्गति होवे, दादू जीवित मारै।।42।।
मूवाँ पीछे भक्ति बतावें, मूवाँ पीछे सेवा।
मूवाँ पीछे संयम राखै, दादू दोजख देवा।।43।।

;दादूवाणी-संजीवनी का अंगद्ध

अर्थात्- जो जीते जी ज्ञानी का पद प्राप्त कर, कर्म बन्धन से मुक्त हो, निर्विकल्प रूप सहजावस्था में जाकर अभेद रूप से परब्रह्म में नही मिले वे चौरासी लक्ष

योनियों में ही विलीन हुये हैं। भव बन्धन से जीवितावस्था में ही छूटता है, मरने के पश्चात् नही यदि मरने के पश्चात् मुक्ति हो जाती हो तो मरने पर सभी उस ब्रह्म में मिल जाने चाहिये। किन्तु ऐसा नही होता। मरने के पश्चात् गया आदि तीर्थों में श्रा(ादि करने से पापों से मुक्त होकर, अमर अभय पद के मिलने की बात कहते हैं, वे विषयों में उनमत्त होने के कारण वास्तविक तत्व को भूले हुये हैं। मरने के पीछे किये गये श्रा(, यज्ञ, दानादि धर्म द्वारा बैकुण्ठ, स्वर्ग और मुक्ति प्राप्त कराने की बात कहते हैं, वे जगत् के अज्ञानी प्राणियों को बहकाते ही हैं। अज्ञानी प्राणी जीते जी तो अपने पिता को दंडो से मारते हैं और मरने के पीछे श्रा(ादि द्वारा पापों से उ(ार करके श्रेष्ठ पद को पहुँचाने का यत्न करते हैं और पुरोहित से कहते हैं- हमारे पिता की सद्गति हो, वैसा ही कर्म कराइये। मरने के पीछे लोगों को श्रा(ादि द्वारा पिता की भक्ति बताते हुये पिता के कल्याणार्थ द्रव्य खर्च रूप सेवा करते हैं।और नियत समय तक स्वंय भी संयम से रहते हैं किन्तु जीते जी पिता की आज्ञानुसार कार्य न करके अपने हठ से पिता को पापों में पटकरने से उसे तो नरक यातना देने वाली ही हैं।

मुक्ति संबंन्धि विचार

31वें दिन अकबर ने दादूजी से पूछा स्वामी! हिन्दुओं मे तीर्थ स्थानों पर जाकर लोग अनेक यज्ञादि अनेक सत्कार्य करते हैं उनका क्या फल होता है। फिर दादूजी ने कहा हिंसा रहित निष्काम भाव से जो शुभ कर्म किये जाते है उन पुण्य कर्मो से अन्तःकरण शु(होता है। अतः उनका फल तो अच्छा ही है और उनसे तो प्राणी का भला ही होता है और यह निश्चत ही है कि कर्म से कर्म नही कटते हैं जैसा कीचड़ से कीचड़ नही धुलता है। यह सुनकर अकबर ने दादूजी से कहा–भगवन्! हिन्दुओं के शास्त्रों में प्रसि(है कि काशी में मरने से मुक्ति होती है। आप कृपया यह रहस्य समझाने की कृपा करें। तब दादूजी ने कहा–

दादू केई दौड़े द्वारिका, केई काशी जाँहि।

केई मथुरा को चले, साहिब घट ही मांही।।8।।
दादू सब घट मांहि रम रह्या, विरला बूझे कोइ।
सोई बूझे राम को, जे राम सनेही होई।।9।।

;दादूवाणी–कस्तुरिया मृग का अंगद्ध

अर्थात्– ईश्वर दर्शनार्थ कितने ही दौड़े–दौड़े द्वारिका, कितने ही काशी और कितने ही मथुरा को जा रहे है किन्तु परमात्मा तो अपने अन्तःकरण में ही है। राम सभी शरीरों में दूध में घृत के समान रमा हुआ है किन्तु उसे इस प्रकार कोई विरला ही समझता है। जो राम का प्यारा है वही राम को यथार्थ रूप से समझता है।

ब्रह्मधाम का परिचय

32वें दिन अकबर ने दादूजी से कहा– भगवन्! हिन्दुओं के सभी देवताओं के लोक बताये गये है। जैसे कि विष्णु का बैकुण्ठलोक, शिव का कैलाश लोक वैसे ही आप भी परमात्मा स्वरूप ही है अतः आपका भी कोई लोकविशेष होगा। इस लोक में तो आप जीवों के उ(ार के निमित्त ही पधारे है और अपना कार्य पूर्ण करके चले जायेंगे। अतः आप बताने की कृपा करें कि आपका आदि स्थान कौन सा है। अकबर का यह प्रश्न सुनकर दादूजी बोले– हम ब्रह्मरूप देश में बसते है। जहां)तुभेद भी नही है अर्थात्)तु नही बदलती है। सदा एक रस रहता है। वही हमारा देश है। अपने आदि स्थान का परिचय देते हुये दादूजी ने कहा–

चलु दादू तहँ जाइये, जहँ मरे ने जीवे कोइ।
आवागमन भय को नही, सदा एक रस होइ।।18।।
चलु दादू तहँ जाइये, जहँ चंद सूर नहिं जाइ।
रात दिवस की गम नही, सहजैं रह्या समाइ।।19।।

;दादूवाणी–मध्य का अंगद्ध

अर्थात्- निर्विकल्प समाधि भूमि में एक ब्रह्म रूप देश है। उस में जन्म-मरण और लोकान्तरों में जाने आने आदि का कोई भी प्रकार का भय नही है। वहां जो जाता है वह भी सदा एक रस रूप होकर ही रहता है। अतः मध्य निष्पक्ष मार्ग द्वारा चलकर वहां ही जाना चाहियें जहां इस देश के चन्द्र, सूर्य, वा इड़ा पिंगला हमारे रात्रि दिन वा ज्ञान अज्ञान आदि नही जा सकते। मध्य निष्पक्ष मार्ग द्वारा चलकर उस ब्रह्म देश में जाना चाहिये। जो भी वहां गया है, वह अनायास, उसी में समाकर उसी का रूप होकर रहा है।

अकबर का वर मांगना

36वें दिन अकबर ने दादूजी से कहा-स्वामिन्! आप तो दिन रात ईश्वर की भक्ति करते हो और आप सर्व समर्थ हो और मेरी आपके उपर पूर्ण श्र(ा है अतः आप मुझे कुछ तो आशीर्वाद देने की कृपा करें। तब दादूजी ने कहा मेरा विचार तो यह है-

दादू सहजैं सहजै होइगा, जे कुछ रचिया राम।
काहे को कलपे मरे, दुखी होत बे काम।।2।।
सांई किया सो है रह्या, जे कुछ करे सो होई।
कर्त्ता करे सो होत है, काहे कलपे कोई।।3।।

;दादूवाणी-विश्वास का अंगद्ध

अर्थात्- हमारे कर्मो के अनुसार भगवान ने जो कुछ विधान बनाया है, वही शनैःशनैः हमारे सामने आता है। अतः प्रतिकूलता आने पर क्यों नाना कल्पना से व्याकुल होकर निष्प्रयोजन दुखी होते हो। कर्मानुसार भगवान् ने जो विधान किया है वही हो रहा है, आगे भी जो कुछ करेंगे वही होगा। भगवान् जो करते है वही होता है फिर क्यों कोई दुखी होता है।

अकबर के पूर्व जन्म का वृतान्त

37वें दिन सूर्योदय होने पर अकबर बादशाह सत्संग के लिए दादूजी के पास बाग में गये और शीश नवाकर प्रणाम करके हाथ जोड़े हुये सम्मुख बैठ गये और बोले- स्वामिन्! मेरा कोई पूर्व जन्म का महान् पुण्य होगा, उसी से राज्य, आपके दर्शन और सत्संग प्राप्त हुआ है, किन्तु मेरा जन्म मुसलमान जाति में क्यों हुआ? इसका क्या कारण है? मैं तो समझता हूं। यह कोई मेरे पूर्व जन्म के प्रमाद का ही फल होगा। आप तो सर्वज्ञ समर्थ सन्त हैं, आप से कुछ भी छिपा नही है। अतः आप मेरे पूर्व जन्म का वृतान्त अवश्य बताने की कृपा करें।

अकबर का उक्त प्रश्न सुनकर दादूजी ने कहा- तुम्हारा कथन यथार्थ ही सही है। अच्छे कर्म का फल अच्छा ही होता है और बुरे कर्म का फल बुरा ही होता है पूर्व जन्म में तुम मुकुन्द नामक ब्रह्मचारी थे, प्रयागराज में तपस्या कर रहे थे, उसी तपस्या के प्रभाव से तुमको राज्य और सन्तों के दर्शन तथा सत्संग का लाभ मिला है और मुसलमान होने का कारण यह है कि तपस्या के समय तुम गो का दूध ही पान करते थे। एक दिन आपके शिष्य-गण आपको पिलाने के लिए दूध लाये थे। बिना छाने हुये उस दूध में गो का बाल था। तुमसे वह दूध पीया गया, ध्यान के समय ध्यान न लगा, तब शिष्यों को पूछा तो ज्ञात हुआ, उसमें गो का बाल था, भूल से बिना छाने आपको पिलाया था, उसी से विघ्न हुआ है। तब आपने रूष्ट होकर उनको शाप दिया- 'तुमने मुझे दूध में गो का बाल पिलाया है अतः अगले जन्म में गोभक्षक मुसलमान बनोगे।' शाप देने के पश्चात् शिष्यों ने प्रार्थना की भगवन्! यह तो आपने अच्छा नही किया। हम तो सदा जन्म-जन्म से आपकी ही सेवा करना चाहते थे। आपने यह शाप देकर तो हमको आपकी सेवा से वंचित कर दिया है। तब मुकुन्दजी ने कुछ विचार करके कहा- अच्छा तुम सेवा से वंचित नही हो सकोगे, कारण तुम तो निर्दोष हो, यह मैने अपनी विचार शक्ति से जान लिया है। मेरा भी तुम लोगों में प्रेम है, अतः मेरा भी अगला जन्म उसी जाति में होगा और तुमको सेवा का सौभाग्य मिल जाएगा। फिर तुमने हुमांयू के पुत्र के रूप में जन्म लिया और वे तुम्हारी सेवा करने वालों के रूप में जन्मे। यह सुनकर अकबर ने दादूजी महाराज के चरणों में मस्तक रखकर

प्रणाम किया।

अकबर द्वारा दादूजी के पूर्व जन्म सम्बन्धी प्रश्न

38वें दिन अकबर ने दादूजी से कहा- आपने मुझे मेरे पूर्व जन्म का वृतान्त सुनाया। अब आप मुझे आपके पूर्व जन्म का वृतान्त सुनाइये। दादूजी ने कहा- हम पूर्व जन्म में सनक मुनि थे। श्री हरि की आज्ञानुसार ही हमने यह रूप ध ारण किया है । दादूजी ने अपने पूर्व जन्म का वृतान्त विस्तार से अकबर को सुनाया।

अकबर और दादूजी के मध्य जब भी संवाद होता था उस समय दादूजी के साथ आये सब सन्त उपस्थित रहते थे। सब सन्तों ने दादूजी के पूर्व जन्म का वृतान्त दादूजी के मुख से सुना था। जिस प्रकार सनक मुनि अयोनिज थे उसी प्रकार दादूजी भी अयोनिज थे।

दादूजी के पूर्व जन्म के वृतान्त का विवरण पुस्तक में पहले ही दिया जा चुका है।

सेवार्थ अकबर की प्रार्थना

इस तरह अकबर को दादूजी ने 40 दिन तक उपदेश दिया। अकबर बादशाह ने अनेक विषयों जैसे कि निर्गुण ब्रह्म, व्यसन सम्बन्धी, जिज्ञासु के लक्षण, भक्ति के भेद, गंगा आदि तीर्थों और यज्ञादि कर्मों का फल, मुर्तिपूजा, अखण्ड सेवा भाव, मुक्ति भेद व आदि शब्द औंकार सम्बन्धी अनेकों प्रश्न किये। उक्त प्रश्नों के उत्तर श्री दादूजी से सुनकर अकबर अति प्रसन्न हुआ। अकबर बादशाह ने कहा- भगवन्! अब मैं आपकी कृपा से संशय रहित हूं। आपका अध्यात्म ज्ञान अपार है, आप प्रतिदिन नवीन ही अनुभवपूर्ण उपदेश करते आये हैं।

अकबर ने कहा- स्वामिन्! मेरी एक प्रार्थना है कि आप यहां विराजे आपको यहां क्या कष्ट है? आप आज्ञा दे आपकी आज्ञानुसार स्थान बनवा देता हूं , उसको चलाने के लिए बहुत से गांव भेट कर दूंगा, जिससे सदा सन्तों की सेवा होती रहेगी। अकबर के उक्त वचन सुनकर परम विरक्त सन्त श्री दादूजी महाराज ने कहा- हमें स्थान और गांव आदि कुछ भी नही चाहिये। तुम तो सन्तों की सेवा करो और हमें जाने दो। हमारा शरीर ही हमारा धाम है। यही आत्माराम का ठिकाना है। सब प्राणियों को ज्ञान देना और अभय देना ही हमारा दान है। तुम्हारा धन लेकर हम दान करें ऐसी इच्छा हमको नही होती । अकबर ने कहा- आप स्थायी धन ग्रामादी नही लें तो भी सोना, चांदी, कपड़ा आदि तो ग्रहण करें। दादूजी ने कहा- कपड़ा फटने पर कपड़ा लेते ही हैं । भूख लगने पर अन्न भी उचित रूप से ग्रहण करते ही हैं। सोना, चांदी लेकर तो सन्त क्या करेंगे ? सन्तों का परमधन तो परमेश्वर का भजन ही है। सो वे निरन्तर संग्रह करते ही रहते हैं।

इतने में ही अकबर की दृष्टि दादूजी महाराज की गुदड़ी पर पड़ी। वह एक स्थान पर फटी हुई थी। अकबर ने कहा- यह आपकी गुदड़ी फट गई है, फटने पर तो आप कपड़ा लेते ही हैं। ऐसी गुदड़ी दूसरी बनवा दी जाय। दादूजी ने कहा- गुदड़ी तो अभी चलेगी, जहां-जहां से फटी है वहां इसके उपर ऐसे ही कपड़े की थेंगली लगा दी जायेगी। थेंगली जितना ऐसा ही कपड़ा मगवां दे। अकबर ने बीरबल की ओर देखकर कहा- ऐसा कपड़ा शीघ्र ही मंगवाकर स्वामी जी की गुदड़ी ठीक कराओ। किन्तु यत्न करने पर भी वैसी छींट का कपड़ा सीकरी और आगरा में कही नही मिला। तब दादूजी ने कहा- आप हमारी सेवा करना चाहते हैं तो सर्व प्राणियों पर दया करो, परमात्मा का भजन करो, परोपकार के कार्य करो, यही हमारी सेवा है। अकबर ने दादूजी के लिए हीरा जड़ित एक खड़ाऊं जोड़ी बनवाई थी। वह मंगवाकर प्रार्थना की- यह खड़ाऊं जोड़ी तो आप कृपा करके स्वीकार करें। दादूजी ने खड़ाऊं को देखकर कहा इनके हीरे निकलवा दिये जाएं तब तो इसे हम स्वीकार कर सकते हैं अकबर ने उनमें से हीरे निकलवा दिये। तब दादूजी ने वे खड़ाऊं अकबर से ग्रहण की। खड़ाऊं

ग्रहण करने पर अकबर का मन अति प्रसन्न हुआ।

यह खड़ाऊं आज भी दादू द्वारा आमेर में है।

सीकरी से प्रस्थान

एक दिन बीरबल के यहां ठहरकर और एक दिन आमेर नरेश भगवतदास के यहां ठहरकर उनको सुख प्रदान करके दादूजी ने आमेर नरेश को कहा– कल हम यहां से प्रस्थान कर जायेंगे। तब अकबर बादशाह ने ऐलान करवा दिया कि “कल सूर्योदय होने पर परम सन्त श्रीदादूजी सीकरी से प्रस्थान कर जायेंगे, जिनको दर्शन करना हो वे सूर्योदय के समय नगर से बाहर आगरा के मार्ग पर उपस्थित हो जायें।” उक्त सुचना के अनुसार दादूजी महाराज अपने शिष्यों सहित नगर से बाहर आये तो आगे सभी समाज के सन्तों का समुह मिला। वहां बैठने की व्यवस्था बादशाह ने करवा दी थी। इतने में अकबर, बीरबल आमेर नरेश और अनेक राजा तथा नगर के श्रीमान लोग श्री दादूजी के दर्शन करने आ पहुंचे। और दादूजी को प्रणाम किया और हाथ जोड़कर सामने बैठ गये। अकबर ने कहा– स्वामिन्! अब आप तो पधार ही रहे हैं, सन्त तो स्वतन्त्र होते ही हैं, सन्तों के आगे हमारा कुछ बस नही चलता है। किन्तु आप हम पर तो दया अवश्य रखना।

तब दादूजी ने कहा जब तक आप जीवों पर दया रखेंगे तब तक परमेश्वर भी आप पर दया अवश्य रखेंगे। यह उपदेश सदा याद रखना–

दया धर्म का रूंखडा, सत सौं बधता जाय।
सन्तोष सौं फूले फले, दादू अमर फल खाय।।16।।

;दादू वाणी– बेली का अंगद्ध

अर्थात् – दया रूप धर्म का वृक्ष सत्य पालन द्वारा बढ़ता है, पूर्ण सन्तोष से उसमें भक्ति रूप फूल और ब्रह्मज्ञानरूप फल आता है। जो उस फल को खाता है

वह अमर हो जाता है।

फिर अकबर ने कहा- आपके अमुल्य उपदेश पर ध्यान अवश्य रखा जायेगा। उस समय अकबर के साथ गायक तानसेन व बैजूवाजरा भी थे। तब अकबर दादूजी की प्रशंसा करते हुये तानसेन से कहा-

"वेदन में सामवेद, स्मृति में गीतासार।
पुराणों में भागवत तत्व के समान है।।
देवन में इन्द्रराज तारन में चन्द्र विराज।
वृक्षण में कल्प वृक्ष पशु सिंह जानिये।।
तीरथ में गंगा जैसे सागर में रत्नाकर।
पक्षिन में गरूड़ गुवानुवाद ठानिये।।
कहे शाह अकबर सुनो वीर तानसेन।
सन्तन में ऐसे गुरू दादूजी प्रमानिये"।।

;सन्त गुण सागर सेद्ध

अर्थात्- अकबर बादशाह मियां तानसेन से कहते हैं कि जैसे वेदों में समावेद, स्मृतियों में गीता, पुराणों में भागवत पुराण सार रूप हैं, देवताओं में देवराज इन्द्र तारागण नक्षत्रों में चन्द्रमां, वृक्षों में कल्पवृक्ष, पशुओं में सिंह, तीर्थों में गंगा, सागर में रत्नागर, पक्षियों में गरूड़ मुख्य प्रधान रूप से माने जाते हैं। ऐसे ही संतों में दादूजी श्रेष्ठ हैं।

श्री दादूजी महाराज ने कहा- सज्जनों ! आप सब का कल्याण हो। अब हम जाना चाहते हैं, ऐसा कहकर दादूजी महाराज आसन से उठ खड़े हुये और शिष्यों के सहित आगरा की ओर चल दिये। उस समय सबने 'सत्यराम' बोलकर 'स्वामी श्री दादू दयालु जी की जय हो' इस ध्वनि से आकाश को भर दिया।

षष्टम चरण

मथुरा आगमन

सीकरी से प्रस्थान करने के बाद दादूजी आगरा होते हुये मथुरा पहुँचे। जब मथुरा से एक कोस दूर रहे तब इस आशय से कि नगर में जाने से बहुत भीड़ होगी वहां ही ठहरना चाहते थे। वहां कुछ भक्त भी दर्शनार्थ आए हुये थे। उन लोगों ने वहां सब व्यवस्था कर दी। मथुरा से सन्त और भक्त लोग श्री दादूजी के पास आये। उन्होंने मथुरा की वर्तमान स्थिति का परिचय दिया और बोले- स्वामिन्! मथुरा के मुसलमान शासक ने मथुरा में घोषणा की है कि जो माला धारण करेगा, तिलक लगाएगा उसको मृत्युदण्ड दिया जायेगा। अतः हम आपके पास इसी

उद्देश्य से आये हैं कि आप बादशाह अकबर को 40 दिन तक उपदेश करते रहे हैं वह आपकी बात मान सकता है। सुनने में भी आया है कि अकबर की आप पर अटूट श्र(ा हो गई है। सो आप अकबर को कहकर यह प्रतिबन्ध हटवाने का यत्न करें। भक्त लोगों का उक्त निवेदन सुनकर श्री दादूजी ने कहा– भक्तों! अकबर को बिना कहे भी यह प्रतिबन्ध ा शीघ्र हट जायेगा।

दादूजी का आना सुनकर मथुरा का मुसलमान शासक भी श्री दादूजी के पास आया और प्रणाम करके कहा– स्वामिन्! कोई सेवा की आज्ञा दीजिये। तब श्री दादूजी ने कहा सेवा करेंगे या कहते ही हैं। शासक ने कहा– अवश्य करूंगा। तब दादूजी ने कहा– आपने जो मथुरा में माला तिलक पर प्रतिबन्ध लगाया है, वह हटा लीजिये। शासक ने कहा– वह तो केवल माला तिलक धारण करने वालों की दृढ़ता को देखने के लिये ही लगाया था कि देखुं तो सही माला तिलक को धर्म मानने वाले कितने व्यक्ति धर्म रक्षा के लिए मरने वाले मिलते हैं। इससे आगे इसका अन्य कोई लक्ष्य नही है। यह प्रतिबन्ध तो मैं अभी ही हटा दूंगा। आप तो कोई अन्य सेवा बताइये। दादूजी ने कहा– अन्य कोई आवश्यकता नही है, सब आनन्द है। फिर उस मथुरा के शासक ने माला तिलक पर प्रतिबन्ध हटा दिया, फिर पूर्ववत स्वतन्त्रता से माला तिलक सब धारण करने लग गये थे।

दादूराम मन्त्र का प्रवचलन

दादूजी जब करोली राज्य के उदेही ग्राम के पास आये तब ग्राम के बाहर बालक खेल रहे थे। दादूजी जब शिष्यों सहित उन बालको के पास पहुंचे तब तत्काल ही हरि उन बालकों में बालक रूप में प्रकट हो गये और बालकों को बोले अरे! दादूजी आये हैं, सब 'दादू-दादू' बोलो। बालरूप हरि की प्रेरणा से सब बालक 'दादू-दादू' बोलने लगे। उनके साथ बालक रूप हरि भी बोलते थे। बालकों का समूह 'दादू-दादू' बोलते हुये नाचने लगा। इस प्रकार बालकों का बोलना सुनकर दादूजी के शिष्यों को भी अति आश्चर्य हुआ कि इन बालकों को दादू नाम किसने बताया। फिर दादूजी ने कहा– 'राम-राम' बोलो। बालक 'राम-राम' बोलने लगे। फिर बालक रूप धारी राम ने कहा– जोर-जोर से 'दादू-दादू' बोलो,

तब बालक 'दादू-दादू' बोलने लगे। इस प्रकार विवाद चल पड़ा। दादूजी की बात बालकों ने नही मानी तब हार कर दादूजी ने ध्यान द्वारा देखा तो स्वंय हरि ही बालक रूप में बोलकों को प्रेरणा कर रहे थे। फिर दादूजी ने विचार करके प्रभु से प्रार्थना की प्रभो! अकेला 'दादू-दादू' बोलना तो मेरे को रूचिकर नही है। तब हरि ने कहा- अच्छा प्रथम तुम्हारा नाम फिर हमारा नाम रहेगा। ऐसा कहकर बालकों में स्थित बालक रूप हरि बोलने लगे- 'दादूराम' दादूराम, दादूराम'। उस समय से 'दादूराम' मन्त्र प्रचलित हुआ। 'दादूराम' मन्त्र को प्रचलित करके हरि बालकों में ही अन्तर्ध्यान हो गये। हरि को ऐसा करना ही रूचिकर था। इसलिये उन्होंने ऐसा किया था। फिर जैसे 'लक्ष्मीनारायण', 'सीताराम', 'राधेश्याम' आदि मंत्र हैं, वैसे ही 'दादूराम' मन्त्र प्रचलित हो गया, कारण- भगवान को भक्त को नाम प्रिय लगता है, इसी से भगवान् ने अपने को प्रिय लगने वाले नाम का स्वंय ने ही प्रचार किया । फिर करोली राज्य में 'दादूराम' मंत्र अति शीघ्र फैल गया।

करोली नरेश को उपदेश

करोली नरेश को दादू दर्शन की अभिलाषा हुई और वह दादूजी के दर्शन करने गया। साष्टांग प्रणाम करके बैठ गया। और उसने दादूजी से कहा कि प्रभु उपासना का मुझे रास्ता बताइये। दादूजी ने कहा- तुम तो देवी की उपासना करते हो और उसको बकरों की बलि चढ़ाकर यह समझते हो कि देवी तुमको सुख प्रदान करेगी, किन्तु इसके विपरीत बकरे तुमसे बदला लेंगे और देवी भी उसके बकरे रूपी पुत्रों के मारने से रूष्ट ही होंगी। वह तो जगत जननी है, वह जैसे तुम्हारी माता है वैसे ही बकरों की भी माता है। करोली नरेश ने कहा- स्वामी जी आप मुझे दीक्षा दीजिये। दादूजी ने कहा- हम आपको दीक्षा तो देंगे किन्तु हमारी साधन प(ति आप कैसे अपनाओगे? आप तो मदिरापान करते हैं और मांस खाते हैं। करोली नरेश ने कहा-स्वामिन्! यह सब आज मैं आपके सम्मुख ही त्याग कर रहा हूं। फिर दादूजी ने उसको दीक्षा दी। करोली से प्रस्थान करके दादूजी हिन्दौण पहुंचे। वहां चरणदास और मोहनजी दरियाई दादूजी के शिष्य बने जो 52 शिष्यों में है।

हिन्दौण से चलकर दादूजी आलोदा ग्राम पहुंचे।
आलोदा के सौंक्या गोत्र के खण्डेलवाल वैश्य लाखा व नरहरि दादूजी के सौ शिष्यों में है।

जलेबी प्रसाद वितरण

आलोदा से प्रस्थान करने के बाद श्री दादूजी अपने शिष्य सन्तों के सहित दौसा नगर पहुंचे। सन्तों का विचार था किसी स्थान पर बैठ कर दैनिक साधना करें। बाजार से ये सन्त निकले तो किसी ने भी इनको 'राम-राम' बोल कर प्रणाम नही किया और जहां भी ठहरने का विचार करते वहां के लोग कहते- आगे जाओ, आगे जाओ। इस प्रकार से सन्त लोग नगर के इस ओर से प्रवेश करके दूसरी ओर आ गये। बाहर निकल कर एक व्यक्ति से पूछा- भैया! यहां कोई तालाब है क्या? उसने कहा- है, इसी मार्ग से आगे चले जाइये। सब सन्त उस मार्ग से आगे चल दिये। कुछ दूर जाने पर एक तालाब आया। तब श्री दादूजी ने कहा- सन्तों! अब स्नान कर लो। दादूजी का उक्त वचन सुनकर जग्गाजी ने सहज विनोद भाव से कह दिया कि क्या नहाते ही सन्तो को जलेबी जिमायेगें? तब दादूजी ने यह समझकर की सन्त भूखे हैं, मुस्कुराकर कहा- सन्तों का मनोरथ तो ईश्वर ही पूरा कर सकते हैं। श्री दादूजी हरि स्मरण में लीन हो गये और प्रार्थना की- हे प्रभो ! सन्तों को जलेबी का प्रसाद जिमाओ। सब सन्त तालाब में स्नान करने चले गये और श्री हरि की प्रेरणा से उसी समय पत्तलों में गरम-गरम जलेबी तैरती हुई सन्तों के पास आई।

जलेबियां अद्भूत रस से युक्त थी । सब सन्तों के तृप्त होने पर भी जलेबियां बहुत मच गई। तब दादूजी ने पत्तल को पुनः सरोवर में छोड़ दिया।

दौसा ग्राम के परमानन्द चौखा महाजन ने पांच दिनों तक सन्त सेवा की। दादूजी ने परमानन्द चौखा को पुत्र होने का वरदान दिया और कहा कि वह छोटी अवस्था

से ही विरक्त हो जायेगा और प्रसि(सन्त होगा।

नागर और निजाम को सि(पात्र देना

दादूजी दौसा से वसी ग्राम पहुंचे। वहां शिष्यों सहित वसी के तालाब पर विराज रहे थे। एक दिन दो यात्री वहां आए । उनमें एक गुजराती नागर ब्राह्मण था और दूसरा मुलतान निवासी निजाम नामक मुसलमान था। दोनों यात्री सायंकाल तालाब पर ही ठहर गये थे और आपस में बातें करते करते निद्रा के वस हो गये। सूर्योदय होने पर जब वे नही उठे तब दादूजी ने एक पद गाया। इस पद को सुनकर वे जाग गये और दादूजी को प्रणाम करके सामने बैठ गये। दोनो ने कहा- आपकी साधना तो लोगों से दूर रह कर ही हो सकती है। पर भोजन की व्यवस्था कैसे चले? फिर दादूजी ने उनको एक सि(पात्र देकर कहा- आप दोनों टहटडे ग्राम में जाकर साधना करो। इस पात्र को सफेद वस्त्र से ढक कर रखना। जब भी तुम भोजन चाहोगे इस पात्र से तुम्हारी इच्छानुसार सात्विक भोजन मिल जाया करेगा। यह पात्र टहटड़े में ही भोजन देगा अन्य स्थान में नही देगा। भजन नही करोगे तो भी भोजन नही देगा। भोजन करके पात्र को उल्टा रख दिया करना।

ये दोनो दादूजी को 52 शिष्यों में माने गये हैं।

आमेर के योगी को उड़ाना

इसके पश्चात् आंधी ग्राम होते हुये स्वामी जी अपने शिष्यों के साथ मार्ग में लोगों को ज्ञानोपदेश देते हुये आमेर पहुंचे। श्री दादूजी टीलाजी के साथ भ्रमण करके आश्रम को आ रह थे। मार्ग के पास एक शिला पर सन्तोषनाथ नामक एक नाथयोगी बैठा था। नाथयोगी ने ईर्ष्या से प्रेरित होकर श्री दादूजी को अपमानजनक शब्द कहे। शिष्य टीला जी से यह शब्द सहन नही हुये। उन्होने नाथयोगी को शिला सहित उठाकर आकाश में उड़ा दिया। इससे त्रस्त होकर वह करूण पुकार करने लगा। तब श्री दादूजी ने टीलाजी से कहा- यह मतिहीन है,

इसे माफ कर दो। तब टीलाजी ने उसे धरती पर उतार दिया और वह दौड़कर श्री दादूजी के चरणों में माफी मांगने लगा।

एक तुर्क को निर्गुण ब्रह्म भक्ति का उपदेश

एक दिन आमेर के एक मुसलमान ने दादूजी की परीक्षा लेने का विचार किया कि वास्तव में दादूजी सच्चे प्रभु के प्यारे सन्त हैं या अन्य भेषधारियों के समान ही एक साधु हैं। फिर उसने परीक्षा करने के लिए गो मांस बनाकर एक पात्र में डालकर उस पात्र का मुख एक अच्छे श्वेत कपड़े से बांध दिया। और वह उस पात्र को साथ लेकर दादूजी के दर्शन करने गया। दादूजी तो महान् योगेश्वर थे, उनके कपट को जान गये। उसे अन्य कुछ भी नही कहकर दादूजी ने उससे पूछा- इसमें क्या है? तुर्क ने कहा- प्रसाद है। तब दादूजी ने कहा- फिर इसका मुख तुम ही खोलकर इस पर से कपड़ा हटा दो। उसने पात्र का मुख खोलकर कपड़ा हटाया तो उसमें घृत शक्कर मिले हुये चावल थे। तब वह तुर्क उन चावलों को देखकर आश्चर्य में पड़ गया और अति लज्जित होकर मन में मान गया कि दादूजी तो वास्तव में प्रभु के प्यारे सन्त ही हैं। उनमें कुछ भी कमी नही है। यह तो मेरी मूर्खता के कारण मुझे भ्रम हो रहा था। किन्तु आज वह भ्रम नष्ट हो गया है। यह भी इन महान् सन्त दादूजी की कृपा का ही फल है। फिर सबने उस पात्र में घृत शक्कर मिले हुये चावल देखे। दादूजी ने उस तुर्क की ओर देखकर कहा- आप ऐसे कर्म करके भी अपनी भलाई चाहते हैं? ऐसे कर्म का फल तो निश्चित नरक ही मिलता है। यह सुनकर वह तुर्क अत्यन्त लज्जित होकर पश्चात्ताप करते हुये दादूजी के चरणों में क्षमा मांगने लगा। तब पास बैठ हुये सत्संगियों ने उससे पूछा- आपने क्या बुराई की है? जो इतने अधीर हो रहे हो। तब उसने कहा- मैं दादूजी की परीक्षा करने के लिये इस पात्र में गो मांस बनाकर लाया था किन्तु दादूजी महाराज के आगे वह गो मांस नही रहकर इस पात्र में घी शक्कर मिले हुये चावल मिले हैं। यह आप लोग भी प्रत्यक्ष देख रहे है। उसी के लिये दादूजी महाराज मुझे कह रहे हैं कि ऐसे कर्म करने से तो नरक ही मिलता है। मैं दादूजी के उक्त वचन को सत्य मानकर

क्षमा याचना कर रहा हूं।

माधवदासजी द्वारा ज्वार भेंट

दादूजी महाराज आमेर में विराज रहे थे। उन्ही दिनों माधवदासजी डहरे ग्राम गये हुये थे। वहां एक भक्त माधवदासजी के लिये अपने खेत की हरी नूतन दूधिया ज्वार लाया था। उसे देखकर माधवदास जी के मन में विचार हुआ- यह नूतन अन्न है। नवीन अन्न गुरूदेव को जिमाकर ही जीमना चाहिये। इसी आशय से माधवदासजी ने वह ज्वार अपनी योगशक्ति से दादूजी के पास आमेर भेज दी। वह ज्वार आमेर में आई तब सत्संग हो रहा था। अकस्मात् दादूजी के सन्मुख हरी ज्वार प्रकट हुई देखकर सत्संगियों को अति आश्चर्य हुआ कि यह दूधिया ज्वार सहसा कहां से आई है? किसी को ज्वार लाकर रखते भी नही देखा है। फिर टीलाजी ने पूछा- भगवन्! यह हरी दूधिया जवार कहां से आई है और कैसे आई है ? कोई लाने वाला तो दिखाई दिया नही । तब दादूजी ने कहा- माध ावदास ने डहरे ग्राम से अति भाव-प्रेम से भेजी हैं फिर उस ज्वार से कुछ दाने दादूजी महाराज ने प्रभु के भोग लगाकर पाये और पास बैठे हुये सन्त तथा सत्संगियों को भी प्रसाद दिया। फिर दादूजी ने शेष ज्वार को प्रसादरूप में पुनः डहरे ग्राम माधवदास के पास अपनी योगशक्ति से भेज दिया। डहरे ग्राम में माध ावदासजी के पास भी कुछ भक्त उस समय बैठे थे, जब ज्वार वहां पहुंची। माध ावदासजी के सन्मुख भी जब अकस्मात् ज्वार प्रकट हुई तो उन भक्तों ने आश्चर्य युक्त होकर पूछा- यह ज्वार कहां से आई? तब माधवदासजी ने सब वृतांत ज्यों का त्यों सुना दिया और स्वयं ने प्रसाद लेकर सबको प्रसाद दिया।

जहाज सन्तारण

श्री दादूजी के आमेर धाम में विराजने और तपने की प्रसिद्(िध चारो दिशाओं में फैल गई थी। नित्य सत्संग सभा में वहां के गणमान्य व्यक्ति, सन्त और वहां की जनता आती रहती थी। एक दिन आमेर नरेश ज्ञान चर्चा सुन रहे थे। अकस्मात्

ही दादूजी के चोले की बांह से पानी गिरा, उसे देखकर आमेर नरेश आदि जो वहां बैठे थे सब को अति आश्चर्य हुआ कि यह क्या लीला है?

पानी तो यहां पास में भी नही था। तब आमेर नरेश ने श्री दादूजी से कहा- भगवन्! यह पानी आपके चोले की बांह में कहां से आया? इसका यथार्थ रहस्य हमें समझाने की कृपा करें। तब दादूजी ने कहा- समुद्र में एक व्यापारियों का जहाज डूब रहा था। उस जहाज में सात सौ साहुकार और सात कोटि का धन माल भरा हुआ था। जब जहाज डूबने लगा तो सभी अपने-अपने ईष्ट देवता को पुकारने लगे। नाविक उसे बचाने का प्रयास करते-करते थक गये। धीरे-धीरे वह जहाज समुद्र के जल में समाने लगा। डूबने के भय से त्रस्त उनके दुःख का पार नही था। हिगोंलगिरी और कपिल मुनि नामक दो सन्त भी उस जहाज में बैठे थे। उन्होंने कहा- हम सब मिलकर श्री दादूजी को पुकारें, वे ही इस पारावार से पार कर सकते हैं। तब साहूकारों ने संकल्प किया कि- यदि इस पारावार से हमारा उ(ार हो जायेगा तो हम अपनी आधी द्रव्य सम्पति धमार्थ अर्पण कर देंगे। हम तनमन-धन के साथ श्री दादूजी की शरण है। फिर जहाज की छत पर चढ़कर करूणा से पुकारने लगे- हे दयालु सन्त! उबारिये, हमारी सहायता कीजिये, हम आपके शरणागत हैं। उनकी प्रार्थना सुनकर मैंने प्रभुसे प्रार्थना की कि हे प्रभो! इस जहाज को बचाइये । और सत्संग कथा के मध्य में ही शीघ्रता से अपनी भुजा पसारकर जहाज को डूबने से बचा लिया। इस प्रयास में श्री दादूजी की भुजा समुद्री जल से भीग गई। यह जल समुद्र का ही है। तुम इसे चखकर देख सकते हों फिर राजा ने स्वंय स्वामीजी के चोले की बांह निचोड़कर जल चखा तो वह समुद्र का ही था।

हिंगोलगिरी और कपिल मुनि का आमेर आना

वे जहाज के व्यापारी गुजरात प्रदेश के देवनगर के थे। देवनगर आने पर अपने संकल्प के अनुसार उन्होंने आधी द्रव्य सम्पति को सन्त सेवा में अर्पण करने के लिये सन्तों के साथ अपने मुनीम भेजे और कहा- यह धन दादूजी महाराज को

भेंट करना और कहना, आपकी कृपा से सात सौ मनुष्यों के प्राण बचे हैं और सात कोटि का माल बचा है। यह आपकी भेंट है, आप ही का धन है। इसलिये इसे आप ग्रहण करने की कृपा अवश्य करें। फिर वे दोनों सन्त और मुनीम लोग गुजरात से राजस्थान के आमेर नगर में पधारे। दादूजी को पता पूछकर उनके आश्रम में गये। दादूजी का दर्शन करके अति हर्षित हुये । हिंगोल और कपिल ने सम्पूर्ण भेंट सन्त चरणों में रखी, शीश निवाया और जहाज उबारने की सारी घटना का वृतान्त सुनाया। सुनकर सभी को आश्चर्य हुआ। त्यागी सन्त श्री दादूजी ने भेंट में अर्पित द्रव्य सामग्री में से किसी को भी नही छुआ। सभी द्रव्य सामग्री विप्र साधुओं में वितरित कर दी गई । नगरवासियों के कल्याणार्थ अर्पित कर दी गई। ऐसा त्याग देखकर दोनों साधु श्री दादूजी के शिष्य बन गये।

हिंगोलगिरी ने अपना साधन धाम बोकडास में तथा कपिलमुनि ने अपना साध ान धाम गोंदौर में बनाया था।

बीरबल की हिम से रक्षा

एक दिन अकबर बादशाह ने बीरबल को बुलाया और कहा- तुम हिमालय पर्वत पर जाकर, उसका पूर्ण परिचय प्राप्त करो। वह कितना लम्बा है, कितना चौड़ा हे, कितना ऊंचा है, कितना दुर्गम है और कितना हिस्सा सुगम है। इत्यादि सभी बातों का पूरा-पूरा पता लगाकर ही आओ। बादशाह की आज्ञा से बीरबल कुछ मनुष्यों को साथ लेकर तथा अपने सब संघ के निर्वाह के सब साधन लेकर हिमालय पर्वत की ओर चले। फिर वे लोग हिमालय के अनेक भागों में भ्रमण करते हुये जब काश्मीर प्रदेश में आये, वहां की भंभर घाटी में पहुंचे तब किसी ने जोर से किसी प्रकार की ध्वनि कर दी। उस घाटी में ध्वनि नही की जाती है, ध्वनि करने से हिम शिखर गिर जाता है। उस ध्वनि से एक बर्फ का शिखर अकसमात् बीरबल के ऊपर आ पड़ा। तब बीरबल ने सहसा अपने गुरू दादूजी का स्मरण किया। स्मरण करते ही दादूजी अपनी योग शक्ति से बीरबल के पास ही प्रकट हो गये और हाथ पकड़कर बीरबल को बर्फ के शिखर के नीचे से

निकाला। दादूजी के दर्शन करके बीरबल चरणों में पड़ गया और बोला स्वामिन्! आपने मेरी बीसों बार रक्षा की है। आपकी शरण में तो जो भी प्राणी आया है, उसने परमानन्द ही प्राप्त किया है। इतना कहते ही दादूजी अन्तर्ध्यान हो गये।

हिमालय का पूर्ण परिचय प्राप्त करके बीरबल हिमालय से सीधे दादूजी के दर्शन करने आमेर आये और सर्व प्रथम दादू आश्रम में गये । वहां अपने गुरूदेव दादूजी का दर्शन करके अति प्रसन्न हुये। दादूजी को साष्टांग दण्ड़वत करके हाथ जोड़े हुये सामने बैठकर बीरबल बोले- गुरूदेव!आपने ही प्राण दान दिया है। हिमालय की भंभर घाटी में बर्फ के शिखर के नीचे मैं दब गया था, उस समय आपका स्मरण मुझे आया और आपने तत्काल पधार कर मुझे बर्फ के शिखर के नीचे से निकाला। आपने ही मुझे प्राण दिया है। इतने में ही आमेर नरेश मानसिंह दादूजी के दर्शन करने आये और आगे बीरबल को बैठे देखकर अति प्रसन्न हुये और कहा- आपने अपने आने की सूचना क्यों नही दी? बीरबल बोले- सरकारी काम से नही आया हूं, केवल दादूजी के दर्शन करने हिमालय से सीधा यहां आ रहा हूं, और दादूजी ने बर्फ से रक्षा की थी उसका वृतांत मानसिंह को सुनाया ।

टौंक सन्त सम्मेलन

टौंक सन्त सम्मेलन का समय समीप आने से चाटसू ग्राम से दादूजी अपने शिष्यों समेत टौंक ग्राम पधारे। जब टौंक ग्राम में माधवकाणी और नरहरिदास को पता चला कि दादूजी पधार रहे हैं, तब वे बड़ी धूमधाम से सन्त मण्डल तथा भक्त मण्डल के साथ संकीर्तन करते हुये श्री दादूजी के पास पधारे और अति सत्कार पूर्वक प्रणाम आदि करके पूजन किया। फिर अंधेरे बाग में लाये और वहां ठहरा दिया। वहां पर सर्व प्रकार की सुविधा का प्रबंध कर दिया गया। इस सन्त सम्मेलन में अनेक देशों से सन्तों को निमंत्रण देकर बुलाया था। टौंक के सन्त सम्मेलन के समय कथा रज्जब जी करते थे। रज्जब जी का प्रवचन नाना प्रकार के दृष्टांतों के कारण बहुत रोचक बन गया था। रज्जबजी का प्रवचन अति

रोचक बनने का कारण दादूजी का वरदान ही था। एक समय आमेर में एक अच्छे कथा-वाचक आये थे।वे अपने प्रवचन में अति सुंदर दृष्टान्तों का वर्णन करते थे। उनकी कथा सुनने रज्जबजी भी जाया करते थे और रज्जबजी कथा भी करते थे। किन्तु कथा-वाचक के समान इनको दृष्टांत देना नही आता था। एक दिन दादूजी के पास आये तब दादूजी ने उनका मुख उदास देखकर पूछा- उदास क्यों हो? रज्जबजी ने कहा- आजकल यहां एक अच्छा कथा-वाचक आया हुआ है। वह अपनी कथा में सुन्दर व रोचक दृष्टांतों का प्रयोग करता है। उनके समान मुझे दृष्टांत नही आते हैं, इसी चिंता से उदासी है। रज्जबजी की बात सुनकर दादूजी ने रज्जबजी को वरदान दिया- तुम को भी अब से आगे उस कथा- वाचक से भी अच्छे दृष्टांत देना आ जायेगा। यही कारण था कि रज्जबजी का प्रवचन अति सुंदर होता था। टौंक सन्त सम्मेलन में अपने शिष्यों के सहित दादूजी पधारे हैं, यह सुनकर सन्त तथा भक्त लोग बहुत संख्या में वहां आ गये।

भोजन सामग्री अपार होना

अधिक संख्या में भक्त आ जाने के कारण माधवकाणी दादूजी के पास आये और कहा- भगवन्! जनसमुदाय को देखते हुये भोजन सामग्री अति अल्प दिखाई देती है और किसी भी प्रकार से पंक्ति के समय तक इतनी सामग्री तैयार करने में मैं असमर्थ हूं। माधवकाणी का वचन सुनकर दादूजी ने कहा- चिन्ता मत करो, आपने जो जो भोजन सामग्री बनाई है उसमें से थोड़ी-थोड़ी सब प्रकार की एक थाल में रखकर ऊपर एक शु(श्वेत वस्त्र से ढककर यहां ले आओ। माध ावकाणी ने कहा- 'जो आज्ञा' और भंडारगृह में चले गये। उसी प्रकार सब वस्तुयें थाल में सजाकर दादूजी के पास लाये । दादूजी ने प्रभु से प्रार्थना करके कहा- आप अपने भक्त माधव की लज्जा अवश्य रखिये। भक्तों के लिये तो आप ही कल्पवृक्ष हैं। ऐसी प्रार्थना करके दादूजी ने परिचय भोग लगाया फिर वह भोगरूप प्रसाद माधवकाणी को देकर कहा- यह थाल का प्रसाद आप अपने भण्डारगृह में भोजन की जो-जो वस्तु है उसमें उसी-उसी वस्तु को मिला दें । फिर आप

अपनी ईच्छानुसार खिलायें व बाटें कुछ भी कमी नही आयेगी। दादूजी के द्वारा भोग लगाने के पश्चात् भोग का थाल भोजन में मिला देने के बाद भोजन ही अटूट हो गया। जो पहले एक दिन के लिए भी कम प्रतीत होता था, वही उत्सव के सात दिन तक चलता रहा।

दादूजी के अनन्त शरीर

भोजन राशि अटूट होने का चमत्कार देखकर सम्मेलन में आये हुये सभी सम्प्रदायों के सन्तों ने श्री दादूजी के कर कमलों से प्रसाद लेने की इच्छा प्रकट की। सन्तों ने माधवकाणी से कहा- श्री दादूजी के हाथों से हम सब को प्रसाद दिलाने की व्यावस्था करो।

माधवकाणी ने श्री दादूजी से कहा- स्वामिन्! यहां आये हुये सभी सम्प्रदायों के सन्त आपके कर कमलों से प्रसाद लेने का आग्रह कर रहे हैं, किन्तु आप दे कैसे सकेंगे? दादूजी ने कहा यदि सब सन्त चाहते हैं, तो प्रसाद बांटने मुझे कोई कष्ट नही होगा। चार मुठ्ठी लौंग ले आओ सब के लिए बहुत है। माधवकाणी ने सब सन्तों को कह दिया सत्संग समाप्ति के बाद प्रसाद वितरण होगा। उस समय टीलाजी ने भी दादूजीसे कहा- गुरूदेव ! सभी भेशधारी प्रसाद के लिए आग्रह पूर्वक आगे बढ़ रहे हैं। इतने में ही दादूजी ने अपनी योग शक्ति से अपने अनन्त शरीर बनाकर उसी क्षण में सब के हाथों में अपने हाथों द्वारा लौंग प्रसाद सबको दे दिया।

लोहरवाड़ा का कपटी महन्त

श्री दादूजी ने टौंक महोत्सव में लोहरवाड़े के महन्त का निमन्त्रण स्वीकार किया था। उसको पूरा करने के लिये लोहरवाड़ा पहुंच गये। वहां के कपटी महन्त ने दादूजी को मारने की योजना बना ली थी और दादूजी के आने की प्रतीक्षा ही कर रहा था। दादूजी का आना सुनते ही उस कपटी महन्त ने दादूजी को अपने

स्थान पर धूमधाम से लाने की तैयारी की और ग्राम वालों के साथ दादूजी के सामने आया। दादूजी के पास जाकर उसने ऊपरी मन से शिष्टाचार प्रणामादि सब अच्छी प्रकार किया। धूमधाम से शिष्यों के सहित दादूजी को अपने स्थान पर लाया । स्थान पर आने पर पूजा की, सब जनता को प्रसाद बांटा फिर जब सब लोग चले गये तब हाथ जोड़कर बोला- स्वामिन्! सब सन्तों के लिये तो यह स्थान है ही, किन्तु आपका आसन लगाने के लिये एक एकान्त स्थान का प्रबन्ध ा किया है। अतः आप वहां पधार सकते हैं। उसका कथित स्थान एक कुटिया थी। उसमें दादूजी को मारने के लिये उसने एक खड्ढ़ा खोदकर उस खड्ढ़े में तलवार, कटार आदि शस्त्र इस प्रकार भूमि में गाड़कर खड़े कर दिये उन पर गिरते ही शरीर कटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाय। उस खड्ढ़े के ऊपर एक पलंग, कच्चे सूत के धागे लपेटकर बिछा दिया था। पलंग पर एक सुन्दर श्वेत मलमल की महीन चद्दर बिछा दी थी और उस स्थान को अच्छा सजा दिया था। यह सब कार्य दादूजी के पधारने से पूर्व ही गुप्तरूप से तैयार कर दिया था और सोचा था कि दादूजी इसपर बैठेंगे तो नीचे गिरकर अपने आप ही कट मरेंगे।

किन्तु दूर्जन जैसा सोचे वैसा ही हो जाय, ऐसा नियम नही है। उन परमेश्वर की इच्छा से विपरीत दुर्जनों को सफलता कैसे मिल सकती है। वह कपटी महन्त स्थान का निर्देश करके अपने एक शिष्य को बोला तुम महाराज के साथ जाकर जो कुटिया महाराज के लिये तैयार की गई है, उसमें महाराज का आसन लगवा दो। महन्त ऐसा कहकर अन्यत्र चला गया। दादूजी महाराज का आसन टीलाजी ने उठाया। फिर टीलाजी और दादूजी महाराज दोनों ही उसके साथ गये। कुटिया खोली, दादूजी को पलंग पर कुछ मिट्टी ज्ञात हुई, तब दादूजी ने टीलाजी को कहा- पहले इस पलंग पर डंडा मारकर इसकी मिट्टी उड़ा दो, फिर साफ करके आसन रखना। टीलाजी ने ज्यों ही उस पर डंडा मारा कि कच्चे धागे टूटकर चद्दर खड्ढ़े में शस्त्रों पर जा पड़ी और सब शस्त्र प्रकट रूप में दीखने लगे।

इतने में दादूजी महाराज के अन्य कई शिष्य तथा भक्त दर्शन करने आये हुये थे,

उनमें से कई भक्त वहां पहुंच गये। उन सब ने भी उस षड्यंत्र के प्रकट होने से बड़ी हलचल मच गई। कुछ लोग जो दूदजी के दर्शन सत्संग के लिये आये थे वे उस महन्त की जटायें पकड़कर उसे मारते घसीटते दादूजी के पास ले आये।

तब परम दयालु दादूजी ने उन मारने पीटने वालों को दूर से ही उच्च्व स्वर से कहा- इनको क्यों मारते हो? शीघ्र छोड़ दो। दादूजी का उक्त वचन सुनकर क्रोध ाावेश में आये हुये उन लोगों ने कहा- स्वामी जी! यह महन्त या सन्त नही है, यह तो महान् दंभी और दुष्ट है। आप जैसे सर्वहितैषी सन्तों को मारने का षड्यंत्र करने वाला दुष्ट अवश्य दंड का पात्र है। फिर उन लोगों को दादूजी ने कहा- आप लोग तो सज्जन हैं। यहां सन्तों के दर्शन करने तथा सत्संग करने आये हैं, आपका काम दंड देना नही है। सज्जनों का काम रक्षा करना ही होता है। दंड देना सरकार का काम होता है। आप इनको चोटें नही मारे। दादूजी का उक्त वचन सुनकर उन लोगों ने उनको मारना घसीटना छोड़ दिया और बोले- अच्छा दंड देना सरकार का काम है तो हम इसे सरकार को सौंप देंगे किन्तु छोड़ेंगें नही छोड़ने से तो यह फिर ऐसे अनर्थ करेगा।

गुठले के मार्ग में गोओं का उ(ार

दादूजी ने टौंक ग्राम से नटवारे ग्राम की तरफ प्रस्थान किया। शिष्य तथा बालक भक्तों के साथ दादूजी महाराज हरि चिन्तन करते हुये मार्ग से जा रहे थे। तब एक स्थान में मार्ग के पास ही गोओं का एक विशाल झुंड चरता हुआ मिला। दादूजी जब उस गौ झुंड के पास पहुंचे तब गायों ने उनको चारों ओर से घेर लिया और मंडलाकार खड़ी हो गई। दादूजी ने भी कुछ देर उनके बीच में खड़े रहकर उनको सुख प्रदान किया। फिर जब वे चलने लगे तो गायें भी उनके साथ चलने लगी। जब दादूजी पुनः खड़े हो गये तब गायें भी खड़ी होकर बारंबार सिर नमाकर निर्निमेष दृष्टि से दादूजी का दर्शन करने लगी। इसी प्रकार जब दादूजी चलते तो गायें भी चलने लगती और दादूजी खड़े हो जाते तो गायें भी खड़ी हो जाती

। इतने में ही एक सिंह किसी गाय को पकड़कर खाने की दृष्टि से वहां आ गया। किन्तु दादूजी को देखते ही उसकी गाय मारने की इच्छा नष्ट हो गई और न ही सिंह से वे गायें डरी। सिंह भी गायों के समान मस्तक नमाकर दादूजी के सामने खड़ा हो गया। सिंह और गोओं का यह चरित्र देखकर साथ के सन्त भी आश्चर्य करते हुये परस्पर कहने लगे कि स्वामी दादूजी महाराज ने इन सिंह और गोओं का मन हर लिया है। परमेश्वर जिन पर कृपा करते हैं उन्ही का मन ऐसे महान् सन्तों की ओर खिंचता है। ज्ञात होता हैं कि सिंह और गायें पूर्वजन्म में किसी जन्म के साधक हों और किसी कारणवश विघ्न हो जाने से अन्य योनियों में विचरते हुये सिंह तथा गो की योनि में आये हों और मानों अब इनका विघ्न समाप्त हो रहा हो, ऐसी स्थिति इनकी ज्ञात हो रही है। संभव हैं महान् सन्त दादूजी द्वारा इनका उ(ार होने वाला ही है। दूर खड़े-खड़े सन्त लोग विचार ही रहे थे कि स्वामी दादूजी महाराज ने उन सिंह और गायों पर दया करके एक पद सुनाया।

उपदेश द्वारा ब्रह्म बोध को प्राप्त होकर गायें परम तृप्त सी भासने लगी और नतमस्तक होकर दादूजी महाराज को गायों ने मार्ग दे दिया और सिंह भी वहां से चला गया।

जग्गाजी को भक्त भोजन हित प्रेरणा

आमेर में एक दिन एक भक्त ने दादूजी व उनके शिष्यों को भोजन का निमंत्रण दिया। दादूजी ने उस भक्त का प्रेम-भाव देखकर निमंत्रण स्वीकार कर लिया। फिर जब सब सन्त भोजन करके भक्त के यहां से आश्रम पर जाने लगे तब भक्त ने हाथ जोड़कर दादूजी महाराज को कहा- स्वामिन्! सन्तों ने तो कुछ भी नही खाया, माल तो बहुत बच गया है। तब दादूजी ने कहा- भाई! जिस सन्त की जितनी रूचि थी उसने उतना पा लिया है। शेष बच गया हैं तो और किसी के काम आयेगा। भक्त ने कहा- मैंने तो यह सब सन्तों के ही निमित्त बनाया था। दादूजी ने कहा- नगर में अन्य सन्त भी मिल जायेंगे, उन्हें बुलवाकर जिमा दो। भक्त ने कहा- यह तो आप ही लोगों के निमित्त बनाया गया था और

मैं चाहता हूं आपके सन्तों के ही यह काम आये। तब दादूजी महाराज ने जग्गाजी की ओर देखकर कहा- जग्गाजी! आप भक्त की अभिलाषा पूर्ण कर दो।आपके लिये यह कठिन नही है। यद्यपि आप भी जिम चुके हैं किन्तु फिर भी मुझे विश्वास है कि आप इस भक्त की इच्छा पूर्ण कर सकते हैं। अतः हम सब तो आश्रम को चलते हैं। जग्गाजी ने कहा- आपकी आज्ञा का अक्षरशः पालन करके ही आपके चरणों में आऊंगा। फिर दादूजी और अन्य शिष्य तो आश्रम में पधार गये। उधर जग्गाजी आसन लगाकर बैठ गये ओर बोले- भक्त! तुम्हारे जो कुछ बचा है वह सब कुछ ले आओ, मैं गुरूदेव की कृपा से सब जीम लूंगा। भक्त ने जब सामग्री लाकर रख दी और जग्गाजी ने उसका भोग अति शीघ्र ही लगा लिया अर्थात सब खा गये। तब भक्त अति आश्चर्य में पड़ गया और जग्गाजी को साष्टांग प्रणाम किया।

शिष्य चांदा को भ्रमण से रोकना

आमेर में एक दिन दादूजी ने शिष्य चांदाजी ने दादूजी महाराज से प्रार्थना की भगवन्! मैं आपकी जन्म भूमि गुजरात को देखना चाहता हूं। तब दादूजी महाराज ने कहा- वहां क्या खोजने जा रहे हो? व्यर्थ क्यों कीड़ी मकोडी मारने का विचार कर रहे हो? बाहर भटकने से कुछ लाभ नही है। विशेष बहिर्मुख बनने का विचार छोड़ दो।

उपदेश सुनकर चांदाजी मौन हो गये, कुछ भी नही बोले, किन्तु उनके मन में गुजरात जाने की भावना फिर भी होती रही एक दिन चांदाजी ने अपने एक गुरू भाई सन्त को वही गुजरात जाने की बात कहकर कहा- गुरूदेव ने निषेध कर दिया है फिर भी अभी मेरे मन से गुजरात जाने की बात निकल नही रही है। वह बात उस सन्त ने दादूजी को सुना दी कि चांदाजी की इच्छा गुजरात जाने की मिटी नही है। तब दादूजी महाराज ने ध्यान द्वारा देखा कि यह क्या बात है?मेरे निषेध करने पर भी चांदा को गुजरात जाने की इच्छा होती है। फिर ध्यानावस्था में दादूजी समझ गये कि गुजरात के एक स्थान का अन्न चांदाजी के

निमित्त है और यदि यह गुजरात जायेगा तो कष्ट भी पायेगा। वहां का एक सेर अन्न मंगवाकर इसको यहां खिला देना चाहिये। फिर इसे गुजरात जाने की इच्छा ही नही होगी। फिर उन्ही दिनों में एक सेठ द्वारिका की यात्र करने जा रहे थे। वे दादूजी महाराज के पास द्वारिका जाने को आज्ञा मांगने आये तब दादूजी ने उनको कहा- तुम अमुक स्थान का ऐक सेर गेंहूं हमारे लिये लेकर आना, भूल नही करना। सेठ ने कहा- अवश्य लेकर आऊंगा। आपकी सेवा तो भाग्योदय से ही प्राप्त होती है। आपकी आज्ञा सुनकर मेरा रोम-रोम प्रसन्न हुआ है। आप तो किसी से कुछ सेवा लेते ही नही हैं। यह तो मेरा विशाल भाग्य है कि आपने मुझे आज्ञा दी है। वह सेठ उस स्थान से सेर भर गेहूं ले आया, उनकी रोटी बनवाकर चांदाजी को खिलाई। उसके पश्चात् चांदाजी की गुजरात जाने की इच्छा मन से निकल गई। फिर एक दिन दादूजी महाराज ने चांदाजी से पूछा- गुजरात जाना है क्या? यदि जाना है तो जाओ। तब चांदाजी सर्वथा नट गये। भगवन्! अब मैं नहीं जाऊंगा। मेरी इच्छा मिट गई है।

सिरौंज थाल का प्रसंग

दादूजी महाराज जिन दिनों आमेर में निवास कर रहे थे, उन्ही दिनों में मोहनजी दफतरी विचरते हुये मालवा पधार गये थे। मोहनजी का मालवा में आना सुनकर मालवा देश के सिरौंज नगर के उनके भक्त मालवा में आये और अति प्रेम से सिरौंज पधारने का निमंत्रण दिया। उनका विशेष प्रेम-भाव देखकर मोहनजी दफतरी ने स्वीकार करके कहा- आप लोग अपने ग्राम को चलें, हम भ्रमण करते हुये आप लोगों के यहां आ रहे हैं। सिरौंज में मोहनजी दफतरी के आगमन से सभी भक्तों के मन में उत्साह हो रहा था। सब ही उनके दर्शन और सत्संग का लाभ उठा रहे थे। उन्ही दिनों में मोहनजी दफतरी का जन्म दिन भी आ गया। वहां के भक्त उनके जन्म दिन को जानते थे, इससे उस दिन भक्तों ने विशेरूप से उत्सव मनाया। प्रातः काल विधि विधान से मोहनजी की पूजा की और भोजन में भी बहुत सुन्दर नाना व्यंजन बनाये। उन सब व्यंजनों से भरा एक बड़ा थाल सजाकर मोहनजी दफतरी के लिये लाये। उस थाल को देखकर तथा भक्तों की

प्रीति का विचार करके, मोहनजी दफतरी ने अपने मन में सोचा- यह तो परमेश्वर रूप परम आत्मा स्वामी दादूजी महाराज के योग्य है अर्थात् ऐसा भोजन गुरूदेव को जिमाये बिना अपने को नही जीमना चाहिये। फिर उस समय मोहनजी दफतरी ने दादूजी से प्रार्थना की- स्वामिन्! यह भोजन जीमने की कृपा अवश्य करें। इतनी प्रार्थना ही बहुत है क्योंकि आप तो अन्तर्यामी हैं अतः मेरे मन के भाव आदि जानते ही हैं। उसे आपको बताने की आवश्यकता नही है। फिर अपनी योगशक्ति से थाल को आमेर पहुंचाने की प्रेरणा की। वह थाल सिरौंज से चलकर उसी क्षण आमेर आ गया। इधर आमेर में वह समय दादूजी महाराज के भोजन करने का ही था। दादूजी भोजन करने आसन पर विराज गये थे और टीलाजी ने दादूजी के आगे चौकी लगा दी थी । फिर वे भोजन की थाली लाने ही गये थे। भोजन की थाली लेकर आये तब टीलाजी ने दादूजी के आगे विविध ा व्यंजनों से परिपूर्ण थाल चौकी पर देखकर पूछा- स्वामिन्! यह थाल कौन लाया है, इसके आने की हम लोगों को पहले कोई सूचना नही थी और लाने वाला व्यक्ति भी यहां नही दीख रहा है। इतना शीघ्र थाल रखकर कहां गया है ? टीलाजी की उक्त बातें सुनकर दादूजी महाराज ने कहा-यह यहां;आमेरद्ध से कोई नही लाया है, यह तो मालवा देश के सिरौंज नगर से मोहन दफतरी ने भेजा है। फिर दादूजी महाराज ने परमात्मा के परिचय भोग लगाया फिर स्वंय ने भी उसमें से कुछ पाया वहां आश्रम में जो सन्त तथा भक्त उस समय थे, उन सबको भी प्रसाद दिया।

फिर दादूजी ने पुनः थाल को सिरौंज ही लौटा दिया। वह थाल योगेश्वर की प्रेरणा से उसी क्षण सिरौंज जिस स्थान से आया था वहां ही जाकर स्थित हो गया। इस थाल को जिन भक्तों ने मोहनजी के आगे रखा था। वे भक्त वहां ही बैठे थे। उनके देखते ही देखते भोजन का थाल अदृश्य हो गया था।। फिर जब थाल अपने स्थान पर पुनः दीखने लगा, तब भक्तों ने यह सोचकर कि भोजन का थाल पहले हमने यहां रखा था किन्तु बीच में कुछ समय यहां नही दीख रहा था अब फिर दीखने लगा है। यह क्या बात है ? इसका अति आश्चर्य करके भक्तों ने पूछा- भगवन्! यह थाल कहां गया था और कहां से आया है?

तब मोहन दफतरी ने उनको समझाकर कहा- गुरूदेव दादूजी महाराज आमेर रहते हैं। मैंने उनके लिये आमेर भेजा था, अब यह वहां से ही आया ळहै। मेरी इच्छा थी कि इस भोजन को दादूजी महाराज पावें, सो कृपा करके तुम्हारा भोजन दादूजी ने पाया है और शेष प्रसाद हम लोगों के लिये भेजा है।

असद्गुरू

एक दिन आमेर में दादूजी अपने कुछ शिष्यों के साथ भ्रमण करके आश्रम को आ रहे थे। उस समय चलते चलते ही दादूजी मार्ग में खड़े होकर मार्ग के पास एक चीटियों से घिरे हुये अत्यन्त दुःखित कनखजूरे को देखने लगे और विचार किया यह क्या बात है? ये चीटियां इस जीवित कनखजूरे के ही क्यों चिपट रही हैं? फिर दादूजी ने ध्यान द्वारा देखा तो ज्ञात हुआ कि पूर्व जन्म में यह कनखजूरा इन चीटियों का गुरू था और ये सब चीटियां इसकी शिष्य थी। यह गुरू इन सब शिष्यों से भेंट रूप में धन तो ले लेकर खाता था किन्तु इनके उ(ार की शिक्षा कुछ भी नही देता था और इनसे जो धन लेता था वह अपने दुर्व्यसनों में तथा अनाचार में ही खर्च करता था। उससे पुण्य कार्य कुछ भी नही करता था। अपने उस पूर्व पाप से ही अब यह कनखजूरा बना है और वे सब शिष्य चीटियां बनी हैं, कारण इनके धन के दुरूपयोग और पाप कर्म से इनको चीटियों की योनि में आना पड़ा है। पूर्व जन्म में इस गुरू ने इनका धन खाया था अब ये इनको खा रही थी। दादूजी को कुछ देर वहां खड़े रहने से शिष्यों ने पूछा- स्वामिन्! यह क्या लीला है ? इस साधारण सी बात के लिये आप यहां इतनी देर खड़े रहे और ध्यान द्वारा भी कुछ सोचते रहे। यदि इसका बताना अनुचित नही हो तो हमें भी बताने की कृपा करें। तब दादूजी ने जो ध्यान द्वारा घटना देखी थी वह शिष्यों को सुनाकर उनकी जिज्ञासा पूर्ण की और कहा- असद्गुरूओं की ऐसी ही स्थिति होती है, वे न तो अपना कल्याण कर सकते हैं और न शिष्यों का ही कर सकते हैं।

आंधीग्राम में चर्तुमास

इस प्रकार लगभग तीन वर्ष तक दादूजी ने आमेर में रहकर लोगों को उपदेश दिया। एक दिन आंधीग्राम के भक्तों का आमेर आना हुआ और उन्होंने दादूजी से आंधीग्राम में चर्तुमास करने के लिये प्रार्थना की। दादूजी ने उनके विशेष प्रेम को देखकर उनका निमंत्रण स्वीकार कर लिया और सेवकों के साथ आंधीग्राम पधार गये। आंधीग्राम में दादूजी महाराज के चातुर्मास का कार्यक्रम देवशयनी एकादशी से आरम्भ हो गया। नितप्रति प्रवचन, आरती और हरिनाम संकीर्तन होता था। दादूजी उपदेश करते थे। अति आनन्द के साथ समय व्यतीत हो रहा था।

किन्तु भाद्र्वा मास में वर्षा का अभाव रहा और वर्षा नही होने से खेतियां सूखने लगी, तब किसानों ने बड़ी हलचल मची। कुछ किसान पूर्णदास के पास गये और बोले-भक्तजी वर्षा नही होने से हमारी खेतियां सूखने लग गई हें। इससे हम लोग भारी विपत्ति में पड़ जायेंगे। आपके यहां सि(सन्त दादूजी महाराज चातुर्मास कर रहे हैं। आप पर इनकी अति कृपा है। आप दादूजी से वर्षा कराने में समर्थ हैं । अतः आप दादूजी से वर्षा के लिये प्रार्थना करें तो वे अवश्य आपकी बात मानकर वर्षा करा देंगे। उन लोगों की उक्त सब बातें सुनकर पूर्णदास बोले- आपका कहना तो ठीक ही है, किन्तु हम तो निष्काम भाव से सेवा करते हैं। दादूजी महाराज के आगे किसी भी प्रकार की याचना कर नही सकते। उनके सामने जाते ही हमारी सब इच्छायें शांत हो जाती हैं। कामना की कोई बात कहने की हमारी हिम्मत ही नही होती है। दूसरे, सन्तों की सेवा करके सन्तों से कुछ याचना करना उसका नाम तो सेवा नही हो सकता, वह तो एक प्रकार का व्यापार ही है। एक काम किसी का करके उससे दूसरा अपना काम करवाना, यह कैसी सेवा है ? यह तो सांसारिक व्यवहार है। इसलिये मैं स्वयं तो इस विषय में कुछ भी नही कहूंगा किन्तु आप लागों को एक उपाय बताता हूं। उस आप लोगों की इच्छा अवश्य पूरी हो जायेगी।

उन लोगों ने कहा- हमसे होनी वाली होगी तब तो हम अवश्य करेंगे ही। पूर्णदास

बोले– दादूजी महाराज प्रातःकाल शौच, स्नानादि के लिये बावड़ी पर पधारते हैं और उनके साथ मैं भी रहता हूं। उस समय बावड़ी के बाहर चबूतरे पर बैठकर स्वामीजी दातुन करते हैं। उसी समय तुम अपने घरों के समान को गाड़ियों पर लादकर तथा स्त्री, बाल-बच्चों को साथ लेकर वहां के मार्ग से कोलाहल करते हुये निकलो। तब लोगों का भारी शब्द सुनकर वे आप लोगों की ओर देखेंगे और मेरे से अवश्य पूछेंगे, ये कौन है और कहां जा रहे हैं? तब मैं स्वामीजी को कहूंगा– स्वामिन्! ये सब यहां के ही किसान हैं, वर्षा नही होने से इनकी खेतियां सूखने लगी हैं। इससे ये निराश होकर ये अपने अकाल के दिन निकालने के लिये मालवा को जा रहे हैं। वे परमदयालु तो हैं ही, उनकी दया अवश्य हो जायेगी और उनकी दया होने पर वे अवश्य वर्षा करा देंगे। वे वर्षा का आश्वासन दें, तब तो तुम लोग घर आ जाना ओर नही दें तो मालवा चले जाना। सब किसानों ने भी यह पूर्णदास का सुझाव मान लिया। फिर किसानों ने जाकर वैसी ही अपनी तैयारी रातभर में कर ली।

वर्षा होने का आश्वासन देना

दूसरे दिन प्रातःकाल ही किसान पूर्णदास के कथनानुसार अपना सामान गाड़ियों पर लादे हुये पशु, स्त्री और बाल - बच्चों के साथ कोलाहल करते हुये बावड़ी के पास के मार्ग से निकलने लगे। उनका कोलाहल सुनकर दादूजी महाराज ने दातुन करते हुये ही पास खड़े हुये पूर्णदास से पूछा– पूर्णदास! ये लोग कौन हैं और कहां से जा रहे हैं? तब पूर्णदास ने कहा– भगवन्! ये यहां के ही किसान हैं, वर्षा नही होने से इनकी खेतियां सूखने लगी हैं। इससे निराश होकर स्त्री, बाल-बच्चे तथा पशुओं को लेकर मालवा को जा रहे हैं। वहां अपने अकाल के दिन निकालेंगे और जब अगले चातुर्मास में वर्षा होगी तब आयेंगे। यह सुनकर परमदयालु दादूजी महाराज को दया आ गई। वे पूर्णदास को बोले– तुम जाकर इन लोगों को कहो कि ये लोग अपने-अपने घरों को चले जायें और सर्व समर्थ परमात्मा का स्मरण करें। ईश्वर के कुछ कमी नही हैं, उनकी आज्ञा में 56 कोटि मेघों की माला है। उनकी आज्ञा होते ही वे मेघ तत्काल वर्षा कर

देंगे। पूर्णदासजी ने दादूजी महाराज की आज्ञा होते ही शीघ्र जाकर किसानों को समझा दिया। वे सब तो यही चाहते थे। वर्षा होने का आश्वासन मिलते ही अति प्रसन्नता के साथ अपने-अपने घरों को चले गये और दादूजी की आज्ञानुसार जैसे उनसे हो सका वैसे प्रभु का स्मरण भी करने लगे। फिर दादूजी महाराज स्नानादि से निवृत होकर आसन पर आये और सर्वप्रथम प्रभु को प्रार्थना की- हे दीनदयालु प्रभो! वर्षा करो। आपके अंशरूप प्राणियों को वर्षा बिना अति क्लेश हो रहा हे, आपके घर में तो मेघों की कमी नही है, फिर दुष्काल को नष्ट करके सदा के लिये सुकाल क्यों नही करते हो? आपको शीघ्र वर्षा करनी चाहिये। दादूजी की प्रार्थना सुनकर इन्द्र ने भारी वर्षा कर दी।

पीर पूजने का परिणाम

आंधीग्राम के काजी और मुल्लाओं ने ग्राम में प्रचार किया कि हमने वर्षा करने के लिये पीरजी से अर्ज की थी। उस हमारी अर्ज को सुनकर पीरजी ने वर्षा कराई है। अतः सब ग्राम निवासियों को मिलकर पीरजी की पूजा करनी चाहिये। पीरजी की पूजा नही करने से पीरजी नाराज हो जायेंगे। उनके नाराज होने से ग्राम में और भी अधिक विपत्ति आ सकती है। फिर काजी, मुल्लाओं ने पीरजी के पूजने का एक दिन नियत कर दिया। उसी दिन पूजने से पीरजी प्रसन्न होंगे और पीरजी की प्रसन्नता से ग्राम में सुख चैन रहेगा। हिन्दू जनता भी उनके बहकाने में आ गई। पीर को पूजने जाने वाले एक हिन्दू समूह का कोलाहल सुनकर तथा देखकर दादूजी ने पूछा- पूर्णदास! आज ये कोलाहल करते हुये लोग कहां जा रहे हैं ? तब पूर्णदास ने कहा- स्वामिन्! वर्षा तो आपने कराई थी, आपका उपकार तो कुछ नही माना और काजी, मुल्ला आदि मुसलमानों ने प्रचार किया कि वर्षा पीरजी ने कराई है, इससे पीरजी की पूजा करो। इसी से ये सब भ्रम में पड़कर पीर की पूजा करने जा रहे हैं।

परमेश्वर तो सबको अपने-अपने कर्म का फल देते ही हैं और वह भी निमित्त से ही देते हैं। वहां के लोगों की कृतघ्नता का फल प्रभु ने देना ही था। अतः

जो लोग पीर की पूजा करने जा रहे थे उन सबके मुख काले और पैर नीले हो गये। तब पीर पूजने वाले सभी नर नारी एक दूसरे को देखकर परस्पर कहने लगे, मुख काला और पैर नीले कहां करा लाये? सबकी यह स्थिति देखकर काजी मुल्ला आदि मुसलमान भी आश्चर्य में पड़ गये। यह क्या हुआ? हम सबके ही मुख काले और पैर नीले कैसे हो गये? फिर सबने मिलकर पीर से प्रार्थना की- हे पीरजी महाराज! हमने तो आपकी पूजा की है, पाप तो नही किया है। फिर हमारे मुख काले और पैर नीले कैसे हो गये हैं? आपकी पूजा का फल यही मिलता है क्या? उन सबकी प्रार्थना सुनकर पीर ने सबको आकाशवाणी के रूप में कहा- लोगों! काला मुख ओर नीले पैर होना मेरी पूजा का फल नही है। यह तो तुम्हारी कृतघ्नता का ही फल तुमको मिला है। वर्षा तो सन्तप्रवर दादूजी ने ईश्वर से प्रार्थना करके कराई है और तुम पूजने मेरे को आये हो। इन काजी, मुल्ला आदि मुसलमानों ने तुमको भ्रम में डाला है। इससे तुम्हारे साथ इनके भी मुख काले और पैर नीले हो गये हैं। तुम सभी को चाहिये था कि सन्त दादूजी की पूजा करते । पीर की उक्त बात सुनकर काजी, मुल्ला आदि सबने मिलकर पुनः प्रार्थना की- अच्छा अब आप हमारे जो मुख काले और पैर नीले हो गये हैं, इनको तो ठीक कर दो। पीर ने कहा- यह कार्य मैं कभी नही कर सकता। दादूजी की कृपा से यह कार्य होगा। तुम सब एक साथ महान् सन्त दादूजी की शरण में जाओ। उनकी कृपा से क्षण भर में ठीक हो जाओगे। वे परम दयालु हैं और पूर्ण शक्तिमान् भी है। तुमलोग उनको पूर्णरूप से नही जानते हो, हमको उनकी शक्ति का पता सीकरी दरबार में लग गया था। वहां के काजी, मुल्लाओं ने सीकरी दरबार के समय हम सब बड़े-बड़े पीरों को बुलाया था। वहां दादूजी के आगे हमारी कुछ भी शक्ति नही चली थी। दादूजी ने सीकरी दरबार में तेजोमय तखत को दिखाकर हम सबको चकित कर दिया था। इसलिए हम दादूजी की शक्ति को जानते हैं, तुम लोग नही जानते हो। दादूजी तो साक्षात् ईश्वर रूप ही हैं। उनके आगे किसी की शक्ति नही चलती है। तुम दादूजी की ही शरण में जाओ और उनसे ही प्रार्थना करो।

पीर की प्रेरणा से सारा जनसमुदाय दादूजी के पास चल पड़ा दादूजी के पास

पहुंच कर सबने प्रणाम करके अपने में व्यतीत हुई घटना सुनाकर कहा– हम सब पीरजी की प्रेरणा से ही आपके पास आये हैं। आप तो क्षमा को ही सार समझने वाले सन्त शिरोमणि महान् सन्त हैं। यह पीरजी ने ही हमको बताया है। अतः आप हमारे अपराध की ओर न देखकर इस समय जो हमारे हृदय में भावना है उनकी ओर ही देखें। आपके उपकार को भूलकर उसका फल तो हमने पा लिया है किन्तु आप तो दयालु हैं, जैसे पहले दया करके वर्षा कराई थी वैसे ही अब भी दया करके हमारे काले मुख और नीले पैर मिटाने की कृपा अवश्य करें। अब हम आपकी शरण आये हें। हम सबकी लज्जा आपके हाथ में है। हमारी कृतघ्नता का फल हमको मिल चुका है। अब हम आपकी दया को प्राप्त करना चाहते है। पीरजी ने कहा है– यह तुम्हारा कलंक सन्त प्रवर दादूजी के बिना कोई नही मिटा सकता। आप अवश्य दया करें। उन लागों की प्रार्थना सुनकर दादूजी महाराज ने कहा– भाइयों! हमने तो तुम लोगों पर दया करके ईश्वर से प्रार्थना की किन्तु तुमने उल्टा ही किया। परमात्मा की पूजा न करके पीर को पूजने गये किन्तु पीर ने भी तुम्हारी रक्षा नही की। फिर दादूजी ने प्रभु से प्रार्थना की– इन सब पर कृपा करके इनके मुखों का कालापन ओर पैरों का नीलापन दूर करने की कृपा करें। फिर तो तत्काल ही सबके मुखों व पैरों का दोष मिट गया। इस घटना के बाद सब लागों की श्री दादूजी महाराज में महान् श्र(ा हो गई। आंधी में चातुर्मास के समय आमेर नरेश मानसिंह भी श्री दादूजी के दर्शन करने गये थे। वहां सत्संग द्वारा भगवत भक्ति का प्रचार देखकर राजा अति प्रसन्न हुआ।

शिष्य छोटे गरीबदास

आंधी में चातुर्मास की समाप्ति का समय समीप आया। तब पूर्णदास जी ने विचार किया– स्वामी जी अन्य भेंट तो स्वीकार केरेंगे नही अतः मैं अपने पुत्र को ही दादूजी को भेंटकर दूं। यह पुत्र की भेंट दादूजी स्वीकार भी कर लेंगे। चातुर्मास के प्रवचन समाप्ति पर अपने पूर्व निश्चय के अनुसार अपने पुत्र को श्री दादूजी को भेंट कर दिया। श्री दादूजी ने भी पूर्णदास की श्र(ा भक्ति देखकर उसे शिष्य रूप में स्वीकार कर लिया और वे जनगरीब ;गरीबदास छोटेद्ध के नाम

से प्रसि(हुये और ये दादूजी के 52 शिष्यों में माने जाते हैं। इनको आंधी ग्राम में रहकर साधना करने की आज्ञा दी थी।

आंधी में चतुर्मास की समाप्ति के बाद दादूजी काणेता में पधारने के बाद जैयमल्ल कछवाहा के ग्राम में गये । इसके बाद चाटसू ग्राम में कपिलमुनि के यहां पधारे। चाटसू में कई दिनों तक सत्संग महोत्सव चलता रहा। इस उत्सव में दादूजी का शिष्य तोलाबागड़ा भी आ गया था।

शिष्य तोला बागड़ा

तोला बागड़ा की भक्ति अति उत्कृष्ट थी। उसके साथ प्रतिदिन भगवान भोजन किया करते थे। तोला बागड़ा दो पत्तलें बराबर लगाता और दो जल पात्र रखता था। दोनों में ही भोजन परोसा जाता था, एक पत्तल में तोला जीमता था और दूसरी में भगवान्। भगवान जीमते हुये सबको नही दीखते थे, जिनकी दिव्य दृष्टि होती थी उन सन्तों को ही दीखते थे। किन्तु पत्तल का भोजन समाप्त हो जाता था। वह सबको प्रत्यक्ष रूप में भासता था। भोजन शनैः-शनैः ही समाप्त होता था। मानो ग्रास- ग्रास ही घट रहा है, ऐसा भासता था। तोला को जीमते हुये भगवान् प्रत्यक्ष रूप में भासते थे । भगवान् की पत्तल के लिये परोसने वालों को तोला कहता था यह वस्तु भगवान को परोसो। भगवान के परम भक्त सन्तों को भी भगवान तोला के साथ जीमते हुये भासते थे। अन्य को नही भासते थे। तोला बागड़ा की उक्त लीला के कारण भोजन के समय बहुत लोग एकत्र हो जाया करते थे। तोला बागड़ा ने लोग लज्जा और बड़ाई को त्याग दिया था। वह तो परमात्मा के भजन में ही निमग्न रहता था और भगवान को भोजन कराते समय अत्यन्त प्रसन्न दिखता था। तोला बागड़ा में सगुण भक्ति प्रथम ही थी। पहले भी उसे श्री कृष्ण के दर्शन होते थे किन्तु मार्ग प्रद्रशक कोई गुरू नही था। अतः भगवान श्री कृष्ण ने प्रेरणा की- " तुम सन्त प्रवर दादूजी को गुरू बना लो, वे मेरे स्वरूप ही हैं, उनमे और मेरे में कुछ भेद नही है। फिर उनकी साधन प(ति से मेरे वास्तविक स्वरूप का चिन्तन करो।" तब तोला ने दादूजी को गुरू बनाकर दादूजी की

साधन प(ति से साधना आरम्भ की, किन्तु सगुण दर्शन उसे होते ही रहते थे और भोजन के समय तो अति प्रेम से प्रतिदिन भगवान के साथ ही भोजन करते थे। दादूजी का शिष्य हो जाने के पश्चात् तोला बागड़ा में हिन्दू या तुर्क आदि किसी पक्ष विशेष का आग्रह नही रहा था। निर्पक्ष होकर दादूजी की साधना प(ति के अनुसार अन्तः साधना करता था। फिर भी भोजन करते समय उसके पास भगवान् बालकृष्ण के रूप में प्रकट होकर साथ भोजन करते ही थे।

एक ब्राह्मण का दादूजी को गालियां देना

आमेर में एक दिन एक ब्राह्मण आया और दादूजी के सामने खड़ा होकर दादूजी का नाम ले लेकर गालियां देने लगा। दादूजी तो सुनते रहे, कुछ नही बोले। उस समय दादूजी के पास दादूजी के शिष्यों में से तो कोई भी नही था किन्तु आमेर का एक व्यक्ति सामने बैठा था। उस व्यक्ति ने उस ब्राह्मण को डांटते हुये कहा– यह क्या मूर्खता करते हो? सन्तों को गालियां क्यों देते हो? तब दादूजी ने उस व्यक्ति को कहा– भाई! तुम उनको क्यों डांटते हो? उस व्यक्ति ने कहा– भगवन्! यह आपका नाम बोल–बोलकर आपको गालियां देता है। दादूजी ने कहा– मेरे नाम वाले तो संसार में बहुत व्यक्ति हैं, किसी अन्य को देता होगा। तब गाली देने वाले ब्राह्मण ने उच्च्य स्वर से कहा– और किसी को नही देता हूं तेरे को ही देता हूं। तब दादूजी ने हंसते हुये अपनी चद्दर उसके आगे बिछाकर कहा– “अच्छा मेरे को ही देते हो तो तुम्हारी मुझ पर अधिक दया है। फिर देते जाओ, जितनी आपकी इच्छा हो उतनी ही दो। आप तो दाता है। आपको क्या कहा जाय ? मैं तो लेने वाला हूं मुझे तो आप कुछ दे ही रहे हैं। इसमें मेरी हानि ही क्या? मुझे तो कुछ मिल ही रहा है।”

दादूजी के उक्त वचन को सुनकर वह ब्राह्मण अति लज्जित होकर वहां से चला गया और अपने घर जाकर अपने बुजुर्गों को बोला– मैंने दादूजी के पास खड़े रहकर अनेक गालियां दी। फिर भी उन को क्रोध नही आया। हमारे कुछ भाई दादूजी के विपरीत ही बोलते हैं। उसके बुजुर्गों ने उसे कहा– तुमने दादूजी को

अकारण गालियां क्यों दी थी? उसने कहा- कुछ पण्ड़ितों द्वारा भ्रम में पड़कर दी थी किन्तु अब मेरा भ्रम सर्वथा नष्ट हो गया है। बुजुर्गों ने कहा- फिर तुमने उनसे क्षमा याचना की होगी? उसने कहा- नही फिर बुजुर्गों ने कहा- अच्छा प्रसाद लेकर अब हम सब परिवार के लोग चलकर उनसे क्षमा याचना करेंगे। दूसरे दिन गालियां देने वाले के साथ सब परिवार के लोग प्रसाद लेकर आये। प्रणाम करने के बाद प्रसाद चरणों में रखा और हाथ जोड़कर बैठ गये। उस समय वह व्यक्ति भी बैठा था जिसने गालियां देने वाले को डांटा था। उसने दादूजी से कहा- यह वही है जो कल आपको गालियां देता था। इसका प्रसाद नही लेना चाहिये। तब दादूजी ने कहा- जब गालियां भी ली थी, तब मिठाई क्यों नही लेंगे। दादूजी ने उसको क्षमा करके हरि भक्ति करने का उपदेश दिया।

सप्तम चरण

राजा मानसिंह का गद्दी पर बैठना

काल गति के प्रभाव से आमेर राजा भगवानदास परलोक सिधार गये। वे धर्मात्मा एवं बुद्धि के अथाह सागर थे। उनकी गद्दी पर उत्तराधिकारी राजकुमार मानसिंह का प्रस्ताव आया। बादशाह अकबर ने इस हेतु स्वीकृति दे दी। सीकरी दरबार से राजकीय कायदे का फरमान पाकर नवीन राजा मानसिंह अपने देश आमेर पधारे। राज्य के कुछ अधिकारी उनकी अगवानी और स्वागत में अचरोल ग्राम तक गये, कुछ रामगढ़ में उनसे आकर मिले। कुछ ठाकुर सामन्त आमेर दरबार में हाजिर हुये। परन्तु सन्त श्री दादूजी अपने धाम पर ही श्री हरि ध्यान में निमग्न रहे।

तीन दिन बीत जाने पर सन्त निन्दक दरबारियों ने नये राजा मानसिंह को बरगलाया और बहकाया कि- देखो! सभी छोटे-बड़े आपको राजा बनने की बध ााई देने और नजराना भेंट करने हाजिर हुये हैं, किन्तु वह घमंडी पाखंडी साधु दादू नही आया। यह व्यवहार राजकीय सम्मान के विरू(है और असहनीय है। इनकी देखा-देखी से अन्य नागरिक भी बिगड़ जायेंगे। वह हिन्दु मुसलमानों को समान ही समझता है। उसके व्यवहार ने तो हमारे वेदों को भी झूठा बना दिया है। कोई मर जाता है तो उसे वन में छुडवा देता है। अभी इन दिनों में एक साधु मर गया था उसको वन में डलवा दिया था। न तो अग्नि संस्कार करवाता है और और न ही भूमि में गडवाता है। उसे तो हिन्दू और मुसलमान दोनों में किसी एक का भी मार्ग नही पकड़ा है।

राजा मानसिंह का दूदजी के पास जाना

उन निन्दकों द्वारा बहकाने-उकसाने पर पीठासीन नया राजा मानसिंह स्वामी श्री दादूजी के पास गये और सामने हाथ जोड़ते हुये बैठ गये और बोले- हे स्वामी जी! हम आपके सेवक हैं, मैं आपसे पहले रामगढ़ में मिला था परन्तु आप हमें संभालने, हमारी कुशलक्षेम पूछने और राजगद्दी पर बैठने की बधाई व शुभकामना देने नही पधारे। स्वामीजी ने उत्तर दिया- हमें श्री हरी द्वारा आज्ञा और प्रेरणा ही नहीं हुई। अतः हम कैसे आते? दादूजी का उक्त कथन सुनकर राजा मानसिंह कुछ क्षण मौन रहे फिर बोले- स्वामिन! मैंने सुना है आपके यहां किसी सन्त का देहान्त हो गया था, तब आपने क्या करवाया था? तब दादूजी ने कहा- सन्त और शूरवीर के शव तो मैदान में पशु पक्षी ही खाते हैं। उनके शव को शमशान में जलाने व भूमि में गाड़ने की आवश्यकता नही रहती है और कहा-

हरि भज साफल जीवना, पर उपकार समाइ।
दादू मरणा तहां भला, जहां पशु पंक्षी खाये।।50।।

;दादूवाणी-स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्- हरिभजन करते हुये परोपकार में लगने से ही जीवन की सफलता है। परोपकार में यहां तक कर्तव्य आता है कि देहत्याग भी ऐसे स्थान में किया जाये जहां शरीर का पशु पक्षी भक्षण करके तृप्त हो सके।

अतः हमने उन सन्त के शरीर का पवन संस्कार कराया था। वह हमारी दृष्टि से श्रेष्ठ है। स्वामी जी का उक्त वचन सुनकर राजा मानसिंह बोले- भगवन्! पवन संस्कार तो मैंने सुना ही नही है। राजा का उक्त वचन सुनकर श्री दादूजी ने कहा- वेदशास्त्रों में शरीर के छः प्रकार के संस्कार बताये गये हैं- 1. जल में प्रवाहित होकर शरीर छोड़ना 2. भूमि समाहित होकर 3. अग्नि में भस्म होकर 4. वायु में शरीर को खुला छोड़कर, जहां एकान्त जंगल में पशु पक्षी खा लें, 5. प्रभु के विरह में गोपियों की तरह तनमन को जला देना 6. ज्ञानाग्नि द्वारा शरीर छोड़ना। विरहाग्नि और ज्ञानाग्नि में शरीर को जला देना सर्व साधारण के बस की बात नही है। इन छः विधियों से शरीर छोड़ना शास्त्र सम्मत हैं, तुम्हे किन निन्दकों ने भ्रमित कर दिया है। इस तरह समझाकर स्वामीजी ने राजा को आश्वस्त किया।

प्रतिपक्षियों द्वारा राजा मानसिंह को भड़काना

साधु विद्वेषी ब्राह्मणों ने राजा को फिर भरमाया और कहा- देखो राजन! यह साधु दो कुंवारी कन्याओं को पास में रखता है और शास्त्र मर्यादा के अनुसार उनका विवाह नही करता है। यह साधु हरजाई है, जो सांभर निवासी ब्राह्मण की दो कन्याओं को पास में रख रहा है। इस तरह भ्रमित होने पर राजा पुनः स्वामीजी के पास आया । शीश नवाकर बैठ गया। कुछ पूछना चाहते हुये भी पूछ नही पाया। तब स्वामीजी ने उसकी मनोदशा पहचान कर कहा- तुम पूछना चाहते हो कि बेटियों का विवाह क्यों नही करते? दादूजी के उक्त वचन सुनकर राजा यह सोचकर बहुत डर गया कि स्वामीजी मन की सब बात जानते हैं। दादूजी ने देखा कि बहुत अधिक लोग यही सुनने आये थे कि राजा दादूजी को क्या कहेंगे और दादूजी उसका क्या उत्तर देगें? सभा को देखकर परमसन्त श्री

दादूजी महाराज ने कहा- साधु सन्त का पति एक मात्र परमेश्वर ही हेता है। उसका स्मरण बिसार देने पर निश्चित ही दोष लगता है। ये दोनों कन्यायें तन और मन से पावन हैं। इनका जीवन तपोमय हे। तब राजा ने उन कन्याओं के चित की परीक्षा के लिये, उनके पास जाकर पूछा- यदि तुम्हारी विवाह की इच्छा हो तो तुम्हारे कुल और अवस्था के अनुरूप उचित वर की तलाश करके विवाह की व्यवस्था कर दूं।

साध्वी कन्याओं ने उत्तर दिया- हे राजन! विधाता ने हम कन्याओं के लिये जिस वर का विधान रचा था, उस परमात्मा का वरण तो हम मन से कर चुकी हैं। हमारा विवाह तो हुये आठ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। गुरूदेव श्री दादूजी इसके साक्षी हे। हे राजन! पौराणिक कथाओं का स्मरण करो। गर्ग)षि की पुत्री गार्गी और शांडिल्य की सुता शांडिली ने विवाह नही किया था। उनके अविवाहित रहने पर तो कलंक नही लगा था। फिर हमारी भक्ति साधना से कौन सा अनर्थ हो रहा है ? हमने परमेश्वर को ही अपना पति मान लिया हे उनकी प्रीति भक्ति में सांसारिक पापों को त्याग दिया है। शील संयम का स्नान करती हुई हम सदा शु(चित रहती है। कन्याओं का दृढ निश्चय और अन्तःकरण शु(जानकर राजा ने कहा- तुम तो हमारी गुरूबहिन हो। अपने कोप को शांत करके मेरा गुनाह माफ कर दो विवाह का प्रस्ताव रखना अवगुण था, इसे क्षमा कर दो। तब कन्यायें बोली- माफी तो गुरूदेव ही देंगे। सुनकर राजा दौडकर गुरूचरणों में गिर पड़ा, अपनी अपराध भावना के लिये क्षमा मांगने लगा। तब स्वामीजी ने कहा- राजन! तुम्हारा कोई दोष नही है, अतः डरो मत। साधु निन्दकों द्वारा भरमाने से तुम्हारी मति में विभ्रम हो गया था। जन कल्याण करते रहो राजा का यही धर्म है।

राजा मानसिंह की विप्रों से वार्ता

राजा मानसिंह ने विप्रों को उदास देखकर पूछा- अब आप लोग उदास क्यों हैं? उन लोगों ने कहा- दादूजी का व्यवहार हमको जला रहा है। यद्यपि ये तो राम

की भक्ति करके राम को प्राप्त हो जायेंगे किन्तु हमारे वेदों की तो मर्यादा नष्ट हो रही है। अब आप राजा होकर भी दादूजी की प्रतिष्ठा बढ़ा रहे हैं तब सब ही आप के साथ अपने को दादू-पंथी ही मानने लगेंगे। फिर वैदिक प(ति का निर्वाह कौन करेगा ?

ब्राह्मणों की उक्त बात सुनकर राजा फिर दुविधा में पड़ गया। वह सोचने लगा इस समय मेरी दशा सर्प छूछुंदर वाली सी हो रही है। यदि मैं सन्तों की बात नही मानता हूं तो ईश्वर से दूर पड़ता हूं और इन पण्डितों की बात नही मानता हूं तो इन्होने भी अपना संगठन कर रखा है। ये भी प्रजा को बहकाकर अराजकता फैलाने का पूरा-पूरा प्रयत्न करेंगे। इन ब्राह्मण पण्ड़ितों की इच्छा के अनुसार सन्तों को दंड देता हूं तो निश्चय ही नरक में जाऊंगा और इस लोक में भी बड़ा भारी अपयश होगा। यदि मैं नरक तथा लोक लाज की परवाह न करके ब्राह्मणों के कथनानुसार करता हूं तो इस में ब्राह्मणों का तो कुछ नही बिगड़ेगा किन्तु कोई सन्त मुझे अवश्य शाप दे देगा। तब मेरी रक्षा कौन करेगा ? ब्राह्मणों में तो मैं ऐसी शक्ति नही देख रहा हूं जिससे ये मेरी रक्षा कर सकें। इस बात को ये ब्राह्मण भी जानते है कि दादूजी उच्चकोटि के सन्त हैं, इनके आगे हमारा वश नही चलता। फिर राजा ने अच्छी प्रकार विचार करके विप्रों को कहा- विप्रगण! भली भांति विचार कर के देख लिया है, सन्तों में कोई दोष नही मिलता है और बिना दोष सन्तों को दंड कैसे दिया जा सकता है? अतः आप लोग ईर्ष्या छोड़कर अपने घरों को पधारें। राजा की उक्त बात सुनकर ब्राह्मणों ने विचार किया- राजा तो अपने वश में नही रहा है। इससे वह दादू पर दबाब नही डाल रहा है। अतः हम सब को अपने-अपने घरों को चलना ही उचित है । फिर वे सब निराश होकर राजा को यह कहते हुये कि हमारी बातों पर ध्यान नही दिया जायेगा तो हम लोग आत्मघात करके मर जायेंगे, अपन-अपने घरों को चले गये। उक्त मरने की धमकी देने से राजा दुविधा में पड़ गया। फिर उसने सोचा सन्त तो विचरते ही रहते हैं। इस समय यहां से चले जायें तो यह धर्म-संकट टल सकता है।

राजा का आमेर निवास सम्बन्धी प्रश्न

राजा के मन में उस समय भाव और कुभाव दोनों उठ रहे थे। वह दादूजी को भी कुछ नही कहना चाहता था और ब्राह्मण पण्ड़ितों को भी राजी रखना चाहता था। अंत में राजा ने सोचा सन्त तो उच्च्य कोटि के हैं, ये चाहे जायें, चाहे रहें, इनकी इच्छा पर हैं इसी विचार से राजा मानसिंह ने दादूजी महाराज से पूछा- स्वामिन्! आप यहां कितने वर्षों से विराज रहे हैं? दादूजी ने कहा- यहां चौदह वर्ष से निवास कर रहे हैं। बीच-बीच में भक्तों के बुलाने पर चले भी जाते हैं। राजा ने कहा- तब तो यहां बहुत समय से विराज रहे हैं। सन्त तो एक स्थान पर दीर्घकाल तक नही रहा करते, प्रायः विचरते ही रहते हैं। दादूजी ने कहा- ठीक है, अब जहां परमेश्वर रखेंगे वहां जाकर रहेंगे। इतना कहकर दादूजी उठ खड़े हुये। तब राजा ने पूछा- भगवन्! कहां पधार रहे हैं ? दादूजी ने कहा- जहां प्रभु ले जायें वहां ही जायेंगे। अब आपके यहां पर रहने की हरि इच्छा नही ज्ञात होती है। तब ही आपके द्वारा कहलाया है कि यहां बहुत दिन हो गये हैं। दादूजी का उक्त वचन सुनकर राजा डर गया और अपने मन में विचार किया कि मैंने बिना विचार किये ही उक्त प्रश्न कर दिया, जिससे सन्तों को दुःख हुआ है। ऐसा प्रश्न करके वास्तव में मैंने अच्छा नही किया है।

राजा निज स्थिति बताना

राजा ने कहा- महाराज! आप तो महान सन्त हैं, यह मैं अच्छी प्रकार जानता हूं। अतः आपसे तो मुझे भय की शंका नही है किन्तु मुझे बहकाने वाले दुर्जनों की बुि(का आपके आगे क्या कथन करूं, आप भी जानते ही है। वे तो दुर्जनता पर ही उतरे हुये हैं। मैंने उन लोगों को कई बार कहा भी है कि तुम लोग सन्तो से ईर्ष्या मत करो, सन्त तो सर्वहितैषी हैं, वे तो किसी का भी बुरा नही चाहते हैं फिर आप लोग उनके विपरीत प्रचार में क्यों लगे हो और क्यों मिथ्या बातें बना-बना कर मुझे बहका रहे हो। फिर भी उनको लज्जा नही आती है। मुझे मिथ्या बातें सुना- सुनाकर आप से विपरीत करने का प्रयत्न करते ही रहते है।

उनसे ही मुझे भय है, दुर्जनों का स्वभाव तो प्रसि(ही है, वे मीठी-मीठी बातें सुनाकर विश्वास कराते हैं और फिर अनर्थ में डाल देते हैं। उन दुर्जनों के बहकाने से ही मैने आपके पास कई अनुचित प्रश्न भी किये हैं, किन्तु आप तो समुद्रवत गंभीर हैं। चन्द्रमावत शीतल हैं और आप गंगा के समान पवित्र महात्मा हैं। इसीलिये मेरी रक्षा हो सकी है। यदि आपके समान किसी अन्य सन्त के आगे ऐसा व्यवहार करता तो संभव है वे मुझे अवश्य शाप दे देते किन्तु आप तो परमदयालु हैं मेरी रक्षा का ही विचार कर रहे हैं। आप तो धन्य हैं।

दादूजी के प्रतिपक्षियों पर ईश्वर का कोप

उक्त प्रकार राजा अपनी स्थिति बताकर तथा दादूजी को प्रणाम करके उनसे आज्ञा मांगकर राजभवन को चले गये। फिर जब दूसरे दिन प्रातःकाल ही दादूजी आसन से उठकर चलने का विचार करने लगे, तब ईश्वर ने दादूजी के प्रतिपक्षियों पर भारी कोप किया और उसी क्षण आकाशवाणी के द्वारा कहा- "दादू तुम कहो तो यहां जितने तुम्हारे प्रतिपक्षी हैं उन सबको इसी क्षण नष्ट कर दिया जायेगा तथा इस नगर को भी नष्ट कर दिया जायेगा। जिस नगर में सन्तों के विरोधी बसते हों, उस नगर के आबाद रहने की क्या आवश्यकता है? यह तो सबके क्लेश का ही कारण होगा।"

दादूजी की समता

उक्त आकाशवाणी सुनकर करूणामय दादूजी ने करूणा करके कहा- नही प्रभो! ऐसा कभी नही करें, दया करके रक्षा ही करें। अगर दादूजी उनकी रक्षा के लिये प्रार्थना नही करते तो ईश्वर के कोप से संपूर्ण नगर ही नष्ट हो जाता। नगर की तथा विरोधियों की रक्षा होने से दादूजी को अति प्रसन्नता हुई। कारण, उनके निमित्त से होने वाली हिंसा रूक गई।

राजा मानसिंह को स्वप्न

शिष्यों के सहित दादूजी से आमेर से चल दिये। उसी समय राजभवन में सोये हुये राजा मानसिंह को स्वप्न में आकाशवाणी सुनाई दी कि तुमने अच्छा नही किया है। मेरा भजन करने वाले सन्तों को सताया हैं सन्तों को सताने से किसी का भी भला नही हुआ है। वे सब सन्त आश्रम को छोड़कर चल दिये हैं। तुम शीघ्र जाकर उनको प्रसन्न करो, नही तो तुम्हारा और तुम्हारे नगर का जिसमें सन्तों के द्वेषी बसते हैं, नाश कर दिया जायेगा।

राजा मानसिंह को अति भय

उक्त आकाशवाणी सुनकर राजा को अति भय हुआ। वह घबराया हुआ सा उठा और स्वप्न को सत्य मानकर शीघ्रता से दादू आश्रम में गया किन्तु वहां कोई भी नही था। तब आसपास के लोगों से पूछा गया। उन लोगों ने बताया कि दादूजी तो सब शिष्यों सहित यहां से चले गये है, वे घाटी के आसपास गये होंगे। तब राजा भयभीत हुआ और शीघ्र अश्व पर बैठकर कुछ साथी सवारों के साथ चल पड़ा। जयपुर आमेर की घाटी में दादूजी को शिष्यों सहित हरि-भजन करते हुये जाते देखा, फिर राजा घोड़े से उतरकर दादूजी के चरणों में पड़ गया और नम्रता पूर्वक बोला- स्वामिन्! आप कैसे पधार गये? मेरे पर दया करके आप सब शिष्यों सहित आश्रम पर पधारें। इस समय मैं आपको नही जाने दूंगा। आप मुझ पर प्रसन्न होकर नही पधारेंगे तो मेरा और मेरे नगर का नाश हो जायेगा। ऐसी मुझे स्वप्न में ईश्वर की वाणी सुनाई दी है और वह सत्य भी है।उसी वाणी ने स्वप्न में आपके पधारने की बात कही थी सो सर्वथा सत्य निकली है। आप आश्रम पर नही मिले। फिर दादूजी ने ध्यान द्वारा देखा तो राजा का कथन सर्वथा सत्य था। तब दादूजी ने प्रभु से प्रार्थना की और कहा- प्रभो! राजा और नगर की रक्षा ही कीजिये। दादूजी ने जो प्रार्थना की थी वह 'दादूवाणी' के 'विनती के अंग' में वर्णित है। तब नभवणी ने कहा- अच्छा, तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो, अभी तो आमेर की रक्षा हो जायेगी किन्तु सौ वर्ष पश्चात् यह नगर खंडहर हो जायेगा। ऐसाकहकर नभवाणी बन्द हो गई। फिर नभवाणी के कथनानुसार ही हुआ, जयपुर

बस जाने से आमेर खंडहर हो गया।

दादूजी का पुनः आमेर आश्रम पर आना

राजा मानसिंह दादूजी को अति आग्रहपूर्वक प्रार्थना करके आमेर आश्रम पर ले गये। फिर राजा ने सन्तों को इच्छानुसार सब व्यवस्था करवा दी। राजा भी प्रतिदिन सत्संग में आता था। एक दिन राजा ने दादूजी से प्रार्थना करके स्थान बनाने की आज्ञा ले ली। स्वामीजी की इच्छानुसार स्थान मावठा तालाब के तट पर बाग के पास ही बनवा दिया गया। स्थान बन जाने पर राजा को यह जानकर अति प्रसन्नता हुई कि मेरे से स्वामीजी की कुछ तो सेवा हो ही गई है।

आमेर से प्रस्थान का विचार

कुछ दिन निवास करने के बाद श्री दादूजी ने राजा मानसिंह को कहा- राजन्! अब हम यहां से अन्यत्र जाना चाहते हैं। ऐसी हरि की आज्ञा है। राजा ने पूछा- स्वामिन! अब आपको विशेष रूप से कहां निवास करने की हरि आज्ञा है। श्री दादूजी ने कहा- अब अन्तिम समय में स्थाई रूप से रहने की आज्ञा "नारायण अश्रुबिन्दु" सरोवर के तट पर रहने की है। यह परम सरोवर है। राजा ने पूछा- भगवन्! " नारायण अश्रुबिन्दु" सरोवर कहां है? दादूजी ने कहा- नारायणा नगर के पास जो महान् तालाब है वही "नारायण अश्रुबिन्दु" सरोवर है। राजा ने पूछा- भगवन्! उस तालाब का नाम "नारायण अश्रुबिन्दु" सरोवर कैसे हुआ, कृपा करके यह बताइये?

नारायण अश्रबिन्दु सरोवर का परिचय

दादूजी ने कहा- जब भार पीड़िता पृथ्वी और ब्रह्मादि देवता, दानव आदि से व्यथित होकर अपनी रक्षा तथा विश्व की व्यवस्था ठीक करने के लिये भगवान नारायण के पास प्रार्थना करने जाने लगे तब विचार किया कहां चले, भगवान

कहां मिलेंगे। उस समय देवताओं ने अपने-अपने विचार प्रकट किये। किसी ने कहा- बैकुंठ में चलो, किसी ने कहा- क्षीर सागर पर चलो। किसी ने कहा इस समय तो राजा बलि के द्वार पर मिलेंगे। इत्यादिक कई स्थानों का निर्देश किया किन्तु भगवान शंकर मौन ही रहे। उन्होंने कुछ भी नही कहा। तब ब्रह्माजी ने शंकरजी को कहा- आप ही तो नारायण भगवान से सबसे अधिक सम्बन्ध रखने वाले हैं फिर मोन क्यों है? बताइये कहां चलें? भगवान कहां मिलेंगे? तब शंकरजी ने कहा- मेरे विचार से तो हरि सर्वत्र व्यापक है, हरि के लिये किसी लोक विशेष में अथवा देश विशेष में जाने की आवश्यकता नही है। वे तो भक्तों के प्रेम से प्रत्येक स्थान में प्रकट हो जाते हैं। अतः हमको यहां ही प्रार्थना करनी चाहिये। तब शंकरजी का परामर्श सुनकर देवता जिस स्थान में स्थित थे वहां ही सबने मिलकर प्रार्थना की। प्रेम पूर्वक प्रार्थना करने से हरि वहां ही प्रकट हो गये। तब पृथ्वी और ब्रह्मादि सब देवताओं ने दानवादि द्वारा होने वाले अपने दुःखों को सुनाया। उनकी बातें सुनकर 'नारायण' भक्तों के दुःख में अति दुखित हो गये। उस समय जिस स्थान पर उनके नेत्रों से कुछ अश्रु बिन्दु पृथ्वी पर गिरी, उस स्थान का नाम -नारायण-अश्रु' बिन्दु सरोवर हो गया।"" नारायण अश्रुबिन्दु" को गौरीशाह ने पक्का बनवाया था।"नारायण अश्रुबिन्दु" के जल से गौरीशााह का कोढ़ दूर हो गया। गौरीशाह कोढ़ के रोग से पीड़ित था। जब उसका कोढ़ किसी रीति से नही हटा तब वह अपने दल-बल के सहित आमेर के ख्वाजा पीर की यात्रा करने इस आशा से गया था कि मेरा कोढ़ ख्वाजा पीर मिटा देंगे। जब ख्वाजा ने उसका कोढ़ नही मिटाया तब वह निराश होकर लौटा। जब उक्त सरोवर के पास आया तब नारायणा नगर के लोगों से इस का नाम नारायण सरोवर सुना ओर इसका सुन्दर जल देखकर सरोवर के तट पर ही अपना डेरा डाला। उस सरोवर के जल से ही स्नान किया ओर सरोवर का ही जलपान किया। स्नान करते ही गौरीशाह बादशाह का वह कोढ़ मिट गया। इससे वह अति प्रसन्न हुआ और उस सरोवर को खुदवा कर पक्का बनवाने की योगना बनाई।

उस सरोवर का नाम आगे "नारायण अश्रुबिन्दु" सरोवर न रहकर नारायण सरोवर ही प्रसि(हो गया। नारायण सरोवर के तट पर बसने से ग्राम का नाम भी नाराणा

ही प्रसि(हुआ। इसके बाद श्री दादूजी ने जगन्नाथजी को आमेर में रहकर ही लोगों के कल्याणार्थ कार्य करते रहने का उपदेश दिया और अपनी पुरानी गुदड़ी, पुरानी छड़ी, कमंडल और खड़ाऊ प्रदान कर दी । जिस दिन श्री दादूजी आमेर से प्रस्थान करने लगे भक्तगण और राजा मानसिंह श्री दादूजी की जय- जय कार करते हुये कुछ दूर तक साथ चले। किन्तु दादूजी ने उन्हें समझाकर पीछे लौटा दिया।

दादूजी शिष्यों सहित आमेर से प्रस्थान करके क्रांजली ग्राम होते हुये भुरभुरा ग्राम पहुंचे। वहां करडाला से पीथा नामक एक व्यक्ति आया और दादूजी से करडाला पधारने की प्रार्थना की । दादूजी ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और करडाले पधार गये।

अष्टम चरण

दादूजी का पुनः करड़ाले पधारना

कुछ दिन यात्रा करने के पश्चात् श्री दादूजी करडाले आ गये। वैसे तो दादूजी सदा भिक्षान्न ही पाते थे किन्तु एक दिन पीथा नामक व्यक्ति ने अपने घर ही भोजन करने का विशेष आग्रह किया तब दादूजी ने स्वीकार कर लिया। उसने अच्छा भोजन बनवाया। दादूजी के सामने चौकी पर भोजन का थाल रखा गया तब उसे देखकर श्री दादूजी ने कहा- यह भोजन तो चोरी के पैसों से बना हुआ है। चोरी का अन्न हम नही खाते हैं। हम तो रामप्रीति वाले का ही खाते हैं। अतः हम नही खायेंगे। पीथा ने अपने कर्म का पश्चाताप करके दादूजी के आगे चोरी छोड़ने का संकलप कर लिया। चोरी छोड़कर अपने को दादूजी का शिष्य

बताने लगा। कुछ दिन पश्चात् गांव में एक रास मण्डली आई। पीथा के मन में रास कराने की और रास मण्ड़ली को भोजन कराने की इच्छा हुई। अब उसके पास धन नही था। तब उसने रास के निमित्त डाका डालने की इच्छा की।

एक दिन पीथा ने घींघोली की घाटी में किसी सज्जन को लूट लिया। किसी व्यक्ति ने उस सज्जन से कहा- यह तो दादूजी का भक्त है। तुम दादूजी के पास करडाले जाओ, उनके समझाने पर यह आपका धन वापिस कर देगा। वे सज्जन दादूजी के पास आये और प्रणाम करके कहा- पीथा ने हमें लूट लिया है। आप उसको समझाकर हमारा माल दिलवा दें, तो हम आपके आभारी होंगे। दादूजी ने कहा- आप धैर्य रखें, मैं उसको बुलवाकर कहता हूं। फिर दादूजी ने एक व्यक्ति को भेजकर पीथा को बुलवाया। जब पीथा दादूजी के पास आया तब दादूजी ने कहा- तुमने तो डाका मारना छोड़ दिया था। फिर इनको कैसे लूटा? पीथा ने कहा- इनको मैंने मेरे लिये नही लूटा है। रास कराने व रास देखने के लिए लूटा है। दादूजी ने कहा- तुमको सच्चा रास देखना है या रास की नकल देखना है। पीथा ने कहा- इच्छा तो सच्चा रास देखने की है किन्तु यह तो असम्भव है। अतः रास की नकल देखकर ही सन्तोष कर लूंगा। तब दादूजी ने कहा- तुम इनका सब माल दे दो, फिर हम तुमको सच्चा रास दिखायेंगे। किन्तु पुनः कपट का काम नही करना होगा। तब दादूजी ने कहा- आज सायंकाल आ जाना हम तुमको सच्चा रास दिखा देंगे। पीथा सायंकाल दादूजी के पास आ गया। दादूजी उस को साथ लेकर पर्वत के बीच के शिखर पर चढ़ गये और एक शिला पर बैठकर बोले- यहां तुम अब साक्षात् श्री कृष्ण भगवान् को और उनके सच्चे रास को देखो और नकली रास देखने की इच्छा को मन से निकाल दो। यह सच्चा रास घट-घट में होता ही रहता है, उसे नित्य रास भी कहते है। उसी को तुम तुम्हारे नेत्रों से यहां देख सकोगे।

पीथा को सत्य रास दिखाना

वहां पर्वत शिखर पर ही शरद् पूर्णिमा की रात्रि और यमुना नदी का प्रवाह दीखने

लगा फिर देखते-देखते ही सहसा वहां बहुत सी गोपियां और श्री कृष्ण प्रकट हो गये और वहां पर्वत शिखर पर ही रास आरम्भ हो गया। बड़ी विचित्र गति से श्री कृष्ण और गोपियां का नृत्य होने लगा। इस अद्भूत नृत्य को देखकर पीथा तो मंत्र मुग्ध सा हो रहा था।

इस महारास के समय आकाश मंडल में स्थित होकर ब्रह्मा, शिव, इन्द्रादि देवता और नारदादि मुनि इस महारास को देख रहे थे। भगवान महारास का दृश्य पीथा को दिखाकर गोपियों सहित सहसा अन्तर्ध्यान हो गये। अब वहां न शरद्)तु की पूर्णिमा की रात्रि है और न यमुना नदी है। वही करड़ाला का पर्वत दिखाई दे रहा है। इस अद्भुत रास को देखकर पीथा को वैराग्य हो गया। उसने दादूजी के चरणस्पर्श करके प्रार्थना की- स्वामिन्! मुझे अपना शिष्य बना लीजिये। तब दादूजी ने कहा- तुम तो घींघेली की घाटी में लूट-मार का काम करते हो। भजन तो करोगे नही, तब तुम को शिष्य बनाने से क्या लाभ है? तुम्हारे जैसा शिष्य अपने कल्याण के लिये गुरू का बताया हुआ साधन भी नही कर सकता उलटा विपरीत ही काम करता है, जिससे गुरू की बदनामी होती है। तब पीथा ने कहा-

"गंग यमुन उलटी बहे, पच्छिम ऊगे भान।
पीथा चोरी नहिं करे, गुरू दादू की आन।।"

अर्थात्- गंगा, यमुना आदि हिमालय से चलने वाली नदियां सदा समुद्र की ओर जाती है किन्तु वे भी चाहे उलटी हिमालय की ओर जाने लगे तथा सूर्य, चन्द्रमा पूर्व दिशा में उदय होते हैं किन्तु वे भी चाहे पच्छिम दिशा में उदय होने लगे। ऐसा होना असंभव है किन्तु हो भी जाये तो भी मैं पीथा तो आप दादूजी की शपथ खाकर कहता हूं कि आज से आगे कभी भी चोरी, डाका नही करूंगा। फिर पीथा दादूजी के उपदेश से ईश्वर भजन में लग गया और आगे चलकर अच्छा सन्त हो गया था।

इस बार करडाले में एक वर्ष तक दादूजी ने निवास किया। यहां से विचरते हुये

विद्याद ग्राम में पधारे। विद्याद के नरेश हरिसिंह दादूजी के दर्शन करने आये और उनकी अकड़ व मरोड़ देखकर दादूजी ने उनको उपदेश दिया। राजा हरिसिंह के ऊपर उपदेश का इतना प्रभाव पड़ा कि वह श्री दादूजी का शिष्य बन गया। फिर आगे चलकर अच्छे सन्त हो गये ओर ये 52 शिष्यों में है।

विद्याद से विचरने के बाद दादूजी पादू होते हुये रियां ग्राम पहुंचे। रियां के ठाकुर माधवदास को ज्ञानोपदेश दिया। तत्पश्चात् पुष्कर पधारे। कुछ दिन पुष्कर में सत्संग करने के पश्चात् कालूग्राम में पधारे। कालूग्रम में दादूजी एक मास विराजे। मेडता नरेश कृष्णसिंह ने दादूजी को कालूग्राम से आग्रह पूर्वक मेडता बुलाया। उसका प्रेम देखकर दादूजी मेडता पधारे। नगर के लोग दादूजी के दर्शन और सत्संग से महान लाभ उठाने लगे। कृष्णसिंह दादूजी का उपदेश सुनकर अति प्रभावित हुये और उनके शिष्य बन गये।

ईडवा पधारना

उन्ही दिनों ईड़वा नरेश नरवद ने सुना कि दादूजी मेडता में विराज रहे हैं। तब दादूजी को लाने के लिये नरवद मेडता गये। दादूजी को प्रणाम करके बोले- स्वामिन्! यहां से आप ईडवा पधारने की कृपा करें। मैं आपको ईडवा ले जाने के लिये ही आपके चरण कमलों में उपस्थित हुआ हूं। ईडवा नरेश नरवद भी प्रसि(भक्त हुये है। उनका अति प्रेम देखकर दादूजी ने स्वीकृति दे दी । फिर दादूजी ने ईडवा के लिये प्रस्थान किया और ईडवा पहुंचने पर नरवद ने शिष्यों सहित दादूजी को तालाब पर ठहराया और स्वंय नगर में गये और दादूजी को ठाठ-बाठ से लाने की तैयारी कराई। तब नरवद ने कहा- स्वामिन्! यहां एक प्रचण्ड प्रेत रहता है। वह यहां रहने वालों को मार देता है। यदि किसी साधु को मार दिया तो हमको पाप लगेगा। दादूजी ने कहा- यदि तुम नही बताते तो पाप लगता अब तुमको पाप नही लग सकता। सन्तों को तो परमात्मा का दृढ़ विश्वास होता है। अतः हमारी तुम चिन्ता मत करो। प्रेत के बारे में यही बात एक नाथ सन्त ने और एक फकीर ने भी दादूजी से कही। तब दादूजी ने

कहा–

दादू मोहि भरोसा मोटा,
तारण तिरण सोई संग मेरे, कहा करे कलि खोटा।।टेक।।
दौं लागी दरिया तैं न्यारी, दरिया मंझ न जाई।
मच्छ कच्छ रहैं जल जेते, तिन को काल न खाई।।1।।
जब सूवे पिंजर घर पाया, बाज रह्या बन मांही।
जिनका समर्थ राखणहारा, तिनके को डर नाँही।।2।।
सांचे झूठ न पूजे कब हूं, सत्य ने लागे काई।
दादू साँचा सहज समाना, फिर वै झूठ विलाई।।3।।

;दादूवाणी पद संख्या–190द्ध

अर्थात्– मुझको भगवान का ही महान् भरोसा है, भक्तों को संसार से तारने वाले और स्वंय सब विकारो से तिरे हुये प्रभु मेरे साथ है। अतः खोटे कलियुगी प्रेत हमारा क्या कर सकता है? जैसे समुद्र व नदी से बाहर वन में अग्नि लगी हो वह समुद्र में नही जाती और उनके जल में रहने वाले मत्स्य कच्छपादि को वह अग्निरूप काल नही मार सकता और जैसे शुकपक्षी को घर तथा पिंजरा प्राप्त हो जाता है तब उसका शत्रु बाज पक्षी वन मे ही रह जाता है, घर आकर पिंजरे में स्थित शुकपक्षी को नही मार सकता, वैसे ही जिन भक्तों का रक्षक समर्थ परमात्मा है उनको कलियुगी प्रेत और कालादिका कुछ भी भय नही होता। सच्चे की बराबरी झूठा कभी नही कर सकता। सत्य को किसी प्रकार का दोष नही लगता। सच्चा भक्त तो सहज–स्वरूप परब्रह्म में समा जाता है और झूठा पुनः संसार में ही विलीन होता है।

प्रेत की मुक्ति

रात्रि को दादूजी ने सन्तों से कहा– कोई कुचेष्टा देखो तो भय नही करना, आप लोगों के रक्षक भगवान आपके पास ही हैं। जब अ(रात्रि का समय आया तब

प्रेत ने अपनी कुचेष्ठायें करनी शुरू कर दी। वह क्षण-क्षण में अपने रूप बदलने लगा। कभी मेंढा, कभी बकरा, कभी भैंसा, कभी गधा, कभी ऊंट बन जाता था। कभी पत्थर बरसने लगते थे। थोड़ी ही देर में जोर से आंधी चलने लगी। आंध ी बंद होने पर क्षण भर में अग्नि जलने लगती और क्षण भर में बुझ जाती। प्रेत की उक्त चेष्टाएं देखकर जो नवीन साधु हुये थे, वे कुछ डरने लगे। उनको भयभीत देखकर दादूजी ने प्रेत को प्रेत योनि से मुक्त करने का विचार किया। और दादूजी ने एक पद गाया जिससे परमात्मा की स्तुति की। उस पद को सुनकर वह प्रचण्ड प्रेत अपने साथियो सहित भूत योनि से मुक्त हो गया।

दातुन का वृक्ष

कान्हड़जी भूतड़ा माहेश्वरी दादूजी के परम भक्त थे। वे जब सुनते कि दादूजी आमुक स्थान में हैं तब दादूजी के दर्शन करने वहां जाया करते थे। एक बार वे दादूजी के दर्शन करने गये तब वे उदास थे। उन को उदास देखकर दादूजी ने पूछा- उदास क्यों हो ? तब कान्हड़जी ने कहा- गुरूदेव! पुत्र नही होने से मेरा मन उदास रहता है। कान्हड़जी की उक्त बात सुनकर दादूजी महाराज ने कहा- पुत्र तो हो जायेगा, परमात्मा का भजन किया करो। फिर कान्हड़जी के प्रथम पुत्र दूजनदास हुये और दूसरे पुत्र शेषोजी हुये। पहले पुत्र दूजनजी छोटी अवस्था में ही दादूजी के शिष्य हो गये। दूजनजी बाल ब्रह्मचारी ही थे। शेषोजी से कान्हड़जी का आगे वंश चला।

जब दादूजी ईडवा में निवास कर रहे थे तब एक दिन प्रातःकाल ही कान्हड़जी दादूजी के दर्शनार्थ तालाब के तट पर भजन शाल पर पहुंचे। एक इमली का हरा दांतुन मार्ग में से तोड़ ले गये। दादूजी को सत्यराम बोलकर प्रणाम किया फिर दांतुन चरणों में रख दिया। उसे देखकर दादूजी ने कहा- यह क्या है? कान्हडजी ने कहा- यह आप के लिये इमली का दांतुन मार्ग से तोड़ लाया हूं। दादूजी ने कहा- हरे वृक्ष को सताया है। मेरा राम तो सूखे दांतुन से भी दांत साफ कर

लेता है। आपने यह अच्छा नही किया। फिर दादूजी ने यह सोचकर कि हरा वृक्ष तोड़ा तो गया, अब इसको सफल बनाना ही चाहिये। दादूजी ने वह दांतुन किया और उसे बिना चीरे ही भूमि में रोप कर अपने कमंडलु का पानी उस में डाल दिया। फिर दूजनदास उस में प्रतिदिन पानी डालते रहे। इससे वह हरा होकर इमली का वृक्ष हो गया। वह दांतुन की इमली आज भी ईडवा में विद्यमान है। दीपमालिका के दिन उसका मेला भरता है। आस पास की जनता उसे बड़ी श्र(ा से पूजती है।

यहां से प्रस्थान करके रेवती ग्राम, राणी ग्राम, व तोसीना ग्राम में विचरने के बाद दादूजी पुनः ईडवा पधार गये।

ईड़वा पुनः पधारना

दूजनजी के आग्रह से दादूजी पुनः ईड़वा पधारे। दादूजी ईड़वा में आठ मास पहले रह कर गये थे। अब की बार भी चार मास ईड़वा में विराजे। इस प्रकार एक वर्ष का ईड़वा में निवास चरित्रकारों ने लिखा है। इन्ही दिनों में बीकानेर नरेश रायसिंह खाटू ग्राम में आये थे। कारण था कि वि.सं.1657 में बादशाह ने माध ोसिंह को हटाकर नागौर आदि परगने रायसिंह को जागीर में दिये थे। उनकी व्यवस्था के लिये खाटू आये थे। उन्होंने सुना कि भीमसिंहजी ;बड़े सुन्दरदासजीद्ध मेरे काका के गुरूदेव दादूजी आजकल ईडवा में विराज रहे है। भुरटिया राव रायसिंह को भी दादूजी के दर्शन की इच्छा हुई तब उन्होंने खाटू ग्राम में ही दादूजी को बुलाने का विचार किया। और पत्र लिखकर पत्रवाहक के साथ श्री दादूजी के पास भेजा। पत्रवाहक ने दादूजी को प्रणाम करके कहा- बीकानेर नरेश को आपके दर्शन और सत्संग की तीव्र इच्छा हो रही है और यह पत्र भेजा है। फिर पत्र खोलकर दादूजी ने पढ़ा। शिष्य सन्तों ने कहा- स्वामीजी महाराज! बीकानेर नरेश सुन्दरदासजी का भतीजा है और भाव से बुलाता है, तो खाटू पधारना चाहिये। सब शिष्यों की इच्छा देखकर दादूजी ने पत्रवाहक को खाटू चलने की स्वीकृति दे दी।

खादु पधारना

दादूजी शिष्यों के सहित पत्रवाहक के साथ ईडवा से प्रस्थान करके खाटू पहुंच गये। किन्तु पीछे से खाटू में एक गोकुलिये गोसांई को जब ज्ञात हुआ कि राजा ने दादूजी को बुलाया है, उसने राजा से कहा- आपने दादूजी को क्यों बुलवाया है? उसके साथ और भी साधु होंगे, यह व्यर्थ का खर्च क्यों लिया? राजा ने कहा- दादूजी बहुत अच्छे सन्त हैं और मेरे काका भीमसिंह ;सुन्दरदासजीद्ध भी उनके शिष्य है। गोसांई ने कहा- अच्छापन तो दादूजी ने त्याग दियाळहै। वह माला तिलक धारण नहीं करता है, इत्यादि बहुत सी बातें कहकर राजा को भड़का दिया। अन्त में राजा ने कहा- अब तो बुला ही लिये हैं, यदि वे आ गये तो उनके पास तो जाना ही पड़ेगा। गोकुलिये गोसांई ने कहा- अनादर कर देना चाहिये तब वह अपने आप ही यहां से चला जायेगा।

इधर पत्रवाहक ने राजा को सूचना दी कि दादूजी आ गये हैं। राजा ने दादूजी को अपने पास बुलाने के लिये कहा। राजा की श्र(ा कम हो जाने से उसने दादूजी का विशेष स्वागत सत्कार नही किया। गोकुलिये गोसांई ने राजा को कहा- जब दादूजी आ ही गये हे, तब उन्हे एक माला अवश्य धारण करवा दो। अगर मना करे तो दादूजी को मरवा दो। राजा ने एक स्वर्ण की माला बनवाई और उसे लेकर दादूजी के पास आया और माला को आगे रखकर दादूजी को कहा- यह माला अवश्य धारण कर लो । सभी साधु माला रखते हैं, आपको भी माला रखनी चाहिये। दादूजी ने कहा- यह जो तुमने कहा है, हमें मान्य नही है। हम तो संसार के राजा राम की आज्ञा सदा शिर पर रखते हैं, उन्हीं की आज्ञा के अनुसार ही काम करते हैं।

मतवाला हाथी छोड़ना

दादूजी की यह बात सुनकर राजा ने अपने को अपमानित समझा और उसमें

दुर्बु(उत्पन्न हो गई। उसने दादूजी को मारने के लिये अपने गुरू तथा मंत्रियों से परामर्श किया कि दादूजी को अतिशीघ्र मार दिया जाये और यह कलंक हमारे उपर भी न लगे। तब सबने कहा- आपका हाथी मतवाला हो गया है, उसको दादूजी पर छोड़ दो। वह मार देगा और आप कलंक से बच जायेंगे। सबको कह दिया जायेगा कि मतवाला हाथी दादूजी के सामने आ गया था और उसने दादूजी को मार दिया।

मतवाला हाथी द्वार पर छोड़कर दादूजी को कहलवा दिया कि अब आप लोग जिस स्थान पर ठहरे हुये है वहीं चले जाओ। तब दादूजी अपने शिष्यों के साथ उठकर चल पड़े। गरीबदासजी ने मार्ग में मतवाले हाथी को दादूजी के सामने आते देखा तो उन्होंने कहा- स्वामिन्! इस राजा का विचार ठीक नही ज्ञात होता है। अतः हमको इस मार्ग से न चलकर किसी अन्य मार्ग से चलना चाहिये। तब दादूजी ने कहा- हमारी रक्षा तो समर्थ परमेश्वर ही करेगे। इतने में ही हाथी समीप आ गया । उसे रोकने के लिये जब रज्जब जी आगे बढ़े तब दादूजी ने रज्जब जी को रोकते हुये कहा- रूक जाओ किसे रोकने जाते हो, इसमें हमारा रक्षक परमेश्वर भी तो विराजमान है। दादूजी निर्भयता पूर्वक उसी मार्ग से आगे बढ़ते गये। राजा आदि भी छिपकर देख रहे थे। हाथी के समीप आने पर दादूजी ने उसके मस्तक पर हाथ रखा, हाथ रखते ही वह मतवाला हाथी चित्रलिखित सा स्तम्भित हो गया, फिर शीश झुकाकर आदर से सन्तों की चरण रज को अपने मस्तक पर डालने लगा।

जिस प्रकार सांभर शहर में गजेन्द्र नतमस्तक हो गया था उसी प्रकार यहां खाटू ग्राम में भी गजेन्द्र नतमस्तक हो गया। सन्त का महातप और सामर्थ्य देखकर बीकानेर नरेश डरने लगा। अपना घमंड छोड़कर शालीनता से सन्त शरण में आया और अपने गुनाहों की माफी मांगने लगा।

शिष्य जयमल चौहान

सन्तों की यात्रा नदी प्रवाह के समान होती है। जब सेवक भक्तों का भाव उमड़ता है तो भक्ति-ज्ञान का जल बहाते हुये आनन्द दे जाते हैं। खाटू से प्रस्थान करके शिष्यों सहित विचरते हुये दादूजी करड़ाला, तोसीना, नौसाला ग्राम होते हुये घाटवा ग्राम पधारे। फिर वहां से मारोठ पधारे। मारोठ से बूंलीग्राम के जयमल चौहान दादूजी को अपने ग्राम में ले आये। सत्संग की अच्छी व्यवस्था की। जयमल चौहान बड़े वीर पुरूष थे और कभी-कभी कृपणों को लूट कर सन्तों और गरीबों की सेवा किया करते थे। दादूजी ने उनके कार्य को जानकर दयावश जयमल को कहा- दूसरों को लूट कर खुद आनन्द करके तुम अपना धर्म नष्ट कर रहे हो। अब तुम यह कर्म त्याग कर भगवत् भजन करो । दादूजी के ये वचन जयमल के मन में बाण के समान लगे। उसने तत्काल अपने शस्त्र फेंक दिये और दादूजी के चरणों में जा गिरा। तब दादूजी ने उसे गुरूमंत्र देकर दीक्षा दे दी। आगे चलकर ये परम विरक्त, सि(एवं अच्छे वाणीकार सन्त हुये। ये दादूजी के 52 शिष्यों मे माने जाते हैं।

एक बार एक दुष्ट ने इर्ष्यावश जयमलजी पर मूंठमंत्र ;मारणमंत्रद्ध चलाया था। तब इन्होने तत्काल ही राम-रक्षामंत्र की रचना की और इसके द्वारा प्रभु से रक्षा की प्रार्थना की। फिर अविचल मंत्र का जाप आरम्भ कर दिया। इससे मूंठ लौट कर चलाने वाले दुष्ट पर जाकर गिरी। फिर वह दुष्ट जयमलजी की शरण में आया, तब इन्होंने उसे मृत्यु से बचाया। आज भी राम- रक्षामंत्र के जाप से अनेक व्याधियों से छुटकारा मिलता है। यह जगत प्रसि(है।

तिलोकशाह का संशय नष्ट करना

दादूजी बूंलीग्राम से प्रस्थान करके खालड़ा होते हुये शाहपुरा पहुंचे। शाहपुरा में तिलोकशाह ने दादूजी की दस दिनों तक बहुत सेवा की। दादूजी के प्रस्थान करते समय तिलोकशाह के मन में विचार आया कि मैने तो गुरूदेव का कुछ चमत्कार देखा ही नही है।

दादूजी ने उसके मन की बात को जान लिया ओर तिलोकशाह को बुलाकर कहा– जहां पालकी रखी है उसके पास एक चद्दर बिछी हुई है। उस पर नई रजाई के नीचे मेरी चद्दर होगी वह ले आओ। तिलोकशाह गया और वहां चद्दर को खीचा तो वहां दादूजी को बैठे हुये देखा। फिर उसने छत पर चढ़कर देखा तो दादूजी बाहर शिष्यों के साथ खड़े हैं। तिलोकशाह को अति आश्चर्य हुआ और वह वस्त्र लेकर दादूजी के पास आया । तब दादूजी ने कमर में बांधने का वस्त्र देकर कहा– इसे मेरी कमर में बांध दो। तब तिलोकशाह उस वस्त्र को दादूजी महाराज की कमर में बांधने लगा तो एक अद्भुत चमत्कार देखने में आया। दादूजी की कमर वस्त्र में नही बंधी। वस्त्र के ही गांठ लग गई। इससे तिलोकशाह को बड़ा आश्चर्य हुआ और दादूजी के चरणों में गिर गया।

यहां से प्रस्थान करके दादूजी किरडोली, डीडवाने, रोढू ग्राम होते हुये पालडी ग्राम में पधारे।

पालडी ग्राम आगमन

पालडी ग्राम मे पधारने के बाद वहां सत्संग होता रहता था। एक दिन खोजा जी ने दादूजी से पूछा– स्वामिन्! जीव और ब्रह्म कैसे रहते है। आप कृपा करके बतावें। तब दादूजी ने कहा–

दादू जल में गगन गगन में जल है, पुनि वे गगन निराले।
ब्रह्म जीव इहि विधि रहै, ऐसा भेद विचारे ाा2।।

;दादूवाणी– विचार का अंगद्ध

अर्थात्– जैसे जल में प्रतिबिम्ब रूप से आकाश विद्यमान है तथा जल की सत्ता आधारभूत व्यापक आकाश में है अतः जल भी आकाश में है। इस प्रकार बाहिर

भीतर आकाश का जल से संबंध होन पर भी आकाश जल से युक्त नही होता। वैसे ही जीव ;बुि(द्ध में शु(कूटस्थ चैतन्य प्रतिबिम्ब रूप में वद्यमान है तथा जीव ;बुि(द्ध भी आध ाार भूत शु(चैतन्य पर आश्रित है। अतः बाहिर व भीतर जीव का ब्रह्म से सम्बन्ध होन पर भी ब्रह्म जीव ;बुि(, अन्तःकरणद्ध के धर्म अल्पज्ञत्वादि से युक्त नही होता। जीव ब्रह्म के इस भेद का विचार करना चाहिये।

फिर खोजाजी ने पूछा- आत्मा और राम कहाँ रहते हैं। तब दादूजी ने कहा-

ज्यों दर्पण में मुख देखिये, पानी में प्रतिविम्ब।
ऐसे आतम राम है, दादू सब ही संग।।3।।

;दादूवाणी- विचार का अंगद्ध

अर्थात्- जैसे दर्पण में मुख का और जल में सूर्यादि का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है, वैसे ही ब्रह्म का प्रतिबिम्ब अन्तःकरण में आत्मरूप से रहता है। उसी की सत्ता से सब व्यवहार चलता है।अतः ब्रह्म सब के साथ ही है।

पुनः खोजी जी ने पूछा- साथ है तो दिखते क्यों नही है? तब दादूजी ने कहा-

जब दर्पण मांही देखिये, तब अपना सूझे आप।
दर्पण बन सूझे नही, दादू पुण्य रू पाप।।

;दादूवाणी-विचार का अंगद्ध

अर्थात्- जब दर्पण में देखा जाय तो अपना मुख और उसके गुण दोष अपने आप ही दिख जाते है। दर्पण बिना नही दीखते। वैसे ही अन्तःकरण द्वारा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब और पाप पुण्य रूप संसार प्रतीत होता है। अन्तःकरण ने तो एक अद्वैतब्रह्म ही है।

खोजीजी ने पुनः फिर पूछा-ज्ञान से कैसे दिखता है? तब दादूजी ने कहा-

जींये तेल तिलन्न में, जींये गंध फूलन्न।
जींये माखन क्षीर में, ईंयें रब्ब रूहन्न।।5।।

;दादूवाणी–विचार का अंगद्ध

अर्थात्– जेसे तिलों में तेल, पुष्पों में सुगंध, दूध में मक्खन है,वैसे ही सब जीवात्माओं में ब्रह्म व्यापक है।

माता और शिशु को देखके हंसना

एक दिन पालड़ी में दादूजी अपने कुछ शिष्य सन्तों के साथ भ्रमण करके आ रहे थे। मार्ग में एक घर के बाहर चबुतरे पर बैठी एक बाई अपने बच्चे को दूध पिला रही थी। उसे देखकर दादूजी खड़े होकर शिष्यों की ओर देखते हुये मंद–मंद हंसने लगे। तब शिष्यों ने हंसने का कारण पूछा–स्वामिन्! आपको हंसी, हंसने के प्रसंगो पर भी नही आती है। अतः इस समय हंसने का कोई विशेष कारण हो सकता हैं कृपा करके बताइये। इससे लोगों को भी बोध होगा। शिष्यों के उक्त बात सुनकर दादूजी बोले– यह जो चबूतरे पर बैठी हुई बाई बच्चे को दूध पिला रही है, इसी को देखकर हंसी आ गई थी। हंसी का कारण है कि यह बच्चा अपने पहले जन्म में इस बाई का पति था। विवाह के कुछ ही वर्ष पश्चात् यह मर गया था किन्तु इसका राग अपनी पत्नी में बहुत दृढ़ था। पति के मर जाने से इस बाई ने दूसरा विवाह कर लिया, तब इसके पति ने दृढ़ राग के कारण इसके गर्भ में आकर जन्म लिया, उस अपने पहले पति को ही अब वह पुत्र के रूप में दूध पिला रही है। संसार की ऐसी उलटी रीति को देखकर ही ;अर्थात पति पुत्र हो जाता है और स्त्री माता हो जाती हैद्ध हंसी आ गई थी।

दादूजी पालड़ी से प्रस्थान कर के बसी ग्राम होते हुये कडेल ग्राम मे पधारे।

अजमेर से फकीर का आना

कड़ेल में अजमेर से एक फकीर आया और दादूजी के आगे एक डोंगे में मिश्री और फूल रखकर दादूजी को प्रणाम किया और बोला– मैं अजमेर ख्वाजा साहिब की दरगाह में आया हूं। पीर साहिब ने आप के लिये यह प्रसाद भेजा है। दादूजी ने उस डोंगे को स्वीकार नही किया और उसके हाथ भी नही लगाया। फकीर से कुछ परमार्थ की चर्चा करते रहे। इतने में दो घड़ी व्यतित हो गई। उसी बीच में डोंगे के मिश्री और फूलों के बताशे बन गये। फिर दादूजी महाराज ने फकीर को कहा– यह बताशे प्रसाद रूप में ले जायें। पीर साहब को दे देना ओर अब आप पधार जायें। दादूजी महाराज तो अन्तर्यामी थे, सब के मन की जानते थे। अपने काम की वस्तु नही होती थी उससे दूर ही रहते थे। फकीर के मिश्री और फूलों के बताशे बनाकर उसकी वस्तु उसी को दे दी। फकीर ने भी यह सोचा कि मिश्री और फूलों के बताशे कैसे बन गये? इस डोंगे को तो किसी ने हाथ भी नही लगाया था। यह तो यहां का यहां ही पड़ा था। इससे ज्ञात होता है कि ये तो इन महात्मा की ही करामात है। आज मैं ध न्य हूं। ऐसे गुप्त निधि रूप महात्मा के दर्शन मुझे प्राप्त हुये हैं। फिर फकीर प्रणाम करके चला गया।

दादूजी के शिष्य सन्तों ने दादूजी से पूछा– स्वामिन्! आप तो अन्तर्यामी हैं किन्तु हम इस रहस्य को नही समझ पाये कि मिश्री और फूल जो पीरों के थे, वे आपने स्वीकार क्यों नही किये और वे बताशे के रूप में कैसे बदल गये ? दादूजी ने कहा– जो वस्तु हरि को नही चढती, सन्त उस वस्तु के समीप भी नही जाते हैं। इसलिये हमने नही लिये किन्तु किसी का अपमान करना भी अच्छा नही होता है। इसलिये उनकी वह भेंट उनको ही दूसरे रूप में लौटा दी। मिश्री और फूलों के बताशे तो प्रभु कृपा से बन गये। यह तो काई बड़ी बात नही है।

विविध प्रकार की लीलायें करते हुये दादूजी ने कडेल ग्राम से प्रस्थान करके आलण्यास ग्राम में सत्संग किया। इसके पश्चात् केवलपुरा में 12 दिन तक सत्संग करने के पश्चात् नील्या ग्राम पधारे। नील्या नरेश ने दादूजी का बहुत सम्मान किया। यहां के भक्तों को संतुष्ट करके दादूजी कैरे ग्राम पधारे।

आल्हण भक्त पर दादूजी की कृपा

कैरे ग्राम में आल्हण नामक भक्त के मन में भक्ती भाव उमड़ रहा था। वह दादूजी के गुरूचरणों में गिर पड़ा। आल्हण भक्त ने अपने हाथ से बनाया हुआ कम्बल गुरूदेव को भेंट किया। तब हरि आज्ञा से दादूजी ने ग्रहण कर लिया। आल्हण गुरूदेव के कमण्ड़ल का जल पीना चाहता था। अन्तर्यामी गुरूदेव ने उसकी इच्छानुसार कमण्ड़ल का जल उसे पिलाया। जल प्रसाद को पाकर आल्हण भक्त के हृदय में ज्ञान का प्रकाश फैल गया और दिव्य दृष्टि हो गई। आल्हण भक्त ने दादूजी को अपने घर चलने की प्रार्थना की और दादूजी ने अपनी सहमति दे दी।

गांव वालों ने आल्हण भक्त को कहा- तुम दादूजी को अपने घर मत लेकर आओ, तुमसे इतने सन्तों की सेवा कैसे हो सकेगी? तुम तो साधारण स्थिति के हो। आल्हण के पास धन तो नही था। लेकिन प्रेम भक्ति अपार थी। फिर आल्हण दादूजी को अपने घर ले आया। वह सन्तों की सेवा करने के लिए गांव के श्रीमानों के पास धन लेने गया। उन सब लोगों ने उसकी सहायता करने से मना कर दिया। तब वह वापिस घर आया और उसका मुख उदास था। दादूजी ने उसको उदास देखकर पूछा- क्यों उदास हो रहे हो? तब उसने कहा- स्वामीजी महाराज! आप तो कृपा करके मेरे घर पर पधार गये किन्तु सब ग्राम वाले मेरे से रूष्ट हो गये हैं। मुझे कर्ज नही देते हैं। तब दादूजी महाराज ने कहा- तुम दुःखी मत होओ, तुम तो जो तुम्हारे घर में है वही अन्न बनाकर सन्तों को भोजन कराओ, वही बहुत है सन्त उसको भी नही खा सकेंगे। तब आल्हण ने कहा- स्वामिन्! घर में तो एक समय जितना भी नही है। दादूजी ने कहा- वह तो बहुत है, किन्तु ग्राम वाले कर्ज देने को क्यों नट गये? आल्हण ने कहा- यहां ग्राम में जो श्रीमान् व्यक्ति है वे सलेमाबाद वाले परशुरामजी के भक्त है। अतः वे आपकी सेवा नही करना चाहते हैं और न ही आपकी सेवा के निमित्त मुझे कर्ज देते हैं। तब दादूजी ने कहा- कोई बात नही, तुम भय मत करो। तुम सन्तों को तथा अन्य बस जिनको भोजन

कराना चाहो भोजन कराते रहो। जितने दिन सन्तों को रखना चाहते हो उतने दिन रखकर सत्संग करो। भगवान की कृपा से तुम्हारे कोई भी कमी नही रहेगी। जब सर्व सुखदाता दादूजी महाराज ने आल्हण के घर भोजन किया, तबसे सामग्री उसके घर अटूट हो गई। उसने देखा सब सन्तों ने भोजन कर लिया हे और सन्तों के दर्शन करने वाले तथा जो सत्संग के लिये आये थे वे भी सब भोजन कर गये किन्तु समाग्री उतना ही दीख रही है। यह देखकर आल्हण के हर्ष की सीमा नही रही। उस ग्राम के जो भी साधु, ब्राह्मण, गरीब थे उनको भी बुला-बुलाकर भोजन कराने लगे। तब तो ग्राम के लोगों ने महान् आश्चर्य माना और सब प्रसाद ले जाने लगे। आल्हण के घर दिन भर अन्न क्षेत्र चलता रहा।

आल्हण का दो मास की बछड़ी को दुहना

इधर कैरे ग्राम में परशुराम के भक्तों ने सलेमाबाद सूचना भेजी। जब परशुरामजी को सूचना मिली कि दादूजी यहां से चले गये हैं, तब वे अपनी मण्डली सहित कैरे ग्राम में पधार गये। कैरे ग्राम के भक्तों ने कहा- आप आल्हण भक्त को अपनी साधन प(ति में लगा लें, फिर हम आप सबकी साधन प(ति अपना लेंगे। परशुरामजी ने आल्हण को बुलवाया और कहा- तुम हमारा मत स्वीकार कर लो और दादू मत छोड़ दो। आल्हण ने कहा- आप ऐसा आग्रह क्यों कर रहे है? परशुरामजी ने कहा- हमारा मत सनातन है, श्रेष्ठ है। आल्हण ने कहा- अच्छा फिर परीक्षा कर लो। वहीं पास में एक दो मास की बछड़ी बैठी थी। उसकी ओर इशारा करके आल्हण ने कहा- जो इस बछड़ी का दूध निकाल देगा उसका मत सत्य माना जायेगा। आप लोग सन्त हैं और बड़े हैं पहले अधि ाकार आपका है मैं तो गरीब हूं। आल्हण की बात सुन परशुराम जी नट गये।

आल्हण ने कहा- मैं दूध निकाल दूंगा तब तो दादूजी का मत श्रेष्ठ मानोगे? परशुरामजी ने सोचा दो मास की बछड़ी का दूध कैसे निकालेगा, इसका दिमाग ठिकाने पर नही है। तब उन्होंने कहा- हां, तब मान लेंगे। फिर आल्हण भक्त ने बछड़ी की पीठ पर हाथ फेरा और 'सत्यराम' बोलते हुये उसे खड़ी करके बछड़ी को दूह कर दूध से बर्त्तन भर दिया। वहां जितने भी लोग थे सब ने

आल्हण की इस शक्ति का चमत्कार देखा और उनको दादूजी का सच्चा भक्त मानने लग गये।

दादूजी कैरे ग्राम से प्रस्थान करके पादूग्राम, ईड़वा, करडाला होते हुये त्यौंद पधारे।

त्यौंद आगमन

त्यौंद ग्राम में बहुत विशाल सन्त सम्मेलन हुआ। सन्त उपदेश से सब ध
ान्य हुये। त्यौंद में एक दिन भगवान दास नामक व्यक्ति ने दादूजी से पूछा-स्वामिन्! ऐसा कौन सा तीर्थ जल है जिसमें स्नान करने से तन मन बु(ि
और पाँचों इन्द्रियाँ पवित्र हो जाय। तब दादूजी ने कहा-

दादू राम नाम जलं कृत्वा, स्नानं सदा जितः।
तन मन आतम निर्मलं, पंच भू पापं गतः।।60।।

;दादूवाणी-स्मरण का अंगद्ध

अर्थात् राम नाम को ही जल समझकर, निरन्तर इन्द्रिय-दमन पूर्वक राम-नाम स्मरण रूप स्नान करो। ऐसा करने से ही पांच विषयों की आसक्ति से होने वाले पाप नष्ट होकर साधक के तन, मन, बु(ि आदि निर्मल होते है।
दादूजी के वचनों से प्रभावित होकर भगवान दासजी दादूजी के शिष्य बन गये जो कि सौ शिष्यों में हैं।

शिष्य कृष्णदासजी

त्यौद में एक दिन कृष्ण नामक व्यक्ति ने दादूजी से पूछा स्वामी परमेश्वर में चित क्यों नही लगता है। तब दादूजी ने कहा-

दादू विषय विकार सौ, जब लग मन राता।
तब लग चित्त न आवही त्रिभुवनपति दाता।।65।।

;दादूवाणी-स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्- जब तक मन विषय विकारों में अनुरक्त होकर इन्द्रियों के साथ भ्रमण कर रहा है तब तक मुक्ति प्रदाता त्रिलोकी के स्वामी परमेश्वर का ध्यान चित्त में नही आता।

तब ये दादूजी के शिष्य होकर कृष्णदासजी कहलाये और ये दादूजी के सौ शिष्यों में हैं।

शिष्य वनमालीजी

एक दिन त्यौंद में वनमाली नामक सज्जन ने दादूजी से पूछा-स्वामिन्! भजन के लिये घर अच्छा रहता है या वन? तब दादूजी ने कहा-

ना घर भला न वन भला, जहां नही निज नाम।
दादू उनमनि मन रहै, भला तु सोई ठाम।।77।।

;दादूवाणी-स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्- न तो घर अच्छा है और न वह वन ही, जहां निवास करते हुये निज प्रभु का नाम हृदय में ने रहे। उत्तम तो वही है जहाँ पर रहते हुये निरंजन राम के स्वरूप में चित्त की वृति की लय रूप उनमनी अवस्था बनी रहे।
फिर ये दादूजी के शिष्य बन गये। ये दादूजी के 52 शिष्यों में है।

शिष्य जोधाजी

एक दिन त्यौंद में जोधा नामक सज्जन ने दादूजी से पूछा-स्वामिन्! राम नाम तो सब ही करते हैं। किन्तु जैसा आपने कहा- वैसा सुख तो सबको प्राप्त होता हुआ

प्रतीत नही होता है। इसमें क्या रहस्य है? कृप्या करके समझाइये। तब दादूजी ने कहा–

दादू राम नाम सब को कहै, कहिबे बहुत विवेक।
एक अनेकों फिर मिलै, एक समाना एक।।8।।

;दादूवाणी –स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्– यद्यपि राम–नाम का स्मरण करते तो सभी हैं किन्तु स्मरण करने में बड़ा रहस्य है। एक साधक तो स्मरण करके भी सकाम होने से पुनः अनेक विषयों में जा मिलता है। और एक विवेक पूर्वक निष्काम भाव से स्मरण करने से अन्त में त्रिविध भेद शून्य एक ब्रह्म में ही मिलता है।
तब ये दादूजी के शिष्य बने और ये दादूजी के सौ शिष्यों में है।
इस प्रकार त्यौंद में दादूजी के अनेको शिष्य बने थे।

रानी कनकावती को दर्शन

त्यौंद से प्रस्थान करके मोरड़ा होते हुये पैदल प्रयाण करते हुये सांभर नगर में पहुंचे। नगरवासियों ने अति उत्साह से दादूजी का स्वागत किया। दो दिन बिचूण में विराजने के पश्चात् भैराणा होते हुये रत्नपुरा में चार दिनों तक सतसंग चलता रहा। इसी अवसर पर आमेर नरेश की रानी कनकावती के मन में श्री दादूजी के दर्शनों की अभिलाषा जागी। उन्होंने अपने राजपुरोहित ब्रह्मभट्ट को दादूजी की सेवा में भेजा और प्रार्थना की कि रानी ने आपके दर्शन पाकर ही अन्न–जल ग्रहण करने का निश्चय किया है। दयालु सन्त उसी समय आमेर के लिये प्रस्थान कर गये और आमेर महल के निवास में पहुंचकर कनकावती को दर्शन दिये । रानी ने अति उत्साह से आमेर में सन्त महोत्सव का आयोजन किया। आमेर से प्रस्थान कर के जली, सांगानेर, काणेता, बसी, अहलड़ी होते दौसा ग्राम पधारे।

शिष्य छोटे सुन्दरदासजी

सुन्दरदासजी का जन्म दौसा ;जयपुरद्ध में खण्डेलवाल वैश्व परमान्नद चौखा के घर वि.सं. 1653 चैत्र शुक्ला अष्टमी को हुआ था। इनकी माता का नाम शान्ति था। शान्ति आमेर के सौंकिया गोत्र के खण्डेलवाल वैश्व परिवार की पुत्री थी।

कुछ वर्ष पहले आमेर जग्गाजी जब भिक्षा लेने गये थे।तब उन्होंने कहा था- दे माई सूत, ले माई पूत। तब शान्ति ने ही पुत्र की इच्छा कामना करते हुये जग्गाजी को सूत दे दिया था। तब जग्गाजी ने अपना शरीर त्याग कर इनके घर जन्म लिया।

जब दादूजी दौसा पधारे तब परमानन्द चोखा बालक के साथ लेकर दादूजी के पास आये और बालक का मस्तक दादूजी के चरणों में रखा। दादूजी ने बालक के मस्तक पर अपना वरदहस्त रखते हुये कहा- यह बालक तो सुन्दर है। तब उसी समय परमानन्द ने बालक का नाम सुन्दर रख दिया। इसके बाद सुन्दर के व्यवहार, विचार आदि सब सुन्दर ही सुन्दर होन लगे। एकादश वर्ष की आयु में घर त्याग कर जगजीवनजी व रज्जबजी आदि के साथ काशी में वेदान्त पुराणादि का अध्ययन करने लगे। दादूजी की वाणी के अनुसार अपना साधन व व्यवहार करते थे।

एक दिन फतेहपुर से भिक्षा लेकर लौट रहे थे। मार्ग में खेतों के दोनों तरफ मिट्टी की दीवारे थी। सामने से वहां एक नवाब शिकार करके अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ लौट रहा थी। उनसे बचने के लिये सुन्दरदासजी मिट्टी की के उपर खड़े हो गये। एक सैनिक जो सबसे आगे था प्यास से व्याकुल था। सुन्दरदासजी के हाथ में तूंबी देखकर बोला- बाबा! पानी पिला दो। सुन्दरदासजी ने कहा-पानी नही है, छाछ है, पीना चाहो तो पी लो। सैनिक ने कहा- छाछ ही पिला दीजिये। फिर सुन्दरदासजी ने तूंबी से उस सैनिक को छाछ पिला दी। फिर उसके बाद प्रत्येक सैनिक छाछ मांग कर पीने लगा।

शिविर में जाकर सैनिकों ने आपस में कहा- आज तो प्यास से व्याकुल हो गये थे, साध

ु ने छाछ पिलाई तो शान्ति मिली। तब सब सैनिकों को अति आश्चर्य हुआ कि साधु की तूंबी में तो अधिक से अधिक तीन पाव छाछ होगी, उससे सबकी प्यास कैसे मिटी? यह तो कोई विशेष चमत्कार की बात है। इस घटना का जब नवाब को पता चला तो वह अपने मंत्री, सामन्त आदि के साथ सुन्दरदासजी जहां ठहरे हुये थे वहां गये। वहां जाकर नवाब ने सुन्दरदासजी को प्रणाम करके कहा- महाराज! आपके पास दूध व छाछ किसका है? यहां तो कोई गाय या भैंस भी नही है। सुन्दरदासजी ने कहा- जब ज्ञान, वैराग्य भक्ति और साक्षी स्वरूप में निष्ठा हो तो उसके यहां कोई भी कमी नही रहती है। नवाब ने कहा- आपने ईश्वर को प्रसन्न किया है, कोई चमत्कार दिखा दीजिये। तब सुन्दरदासजी ने कहा- आसन का पल्ला उठाकर देख लो। नवाब ने एक पल्ले को उठा कर देखा तो वहां का तालाब दिखाई दिया। दूसरे के नीचे उसकी सेना, तीसरे के नीचे फतेहपुर नगर और चौथे के नीचे गहरा वन दिखाई दिया इन सबको देखकर नवाब डर गया। नवाब की आस्था सुन्दरदासजी पर बहुत हो गई थी। इसके बाद सुन्दरदासजी फतेहपुर रहेने लग गये थे।

सुन्दरदाजी की स्मरण शक्ति व रचना शक्ति महान थी। ये महान कवि सन्त थे। इन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचनायें की है। वि.सं.1746 कार्तिक शुक्ला अष्टमी बृहस्पतिवार के दिन नश्वर शरीर को त्याग कर सुन्दरदासजी ब्रह्मलीन हो गये।
भारत सरकार ने इनकी यादगार में एक डाक टिकट भी जारी किया है।

जगजीवनरामजी के कहने पर दादूजी टहलड़ी पहाडी पर पधारे। टहलड़ी पहाडी पर बहुत दिनों तक दादूजी का सत्संग होता रहा। इसके बाद कल्याण-पारण ग्राम पधारे। वहां से गुरूदेव को आंधीग्राम के शिष्य ले गये। इसके बाद दादूजी राहोली ग्राम और रतनपुरा ग्राम होते हुये पुनः सांभर पधारे।

भूधरदास की ईर्ष्या

जब सांभर में दादूजी का सत्संग प्रचार बढ़ने लगा तब वहां के भूधरदास नामक एक वैरागी के मन में दूदजी से ईर्ष्या हो गई। उसने सोचा दादूजी पहले के समान यहां पुनः न जम

जाये। दादूजी के यहां अधिक रहने से हमारी प्रतिष्ठा कम हो जायेगी। अतः दादू को यहां नही रहने देना है। भूधरदास ने अपने शिष्यों से कहा- तुम दादू का ध्यान रखो कि वह नगर से बाहर शौच के लिये वन में कब जाता है ? शिष्यों ने पूछा- क्यों, दादू से आपका क्या काम है ? भूधरदास ने कहा- उसे यहां से भगाना है। जब वह वन में जाये, उसका ध्यान रखो और मेरी आज्ञा मानना तुम्हारा धर्म हे। मैं कहूं वैसा ही तुमको करना चाहिये।

जब दादूजी अकेले ही शौचक्रिया के लिये वन को जा रहे थे तब शिष्यों ने भूध ारदास को बता दिया। फिर भूधरदास ने अपने शिष्यों को साथ लेकर दादूजी के पास पहुंच गये और दादूजी को डंडे मारने का विचार करने लगे। तब परमात्मा ने सोचा ये तो दुर्जन है, अवश्य सन्तों को सतायेंगे। अतः सन्तों की रक्षा करना मेरा मुख्य काम है, मैं सन्तों की रक्षा अवश्य करूगा ही।

भूधरदास की ईर्ष्या का परिणाम

परमेश्वर ने एक अति आश्चर्य का काम किया। भूधरदास के शिष्यों की दृष्टि ही फेर दी। उनको अपना गुरू भूधरदास ही दादूजी के रूप में भासने लगा और दादूजी उसके गुरू भूधरदास के रूप में दीखने लगे। तब उन शिष्यों ने भूध ारदास के डंडे मारने आरम्भ कर दिये। शिष्यों ने दादूरूपधारी भूधरदास को कहा- जैसा तू गुरू है, वैसी ही तेरी पूजा कर रहे हैं। फिर कहा- आज ही सांभर से भाग जा, नही तो जान से मार देंगे। फिर दादूरूपधारी भूधरदास अधमरा हो गया। तब भगवान ने उनकी दृष्टि ठीक कर दी। जिससे शिष्यों को दादू और अपना भूधरदास अपने-अपने रूप में ही दीखने लगे। तब उन्होंने देखा कि हमने अपने ही गुरू को मारा हे, यह उचित नही किया है। फिर दादूजी ने उनको कहा- भैया तुमने यह क्या किया, अपने ही गुरूजी को क्यों मारा है? दादूजी का उक्त वचन सुनकर भूधरदास के शिष्यों ने दादूजी के चरणों में प्रणाम करके कहा- स्वामिन्! इस अभागे गुरू ने हमें बहकाया था। आपको मारने की योजना बनाई थी। इसने अपना किया ही पया है। आपका प्रताप इससे सहा नही गया था। इसलिये

आपको मारकर यहां से भागना चाहता था। उसी का फल इसको मिला है। उक्त घटना घटने से वैरागी भी बहुत डर गया। अपने शिष्यों सहित भूधरदास दादूजी के चरणों में पड़कर बोला- हे स्वामिन्! अब हम आपके शिष्य हैं।

सांभर में दादूजी 20 दिनों तक विराजे और इसके बाद करड़ाला होते हुये मोरड़ा पधारे।

मोरड़ा पर मधुर जल की कृपा

मोरड़ा के भक्तों ने अब की बार दादूजी से प्रार्थना की- स्वामी जी! आप तो समर्थ सन्त है। हमारे यहां गांव में खारा पानी है। तालाब में जब तक पानी रहता है, तब तक मोरड़ा ग्रामवासियों को मीठा पानी मिलता है। तालाब का पानी सूख जाने पर यहां के निवासियों को बड़ा कष्ट रहता है। अतः आपसे प्रार्थना है कि हम पर मीठे पानी की कृपा करें जिससे हमें बारह महीने मीठा जल मिलता रहे। मोरड़ा निवासियों की उक्त प्रार्थना सुनकर दादूजी ने कहा- आप लोग चिन्ता छोड़ दें। आपकी आशा तो परमात्मा पूर्ण कर देंगे। तुम लोग इस वट वृक्ष के पास एक कुआं खुदा लो, उसमें मीठा पानी आयेगा। फिर ग्रामवासियों ने शीघ्र ही वहां कुआं खोद दिया और उसमें गंगाजल के समान मधुर जल निकला। उसी कूप का जल सारा गांव पीता है।

लालदास बणजारा का आना

एक दिन मोरडा में लालदास बणजारा दादूजी के पास आया। उसके साथ बहुत से बैल माल से लदे हुये थे। किन्तु वह पानी के अभाव में अपने साथी बणजारों तथा बैलों सहित प्यास से व्याकुल हो रहा था। लालदास और उसके साथियों ने दादूजी से वर्षा कराने के लिये प्रार्थना की। तब दादूजी ने वर्षा के लिये भगवान से प्रार्थना की। प्रार्थना के बाद आकाश में बादल छा गये और बहुत अच्छी वर्षा हुई। दादूजी ने लालदास को कहा- बणजारे के द्वारा पाप होता है। गायों के पुत्रों

को बोझे मारता है। इसलिये तुम यह काम छोड़ दो और बैठे-बैठे व्यापार किया करो। लालदास ने कहा- स्वामिन्! यह काम कैसे छूट सकता है? इतने बैलों को मैं कैसे छोड़ सकता हूं? यदि इन बैलों को छोड़ दूं तो ये भूख से मर जायेंगे और मुझे पाप लगेगा। तब दादूजी ने एक पद उच्च स्वर में गाया। उस पद को सुनकर गाय, बैल और सब बणजारे जीवन मुक्त हो गये। लालदास दादूजी का शिष्य बन गया । आगे चलकर ये एक अच्छे सन्त हुये। ये 52 शिष्यों में है। आपने पिराण पट्टण ;सिरोहीद्ध ग्राम में साधना की थी।

लालदास का पुत्र चतुर्भुज भी दादूजी का शिष्य बन गया था। दादूजी के उपदेशानुसार साधना करके उच्च कोटि के सन्त बन गये थे। चतुर्भुजजी दादूजी के 52 शिष्यों में है।

दासजी का आना

एक दिन दासजी अपनी रचित एक लाख वाणी का ग्रन्थ लेकर मोरड़ा में दादूजी के पास आये और अपना ग्रन्थ दादूजी के सामने रखा तब दादूजी ने पूछा- यह क्या है? दासजी ने हाथ जोड़कर कहा- मेरी रचित एक लाख वाणी है। तब दादूजी ने कहा- रामजी! जितना परिश्रम इस रचना में किया, उतना राम भजन करते तो कितना अच्छा होता। केवल स्याही और कागज से बनी पुस्तकों के पढ़ने सुनने मात्र से ही प्राणी संसार बंधन से कैसे छूट सकता है? राम के भजन बिना अन्य उपाय से विकार नष्ट नही होते हैं। दादूजी के उक्त वचन सुनकर दासजी को बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने अपने ग्रन्थ को उठाकर तालाब में फैंक दिया। यह देख्कार जो सन्त वहां थे, उन्होंने उसको बचाने का यत्न किया किन्तु सम्पूर्ण ग्रन्थ को नही बचा सके। दासजी दादूजी के शिष्य बनकर निरंतर ब्रह्म भजन करने लगे और अधिक रचना करना छोड़ दिया। दासजी उच्च कोटि के सन्त कवि हुये हैं।

शिष्य गंगादासजी

एक दिन मोरडा में गंगादास नामक व्यक्ति ने दादूजी से पूछा -स्वामिन्! अज्ञान निंद्रा से जागने की क्या पहचान है? तब दादूजी ने कहा-

आदि अंत मधि एक रस, टूटे नहिं धागा।
दादू एकै रह गया, तब जाणी जागा।।40।।

;दादूवाणी-लै का अंगद्ध

अर्थात्- साधन आरंभ काल से लेकर मध्य में कही किसी हेतु को पाकर अपने साधन का तार टूटे नही, अन्त तक लगातार एकरस चलता रहे तथा साधन करते-करते अद्वैतब्रह्म में स्थिर होकर सांसारिक भावनाओं में जाने से रूक जाय तब जानना चाहिये-यह अज्ञान निद्रा से जागकर अपने वास्तविक स्वरूप में स्थिर हुआ है।

फिर ये दादूजी के शिष्य बन गये, जो सौ शिष्यों मेंळहैं।

नाम स्मरण सम्बन्धी प्रश्न

एक दिन मोरडा में दामोदर जी ने प्रश्न किया स्वामिन्! किस नाम का स्मरण करना चाहिये तब दादूजी ने कहा-

दादू सिरजनहार के, केते नाम अनन्त।
चित अवे सो लीजिये, यौ साधू सुमरै संत।।22।।

;दादूवाणी-स्मरण का अंगद्ध

अर्थात्-परमात्मा के कितने ही नाम हैं, उनका कोई अन्त नही और निष्काम भाव से स्मरण करने पर सभी का फल भगवान की प्राप्ति होता है। अतः जिस नाम से भी अपना मन चेतन स्वरूप में आकर स्थिर हो जाय उसी नाम का स्मरण करना चाहिये। सि(संत तथा साधक ऐसे ही स्मरण करते है।

नवम चरण

परमात्मा द्वारा संसार छोड़ने का संकेत

वि.सं.1659 लगा तब परमात्मा ने दादूजी को संकेत द्वारा सूचित किया कि वि.सं.1660 में तुमको संसार छोड़ना है। परमात्मा के आज्ञा रूप वचन को दादूजी ने अपने मन में धारण कर लिया। जो शिष्य पास में थे उनको दादूजी के भविष्य में गमन की बात कुछ संकेतो द्वारा ज्ञात हो गई। किन्तु ऐसा कोई भी नही था जो स्पष्ट रूप से दादूजी से पूछ सके। सब शिष्यों के मन में उस समय धाम

स्वप्न में राजा को हरि आज्ञा

फिर नारायणा नरेश नारायणसिंह को निद्रा में स्वप्न हुआ। स्वप्न में उनको हरि ने कहा- तुम सन्त प्रवर दादूजी को अपने ग्राम नारायण में लाकर उनके लिये धाम बनाने का संकल्प करोगे तो कल तुम्हारी विजय हो जायगी। जो भी तुम्हारे सामने यु(में आयेगा वही मारा जायेगा। तब राजा ने स्वप्न में ही हरि की आज्ञा मान ली और संकल्प किया कि मेरी विजय होते ही मैं नारायणा जाकर तथा स्वामी दादूजी को नारायणा लाकर उनकी जहां इच्छा होगी वहां ही धाम बनवा दूंगा। जब वह नींद से जागा तब सब बात स्मरण आ गई। राजा नारायणसिंह ने स्वप्न की बात को यथार्थ मानकर यु(में प्रवेश किया, फिर उसी दिन उनकी विजय हो गई। तब उसने स्वप्न के वचनों को सर्वथा सही पाया, इससे उनकी दादूजी महाराज बनाकर उन्हें यहां रखा जायगा तो तुम्हारा राज्य नहीं रहेगा। उनकी ही प्रधानता यहां [illegible] और दादूजी को बुलवाने के लिये मन्त्री कपूरचन्द्र भाई रायमल और अमरा आदि को

रहेगी। तब ब्राह्मणों को राजा ने कहा- मुझे तो परमात्मा की आज्ञा है। हमें तो दादूजी को यहां रखने में महान् निधि प्राप्त होने का सा सुख मिल रहा है। अतः दादूजी को यहां रखा ही जायेगा। जो दादूजी को यहां रखने के विपरीत बात कहते हैं, उनको हरि की शपथ हैं वे फिर ऐसी बात न कहें और यदि फिर कहेंगे तो उनके लिए अच्छा नही रहेगा। फिर दादूजी के विपरीत बोलने वाले मौन हो गये।

बनाने की बात उत्पन्न हो रही थी। वे सोच रहे थे कि धाम बनाने से परमार्थ होता रहेगा। अन्तर्यामी दादूजी ने उनके मन की बात जान ली और अपने मन में विचार किया।

धाम निर्णय

धाम कहां बनवाया जाये- यह निर्णय करने के लिये विचार पूर्वक खोज करने पर अंत में दादूजी महाराज ने निश्चय किया कि नारायणा ग्राम ही अच्छा रहेगा। नारायणा ग्राम के पास ही सुन्दर सरोवर भी है और बस्ती भी अच्छी है। वहां ही धाम बनाना श्रेष्ठ रहेगा। फिर दादूजी महाराज ने नारायणा ग्राम में धाम बनाने की इच्छा की।

तब नारायणा नरेश नारायणसिंह दक्षिण देश के अमरवती नगर में थे। वहां उनका किसी प्रतिपक्षी के साथ यु(चल रहा था। किन्तु विजय नही हो रही थी। विजय किस प्रकार होगी, यही चिन्ता करते करते वे निद्रा के वश हो गये थे।

भाई रायमल, अमरा और मन्त्री कपूरचन्द्र आदि ने बखनाजी को भी साथ में ले लिया था। सब दादूजी महाराज को लोने के लिये चले तब ज्ञात हुआ कि इस समय दादूजी महाराज मोरडा ग्राम में हैं। तब वे सब मोरड़ा गये। दादूजी महाराज का दर्शन करके अति प्रसन्न हुये। सबने सत्यराम बोलकर साष्टांग दण्ड़वत प्रणाम किया। फिर हाथ जोड़कर दादूजी के सामने बैठ गये और अवकाश देखकर कहा- स्वामीजी महाराज! आपको नारायणा नरेश नारायणसिंह ने सप्रेम प्रणाम कहा है और आपको नारायणा पधारने के लिये अति आग्रह पूर्वक प्रार्थना की है। हम सब आपको नारायणा ले जाने के लिये ही राजा की आज्ञा से आपके चरणों मे आये हैं। राजा की तथा हम सबकी यही प्रार्थना है कि आप हम लोगों के साथ अति शीघ्र पधारकर राजा तथा नारायणा की जनता को अपने दर्शन तथा सत्संग से कृतार्थ करने की कृपा करें। दादूजी महाराज तो सब जानते ही थे कि मेरी इच्छा नारायणा में धाम बनाने की हुई थी, उसी को पूर्ण करने के

लिये परमात्मा ने यह सब व्यवस्था कर दी है। इसलिये दादूजी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। फिर मोरडा के भक्तों को अपने मधुर वचनों से संतुष्ट करके दूसरे दिन ही रायमल आदि के साथ शिष्यों सहित नारायणा के लिये प्रस्थान कर दिया। प्रस्थान करने के पश्चात् रायमल ने एक व्यक्ति को यह कहकर आगे भेज दिया कि तुम राजा को कह देना कि सन्त प्रवर दादूजी महाराज मोरड़ा के मार्ग से आ रहें है और आप स्वागत के लिये पधार जायें। उसने आकर राजा को उक्त सूचना दे दी। राजा ने कुछ सेवकों को भेजकर नारायणा के कुछ दूर पर एक स्थान में सफाई करके विछायत करने की आज्ञा दे दी। उन सेवकों ने वहां जाकर शीघ्र ही ग्राम के मुख्य-मुख्य लोगों को बुलाकर दादूजी के स्वागत करने के लिये चलने को कह दिया। तब सब तैयार होकर एकत्र हो गये। फिर वाद्य बजाते हुये और संकीर्तन करते हुये नगर से राजा और प्रजा के लोग निकले। उध ार दादूजी महाराज भी शिष्यों के सहित उक्त स्थान पर पहुंच कर विराज गये थे। इधर से राजा और प्रजा भी वहां आ गये।

दादूजी महाराज का भव्य स्वागत

राजा नारायणसिंह दादूजी का दर्शन करके अति प्रसन्न हुये और साष्टांग दण्ड़वत प्रणाम कर हाथ जोड़े हुये सामने खड़े होकर बोले- स्वामीजी महाराज! आपने यहां पधार कर मेरे को तथा यहां की जनता को कृतार्थ कर दिया है। हम लोग आपके दर्शनों से धन्य हो गये है। फिर राजा ने विधि सहित दादूजी महाराज की पूजा की। तत्पश्चात् यथायोग्य सब सन्तों को प्रणाम किया। उक्त प्रकार ही प्रजा के मुख्य-मुख्य लोगों ने भी किया और साधारण जनता दूर से ही पूजा प्रणामादि हो जाने पर संकीर्तन करते हुये नगर में चलने की तैयारी करने लगे। उस समय राजा ने प्रार्थना की- स्वामीजी महाराज! आपको ठहराने के अभी तो रघुनाथ मन्दिर में प्रबन्ध किया गया है। यह राज मन्दिर है, निर्विघ्न स्थान है और किले के द्वार पर ही है। इससे राज परिवार को भी आपके दर्शन का सुअवसर मिल सकेगा। फिर आपकी आज्ञानुसार ही स्थान का निश्चय करके वहां सब प्रकार का प्रबन्ध कर दिया जायेगा। तब दादूजी महाराज ने कहा- ठीक है। दादूजी महाराज की आज्ञा होने पर राजा नारायणसिंह दादूजी एवं उनके शिष्यों सहित संकीर्तन

करते हुये नगर के मध्य से रघुनाथ-मंदिर को चले।

भोजन प्रसंग

मंदिर में आसन लग जाने पर राजा ने भोजन के लिये दादूजी से पूछा- जैसा भोजन सन्तों को रूचिकर हो, वैसा ही भोजन बना दिया जायेगा आप आज्ञा दें। कृपा करके हम लोगों को थोड़ा संकेत अवश्य कर दें। जिससे सन्तों के प्रतिकुल कुछ न बनाया जा सके। तब दादूजी महाराज ने कहा- सभी सन्त सात्विक भोजन करते हैं। फिर टीलाजी ने कहा- गुरूदेवजी तो चार पैसे भर बाजरे का दलिया ही पाते हैं। भोजन के समय दो चार सन्त स्वयं ही जाकर बस्ती में सब के यहां से भिक्षान्न ले आते हैं और सबको जिमा देते है। आपको सन्तों के भोजन के लिये कुछ भी प्रबंध नही करना है। सन्त आपके यहां से भी भिक्षा ले आया करेंगे। सब सन्त का ऐसा दृढ़ नियम है। तब राजा ने कहा- सन्तों का नियम तो मैं भी भंग नही करना चाहता, मैं तो सन्तों की सेवा ही करना चाहता हूं और वह भी सन्तों की इच्छानुसार ही करना चाहता हूं हठपूर्वक नहीं। राजा का उक्त वचन सुनकर टीलाजी ने कहा- भक्तों को ऐसा ही करना चाहिये। सेवा के निमित्त भी सन्तों से हठ करना अच्छा नही होता है। उससे सन्त संकोच में पड़ जाते हैं, उनकी स्वतंत्रता में बाधा पड़ती है।

चित्रों का मिटना

रघुनाथ मन्दिर में बाहर से सज्जनों के आने के कारण बहुत भीड़ रहती थी। मंदिर की दीवारों पर मन को लुभाने वाले सुन्दर चित्र बने हुये थे। साधारण जनता उन चित्रों को देखते हुये कोलाहल करती थी। इससे दादूजी के भजन में विघ्न पड़ता था। इस परिस्थिति को देखकर दादूजी ने ईश्वर से प्रार्थना की। मंदिर की दीवारों पर बने हुये सब चित्र एक साथ मिट गये। उनका कुछ भी चिन्ह नही रहा, मानो यहां थे ही नही चित्रों के मिटने की बता सुनकर भोजराज दादूजी के पास आये ओर कहा- भगवन्! ये चित्र कैसे मिट गये? तब दादूजी ने कहा-

ये चित्र भगवान को उचित ज्ञात नही हुये इसलिये उन्होंने इन चित्रों को लुप्त कर दिया।

त्रिपोलिया का विराजना

ब्रह्म मुहूर्त में दादूजी शिष्यों सहित त्रिपोलिया पर पधार गये। प्रातः काल राजा नारायणसिंह ओर भाकरसिंह रघुनाथ मंदिर में दूदजी के दर्शन करने आये किन्तु वहां काई भी सन्त नही मिला। फिर उनको ज्ञात हुआ कि स्वामी दादूजी महाराज तो शिष्यों के सहित त्रिपोलिया पर विराजकर ब्रह्म भजन कर रहे हैं। नारायणसिंह तथा भाकरसिंह दादूजी का दर्शन करके अति प्रसन्न हुये और सत्यराम बोल, प्रणाम करके सामने बैठ गये। फिर हाथ जोड़कर नारायणसिंह ने कहा- स्वामिन्! आपको जहां भी अनुकूल हो वहां ही धाम बना दिया जायेगा। आप कृपा करके सेवक को आज्ञा दें। बस, आपके आज्ञा देने की देरी है, आज्ञा देते ही तो जहां तक होगा अति शीघ्र ही धाम बन जायेगा। तब दादूजी महाराज ने कहा- तुम्हारा कथन तो सत्य है किन्तु हम को प्रभु की आज्ञा जहां की होगी वह स्थान प्रभु की आज्ञा होने पर तुमको बता देंगे।

सभा में शेषनाग का प्रकट होना

आठवें दिन प्रातः नारायणा नरेश नारायणसिंह अपने कुछ भाइयों तथा मंत्रियों के सहित दादूजी के दर्शन व सत्संग के लिये त्रिपोलिया पर आये और सत्यराम बोलकर सबने प्रणाम किया। फिर सब बैठ गये। आज राजा के मन में विशेष रूप से यही विचार चल रहा था कि स्वामीजी महाराज आज्ञा दे देते तो धाम निर्माण कार्य आरम्भ कर दिया जाता। उसी समय सत्संग सभा के मध्य में दादूजी के सामने सहसा शेषनाग प्रकट हो गये और दादूजी के प्रणाम करके अपने फण से उठने का संकेत किया। परम योगेश्वर दादूजी महाराज नागराज के संकेत को समझ गये और सभासदों से बोले- आप लोग कोई भय नही करना, ये शेष भगवान हैं और मुझे यहां से उठने का संकेत करके अपने साथ चलने को कह

रहे हैं। हो सकता है, ये राजा की जो तीव्र इच्छा हो रही है धाम निर्माण की, उसे ही पूर्ण करने पधारे हों। अतः मैं इनके साथ जा रहा हूं आप लोग इनके आगे का मार्ग छोड़कर इधर उधर हो जायें। दादूजी महाराज के उक्त वचन सुनकर सब इधर-उधर हो गये। सब के हट जाने पर नागराज दादूजी को अपने साथ चलने का पुनः संकेत करके सहजगति से चलने लगे। दादूजी महाराज भी उनके पीछे-पीछे चलने लगे। नारायणा नरेश नारायणसिंह तथा उपस्थित सत्संगी और दादूजी के शिष्य सन्त भी आश्चर्यचकित होकर दादूजी महाराजे के पीछे-पीछे चलने लगे। नागराज शेषजी ने शनैः शनैः त्रिपोलिया से चलकर तालाब के पश्चिम तट की पाल के पास एक खेजड़े के वृक्ष के मूल में जाकर अपना फण पृथ्वी पर मार कर दादूजी को संकेत किया- यहां पर बैठ जाइये। उनके संकेत को समझकर दादूजी महाराज ने कहा- मैं समझ गया हूं कि आप मेरे को यहां निवास करने का संकेत कर रहे हैं। अतः मैं यहां ही निवास करूंगा। दादूजी के स्वीकार करने पर शेषनाग ने अपने फण से दादूजी महाराज को प्रणाम किया। फिर सहसा वहां ही अन्तर्ध्यान हो गये। यह देखकर सबको अति आश्चर्य हुआ और राज-प्रजा ने हृदय से यह स्वीकार कर लिया कि दादूजी महाराज निश्चय ही कोई अवतारी पुरूष है।

धाम निर्माण हेतु आज्ञा

नागराज के अन्तर्ध्यान हो जाने के पश्चात् दादूजी महाराज, जहां नागराज ने फण पृथ्वी पर मारा था, वहां ही विराज गये और नारायण नरेश नारायणसिंह को बोले- राजन्! भगवान की आज्ञा यहां धाम बनाने की हो गई है। अतः अब तुम यहां पर धाम बनाने का कार्य आरम्भ कर सकते हो।

दादूजी महाराज के श्री मुख के उक्त वचन सुनते ही राजा को अति प्रसन्नता हुई। राजा हाथ जोड़कर तथा मस्तक नमाकर बोले- भगवन्! मेरी अभिलाषा के अनुरूप मुझे आपके श्री मुख से आज आज्ञा मिल गई है। अब यह आपका सेवक शीघ्रतिशीघ्र धाम बनाने का प्रयत्न करेगा। इतना कहकर नारायणसिंह साथियों के

सहित राज-भवन को चले गये। दादूजी महाराज के शिष्य सन्त भी दादूजी महाराज की आज्ञा होने पर अपने आसन त्रिपोलिया से खेजड़ाजी के पास ले आये।

प्रथम पर्ण कुटीरों का निर्माण

खेजड़ाजी के पास सन्तों को खुले आकाश में वृक्ष के नीचे देखकर राजा तथा प्रजा ने शीघ्रतिशीघ्र अनेक पर्णकुटीरें बनवाकर उनमें निवास करने के लिये सन्तों से प्रार्थना की। फिर सब सन्त दादूजी महाराज की आज्ञा से पर्णकुटीरों में निवास करने लगे। धाम तैयार होने तक दादूजी महाराज भी एक पर्णशाला में विराजते थे। दादूजी महाराज की पर्णशाला के आगे एक विशाल छप्पर सत्संग सभा के लिये भी बना दिया गया था। उसमें उच्च आसन पर विराज कर दादूजी महाराज अपने शिष्य सन्तों को तथा आगत सत्संगियों को प्रातः सायं उपदेश करते थे। दादूजी महाराज के यहां आकर विराजने पर नारायण सरोवर का पश्चिम तट परम शांति का केन्द्र हो गया था। अब यहां दूर-दूर से साधक सन्त आने लगे थे। आने वाले सन्तों तथा भक्तों की सेवा में नारायणा नरेश तथा उनकी प्रजा सहर्ष भाग लेती थी। दादूजी महाराज के आने पर नारायणा नगर की काया पलट ही हो गयी थी। सब में सेवा भाव, ईश्वरभक्ति, दैवीगुण प्रतिदिन बढ़ते ही जा रहे थे।

पर्ण कुटीर को आजकल भजनशाला के नाम से जाना जाता है और दादू द्वारा नारायणा में उसी रूप में स्थित है।

रज्जबी का बल अभिमान भंग करना

एक दिन नारायणा धाम में दादूजी महाराज एक काष्ठ की चौकी पर स्नान करके, पास खड़े हुये अपने शिष्य रज्जबजी को बोले- रज्जब! मेरी खड़ाऊ ले आओ, जिससे पैरों पर धूलि नहीं लगे। तब रज्जबजी ने हाथ जोड़कर कहा- गुरूदेव! आप चौकी पर ही विराजे रहें। मैं चौकी सहित आपको आसन पर ले चलूंगा।

दादूजी ने कहा- नही खड़ाऊ ही ले आओ। किन्तु रज्जबजी ने अधिक आग्रह किया। तब दादूजी ने सोचा इन्हें बल का घमंड है। ये खाटू ग्राम में भी मतवाले हाथी को हटाने के लिये आगे बढ़ने लगे थे। घमंड साधक में होना अच्छा नही है, यह महान् दोष है। मेरा कर्त्तवय है कि इनका यह दोष निकालूं। अतः आज इनका घमंड तोड़ ही देना चाहिये। फिर दादूजी महाराज मौन होकर चौकी पर ही विराज गये। तब रज्जबजी अपने दानों हाथों से चौकी को इस प्रकार पकड़कर उठाने लगे जिससे गुरूदेव दादूजी महारजा को किसी भी प्रकार का विक्षेप नही हो। फिर रज्जबजी ने अपना सब बल लगा दिया। किन्तु चौकी उठना तो दूर रहा एक तिल भर भी नही हिला सके। रज्जबजी ने सोचा था कि गुरूदेव के शरीर में बोझ है ही कहां? मैं तो अनायास ही उठा लूंगा। किन्तु अब चौकी हिली भी नही, तब वे समझ गये और गुरूजी की ही लीला है। मैंने अधिक आग्रह किया और गुरूजी की आज्ञा नही मानी। अतः मेरे बल के अभिमान को गुरूजी ने नष्ट करके मेरे पर महान् कृपा की है।

अभिमान किसी भी बात का हो, अच्छा नही होता। तब रज्जबजी ने दादूजी को दण्ड़वत प्रणाम किया। फिर चुपचाप जाकर खड़ाऊ ले आये और चरणों में पहनाकर क्षमा मांगते हुये चरणों में पड़ गये। तब दादूजी ने उनके शिर पर अपना वरदहस्त रखकर उनको उठाया और कहा- तुम्हारे को अपने बल का अभिमान था, वह अच्छा नही था, परमात्मा ने कृपा करके वह तोड़ दिया है। यह अच्छा ही हुआ है। तब रज्जबजी ने मस्तक नमाते हुये कहा- आप यथार्थ ही कहते है। आपने उक्त लीला करके मेरा हित ही किया है।

भेष प्रसंग

एक दिन टीलाजी दादूजी महाराज को दण्ड़वत करके बोले गुरूदेव! मेरी इच्छा है- थोड़ा भैराणा पर्वत की ओर भ्रमण कर आऊं। तब दादूजी ने कहा- तुम्हारी इच्छा है तो भ्रमण कर आओ। फिर दादूजी की आज्ञा होने पर वे भैराणा पर्वत के ऊपर गये। अपनी इच्छानुसार इधर-उधर भ्रमण करके रात्रि में अजमेर की

ओर जाने वाले मार्ग में आकर उन्होंने शयन किया। प्रातः तीन बजे ही उठकर मार्ग पर बैठे-बैठे ब्रह्म भजन करने लगे। उसी समय लखनऊ का नवाब अपने दलबल के सहित जहां टीलाजी बैठे थे उधर से ही निकला। टीलाजी के शरीर पर कोई साधु भेष तो था नही, वे साधारण मानव के समान ही जान पड़ते थे। नवाब के नगारे ले जाने वाला मानव बहुत थक गया था।

नवाब के साथियों ने टीलाजी को मार्ग पर बैठे देखकर उन्हें कहा- ये नगारे अपने शिर पर रखकर हमारे साथ चलो। टीलाजी तो सन्त थे। उन्होने कहा- बहुत अच्छा। नगारे शिर पर रखकर उनके साथ चलने लगे। जब सूर्य उदय होकर प्रकाश हुआ तो सबने देखा कि नगारे टीलाजी के शिर से सवा गज ऊपर आकाश में अपने आप चल रहे हैं। यह देखकर नवााब के साथी सब आश्चर्य में पड़ गये और कांपते हुये दौड़कर नवाब के पास गये। शिर से नगारे ऊचे चलने की बात नबाव को कही तब नवाब समझ गया कि कोई महात्मा होगा। फिर नवाब अपनी सवारी से उतर कर टीलाजी के पास आया और प्रणााम करके टीलाजी से क्षमा मांगी। टीलाजी तो सन्त थे ही, उन्होने तो क्षमा कर दिया।

टीलाजी दादूजी महाराज के पास आये और पूरा प्रसंग सुनाया और कहा- स्वामीजी महाराज! मेरे शरीर पर कोई साधु भेष चिन्ह नही होने से ही मुझे नवाब के साथियों ने शिर पर नगारे रखकर अपने साथ चलने को कहा था। यदि कोई साधु भेष का चिन्ह होता तो संभव है, ये मेरे सिर पर नगारे रखकर मुझे अपने साथ चलने को नही कहते, ऐसा मेरा विचार है।

भेष चिन्ह

टीलाजी की उक्त बात सुनकर दादूजी ने कहा- ठीक है, तुम लोग कोई बाह्य चिन्ह बनाकर लाओ। फिर दादूजी ने मोहनजी, गरीबदासजी और टीलाजी को बाह्य भेष चिन्ह नियत करने के लिये नियुक्त किया। फिर उक्त तीनों सन्तों ने अपनी-अपनी कुटियाओं में जाकर बाह्य भेष चिन्ह बनाये। गरीबदासजी ने चोला

बनाया, मोहनजी ने टोपा बनाया और टीलाजी ने कपाली गोल टोपी बनाई। तीनों ही सन्तों ने उक्त तीनों चिन्ह दादूजी के सम्मुख प्रस्तुत किये। दादूजी महाराज ने उन तीनों वस्तुओं को स्वीकार करके कहा- ये तीनों ही चिन्ह अच्छे हैं, मैं इन तीनों को धारण करता हूं। आप सब भी श्वेत वस्त्र और ऐसा ही बाह्य भेष धारण करें फिर उक्त तीनों चिन्हों को सब शिष्यों ने धारण करना आरम्भ कर दिया।

कमंडल से जल धारा बहना

एक दिन दादूजी शिष्य गरीबदासजी को साथ लेकर भैराणा पर्वत पर पहुंचे। पर्वत पर घूमते हुये गरीबदासजी को तीव्र प्यास लगी गर्मी से व्याकुल होकर नहाने की इच्छा हुई। तब गरीबदासजी ने अपने कमण्डलु से जलधारा बहाकर निर्झर प्रकट कर दिया। जल पीकर और नहाकर जब गरीबदासजी तृप्त हो गये, तब समर्थ गुरूदेव ने उस निर्झर धारा को लुप्त कर दिया। क्योंकि निर्झर धारा से आकर्षित अनेक वन्य जीव वहां आते और शिकारी लोगों द्वारा हिंसा होती रहती । इस पाप निवृति के लिये जलधारा लुप्त कर दी गयी।

इस घटना का विवरण दादूजी के शिष्य माधवदासजी द्वारा रचित पुस्तक 'श्री सन्त गुण सागर' में है।

धाम निर्माण परिचय

तालाब के तट पर बाग के पीछे एक मास में दादूजी महाराज के लिये चूना पत्थर की भजनशाला बनाई गई उसकी नींव वैशाख बदी अष्टमी को एक पहर दिन चढे लगाई गई थी। फिर दादूजी महाराज उसमें विराजकर भजन-ध्यान करने लगे। इसके पश्चात् शिष्य सन्तों के लिये अन्य कुटियायें बनाई गई। उक्त धाम का द्वार नारायण बिन्दु सरोवर के तट पर रखा गया था। धाम के पीछे बाग और

आगे नारायण बिन्दु सरोवर होने से धाम स्वाभाविक ही रमणीक बन गया था। थोड़े ही दिनों में दादूजी महाराज के नारायणा नगर में नारायण अश्रु बिन्दु सरोवर के तट पर स्थायी निवास की सूचना दूर-दूर तक जा पहुंची थी।

दादू धाम पर भोजन प्रबन्ध

दूर-दूर के लोग भी दादूजी के दर्शन और सत्संग के लिये नारायणा नगर में आने लगे थे। यह सब देखकर नारायणा नरेश तथा ग्राम के भक्तों ने श्री दादू धाम पर भोजन का प्रबन्ध कर दिया था, जिससे आगत अतिथियों को भोजन सम्बन्धी कष्ट नही हो सके। भोजन व्यवस्था का अधिकार दादूजी महाराज के शिष्य केशवजी को दे दिया गया था। केशवजी दादूजी के सौ शिष्यों में हैं। केशवजी ने सेवा भाव विशेष रूप से था। वे स्वंय भी सेवा में लगे ही रहते थे। एक दिन उनके भोजन बनाने के चूल्हे की मिट्टी गिर गई थी। उसी चूल्हे पर दादूजी महाराज के लिये पाँच तोले बाजरे का दलिया स्वयं केशवजी ही बनाते थे। तब केशवजी ने सोचा थोड़ी देर के पीछे तो आगत अतिथियों के लिये भोजन की व्यवस्था करनी है। इस मध्यान्ह के समय में ही मिट्टी लाकर चूल्हा ठीक कर दिया जाये। वे उस चूल्हे को सुधारने को गुरूजी की निजी सेवा ही समझते थे। उस चूल्हे के लिये मिट्टी भी आप ही लाना चाहते थे। मिट्टी लाने वाले तो और भी बहुत भक्त थे, किन्तु गुरूजी की सेवा मैं ही करूंगा, ऐसी ही उनकी भावना थी।

चूल्हे के लिये मिट्टी लाने के लिए जाने लगे तब दादूजी महाराज ने उनको जाते देखकर पूछा- कहां जाते हो? केशवजी ने कहा- चूल्हे की मिट्टी पड़ गई है, अतः उसके लगाने के लिये मिट्टी लाने जाता हूं। तब दादूजी महाराज ने उनको कहा- अभी मत जाओ, अपने आसन पर जाकर ब्रह्म भजन करो। दादूजी महाराज का उक्त वचन सुनकर केशवजी रूक गये। फिर केशवजी ने सोचा कि सायंकाल को तो भोजन की व्यवस्था का कार्य करना ही है, अब मिट्टी नही ला सकूंगा तो फिर देर हो जाने से चूल्हे की मिट्टी सूखेगी भी नही और बिना मिट्टी सूखे चूल्हे पर भोजन बनाना भी उचित नही रहेगा। अतः दादूजी महाराज की दृष्टि

न पड़े, ऐसे मार्ग से मिट्टी लाने चले गये। वहां जाकर ज्योंहि मिट्टी खोदन के लिये मिट्टी पर कस्सी मारी त्योंही मिट्टी का बहुत बड़ा ऊपर का भाग टूटकर उनके ऊपर आ पड़ा और वे उस मिट्टी के नीचे दब गये।

केशव का देहान्त

उसी समय दादूजी महारजा को योगशक्ति से ज्ञात हो गया कि केशव मिट्टी के गिरने से दब गया हे। तब दादूजी ने अपने शिष्य रज्जब आदि को कहा- केशव मेरे निषेध करने पर भी किसी अन्य मार्ग से मिट्टी लेने चले गये हैं और अब उनका शरीर मिट्टी के नीचे दब गया है और प्राणन्त भी हो गया है। तुम लोग जाकर उनके शरीर को निकाल कर भैराणा पर्वत पर रख आओ। जिससे पशु-पक्षियों के खाने के काम में आ जायेगा, व्यर्थ ही नष्ट नही होगा। फिर शिष्यों ने दादूजी महाराज की आज्ञा के अनुसार ही किया और केशवजी के शव को भैराणा पर्वत पर रख आये।

अन्य धाम की आज्ञा निषेध

एक दिन टीला, केशव, गोविन्ददास, गोपाल, नरहरि आदि दादूजी के शिष्यों ने विचार किया कि नारायणा धाम के समान एक ओर भी धाम बनना चाहिये। धाम बनने से लोकोपकार होता है। देखो, नारायणा में धाम बनने के पश्चात् कितना परोपकार हो रहा है। दूसरा धाम बन जायेगा तो वहां भी ऐसे ही लोकोपकार होने लगेगा। अतः द्वितीय धामके लिये भी महाराज से प्रार्थना करनी चाहिये। फिर उक्त सब शिष्यों ने मिलकर प्रार्थना की- भगवन्! ऐसा ही एक धाम और बनना चाहिये। तब दादूजी ने कहा- यहां ही क्यों नही रहते हो? द्वितीय धाम बन जायेगा तब तृतीय धाम बनाने की इच्छा होगी। इस रजोगुणी प्रवृति को छोड़कर ब्रह्म-भजन करो, जितनी आशा करोगे उतनी ही वह बढ़ेगी और ब्रह्म भजन में बाधक होकर दुःख ही बढ़ायेगी। अतः द्वितीय धाम की आशा छोड़कर निज जीवन को सफल बनाने के लिये ब्रह्म भजन में ही मन

लगाओ। दादूजी महाराज का उक्त वचन सुनकर सब ने इस आज्ञा को मौन द्वारा स्वीकार कर लिया।

पूर्वकाल के सि(सन्तों का आना

एक दिन रात्रि के समय नारायणा में नारायणा अश्रु बिन्दु सरोवर के तट पर स्थित दादू धाम में बनी हुई भजन-शाल में बैठे हुये दादूजी ब्रह्म-भजन कर रहे थे कि उनको सहसा आकश से भजनशाल के आंगण में परम अद्भुत प्रकाश उतरता हुआ दिखाई दिया। देखते ही देखते पूर्वकाल के कई सि(सन्त दत्त, गोरक्ष, प्रहलादादि भी आंगण में आ गये। उनको देखकर दिव्य दृष्टि वाले सन्तप्रवर दादूजी उन्हें पहचान गये फिर परस्पर सप्रेम प्रणामादि शिष्टाचार हो जाने पर यथा योग्य स्थान पर विराज गये।

टीलाजी का प्रश्न

टीलाजी दादूजी महाराज की सेवा में रहते थे। इसलिये वे भजनशाला के बाहर द्वार पर रहा करते थे। उस दिन रात्रि के समय टीलाजी सन्तों की विचार गोष्ठी सुनते रहे थे। किन्तु द्वार से आते जाते किसी को भी नही देखा था। इससे सूर्योदय होन पर भजनशाला का द्वार दादूजी महाराज ने खोला तब टीलाजी ने दादूजी महाराज को सत्यराम बोलते हुये साष्टांग दण्ड्वत करके पूछा- स्वामिन्! रात्रि को कई सज्जनों की आवाजें आ रही थी। वे कौन थे? द्वार से आते जाते मैंने किसी को भी नही देखा था, किन्तु विचारगोष्ठी रात्रि भर चलती रही और साथ में एक दिव्य प्रकाश भी भीतर प्रतीत होता रहा था। प्रातःकाल विचार गोष्ठी की ध्वनि और प्रकाश भी सहसा ही लोप हो गये। वे कौन थे? कृपा करके बताइये। अपने प्रिय शिष्य टीलाजी का प्रश्न सुनकर शिष्य वत्सल दादूजी महाराज ने कहा- वे पूर्वकाल के ब्रह्मस्वरूप प्रसि(सन्त दत्त, गोरक्ष प्रहलाद आदि पधारे थे और उनके ब्रह्मतेज का ही उस समय भासने वाला प्रकाश था। वे सन्त आये तब सहसा अंधकार नष्ट हो गया था फिर परस्पर मिलने के

पश्चात् मंगलमय ब्रह्म संबन्धी विचार गोष्ठी होती रही थी और उससे सबको ही परमानन्द प्राप्त हुआ था। फिर वे सन्त आकाश मार्ग से पधार गये थे। दादूजी महाराज के उक्त वचन सुनकर टीलाजी को अति आश्चर्य हुआ था और परमानन्द भी हुआ था।

गरीबदासजी का प्रश्न और उनके उत्तर

गरीबदासजी को दादूजी महाराज के वचन से ज्ञात हो गया कि स्वामीजी महाराज अब अधिक दिनों तक इस धरातल पर नही विराजेंगे। इसलिये गरीबदासजी ने दादूजी से प्रश्न किया-स्वामिन्! आपने निर्गुण ब्रह्म की उपासना रूप में अद्भुत प(ति चलाई है, जो हिन्दू और मुसलमानों की प्रचलित सीमित प(तियों से बहुत आगे बढ़ी है। प्रायः हिन्दू तो काशी को ही मुक्ति क्षेत्र मानते हैं तथा अन्य तीर्थों के स्नान आदि से अपना कल्याण चाहते हुये पंच देवों की उपासना में लगे हुये है। मुसलमान प्रायः काबा को ही परम तीर्थ मानकर पैगम्बरों की ही सेवा में लगे हुये हैं। किन्तु आपने तो दोनों की ही प्रचलित उपासना प(तियों को छोड़कर विलक्षण प(ति अपनाई है। अतः आपके बाद आपकी चलाई हुई प(ति का निर्वाह किस प्रकार हो सकेगा ? यद्यपि आपने तो अपनी साधन प(ति से निर्गुण ब्रह्म का भजन करके परम लाभ प्राप्त कर लिया है। किन्तु सर्व साधारण सांसारिक प्राणियों ने तो आप की चलाई हुई साध्न-प(ति में अपना मन विशेष रूप से नही लगाया है। सर्व साधारण प्राणी तो रजोगुण प्रधान साधन-प(तियों में ही अपना मन विशेष रूप से लगाते हुये दिखाई देते हैं। अतः मुझे संशय होता है कि आपकी यह अद्भुत साधन प(ति आपके पीछे किसी प्रकार चल सकेगी?

गरीबदासजी के उक्त प्रश्न को सुनकर अन्तर्यामी स्वामी दादूजी गरीबदास आदि सब शिष्यों के मन की भावना जान गये और बोले- हे भाई! तुम ऐसा विचार मत करो, जो हमारे ज्ञान को धारण करके व्यवहार करेंगे और अपने धर्म में स्थिर रहेंगे, उनकी रक्षा रामजी अवश्य करेंगे और यदि तुम आकार का ही आश्रय

चाहते हो तो हमारे इस शरीर को रख लो। इसकी पूजा करते रहना। इससे तुम जो भी चाहोगे वही मिल जायेगा और जो भी प्रश्न करोगे उसका उत्तर मिल जाया करेगा। यदि तुमको यह संशय हो कि यह शरीर तो दो दिन में महान दुर्गन्ध देने लगेगा, सो संशय उचित नही है। कारण- यह मेरा शरीर पंच तत्त्व का नही है, और योग माया मय हैं इससे दुर्गन्ध नही आयेगी और यह शरीर का आकार प्रतीत मात्र ही है, वास्तव में नही है।

जैसे दर्पण में मुख तो दिखाई देता है, किन्तु वास्तव में दर्पण में मुख नही होता है। वैसे ही यह हमारा शरीर प्रतीति मात्र ही है, वास्तव में नही है। यदि तुम्हारे मन में किसी प्रकार का संशय हो तो तुम अपना हाथ मेरे शरीर पर फेरकर परीक्षा करके देख सकते हो।

दादूजी महाराज का उक्त वचन सुनकर गरीबदासजी ने जब दादूजी के शरीर पर अपना हाथ फेरा तो वह शरीर दीप की ज्योति के समान ज्ञात हुआ। अर्थात दीपक की ज्योति के बीच से जैसे लोह आदि की शलाका निकल जाती है,वैसे ही दादूजी के शरीर से गरीबदास का हाथ निकल गया । शरीर के आकार से हाथ रूका नही दादूजी का शरीर दृष्टि में तो आता था किन्तु मुष्ठि में पकड़ा नही जाता था। इससे गरीबदास आदि सभी सन्तों को अति आश्चर्य हुआ था। उक्त आश्चर्य को देखकर गरीबदासजी ने हाथ जोड़कर दादूजी महाराज से प्रार्थना की-हे स्वामिन्! जब आपने अपने शरीर को अपनी योग शक्ति से इतना विलक्षण बना लिया है, जो कि दीखते हुये भी वास्तव में नही के समान है, तो फिर आप इसको अधिक दिन तक भी यहां रख सकते हैं। अतः हे अन्तर्यामी स्वामिन्! हम लोगों की प्रार्थना से कुछ दिन पृथ्वी पर और विराजये। आपके यहां रहने से लोगों का कल्याण ही होगा। अतः यह कृपा अवश्य कीजिये।

गरीबदासजी की उक्त प्रार्थना सुनकर दादूजी महाराज ने कहा- भैया! हरि की आज्ञा जिस प्रकार होती है, उसी प्रकार की उनकी आज्ञा में हम रहते हैं। सबको हरि आज्ञानुसार रहना होता है। सब ही हरि के अधीन हैं। हरि की आज्ञा से ही

यह शरीर धारण किया है और हरि की आज्ञा से ही इसको त्यागकर पूर्वरूप को प्राप्त किया जायेगा।

दादूजी महारजा के उक्त वचन सुनकर गरीबदासजी ने कहा- स्वामिन्! यद्यपि आपके कथनानुसार आपका शरीर दुर्गंध आदि विकारों से रहित और सदा नूतन बना रहेगा, इसमें मुझे कोई संशय नही हो रहा है। किन्तु इस चमत्कार से जनता भी यहां अधिक आया करेगी, उससे हमारे भजन में अति विघ्न होता रहेगा तथा हम शव पूजक भी कहलायेंगे। शव पूजन से लोग हमारी निन्दा भी करेंगे और आपके सि(ांत से भी शव पूजन सर्वथा विपरीत रहेगा। शव की उपासना मेरे विचार से किसी प्रकार भी उचित नही ज्ञात होती है। अतः शरीर का रखना तो हम लोगें को अभीष्ट नही है। आप काई अन्य ही आश्रय बताने की कृपा करें।

गरीबदासजी के उक्त विचारों को सुनकर दादूजी महाराज ने कहा- अच्छा फिर यहां पर एक दीप ज्योति निरंतर जलती रहेगी। उसमें घृत तेल भी नही डालना पड़ेगा। यह दीपक ज्योति बिना घृत, तेल के अखंड जलती रहेगी। उस ज्योति से प्रार्थना करने पर आप लोगों को अभीष्ट की प्राप्ति होती रहेगी, किन्तु उसका आश्रय लेकर कुमार्ग में प्रवृत नही होना। यदि कुमार्ग में लग जाओगे तो यह अखंड ज्योति विलीन हो जायेगी।

दादूजी महाराज के उक्त वचन सुनकर गरीबदास ने अपने मन में विचार किया कि- बिना घृत, तैल के अखंड ज्योति जलती रहना भी बहुत बड़ा चमत्कार है। इससे हमारी प्रतिष्ठा तो अवश्य होगी, परन्तु अति प्रतिष्ठा भी साधना में विघ्न डालती है। हम लोग उस ज्योति रूप चमत्कार से फूलकर भजन व साधना को छोड़ देंगे और पंडे बन जायेंगे। पंडापन करने से अन्त में निश्चय ही हमारा पतन ही होगा। इसमें कुछ भी संशय नही है। इसलिये करामात को तो किसी भी प्रकार नही अपनाना चाहिये। वह प्रभु भजन में विघ्न रूप ही होती है। यह निश्चय करके गरीबदासजी ने कहा- हे स्वामिन्! आप तो परम दयालु और सर्व प्राणियों के रक्षक हैं, किन्तु उक्त प्रकार अखंड ज्योति रहना भी बहुत बड़ी

करामात है। इस करामात को देखने के लिये बहुत सी जनता यहां आया करेगी, अत्यधिक जनता के आने-जाने से हम लोगों के भजन में विघ्न ही पड़ेगा। अतः ऐसी करामात तो हम नही लेना चाहते है और आप भी हम लोगों को निरंजन राम का भजन करने का ही उपदेश देते रहे हैं और अब भी दे रहे हैं। इससे भजन में विघ्न रूप चमत्कार से हमारा निरंतर भजन कैसे चलेगा? इसलिये हमें तो आप अन्य ही कोई, जो भजन का साधक हो ऐसा आश्रय देने की कृपा करें। यही हमारी हाद्रिक प्रार्थना है।

उक्त प्रकार गरीबदासजी को सर्वथा निष्काम जानकर अन्तर्यामी दादूजी गरीबदासजी पर प्रसन्न होकर बोले- तुम्हारा विचार बहुत अच्छा है, करामात तो साधक के लिये कलंक रूप में ही होती है। उससे साधक का पतन ही होता है। तुम्हारे भजन साधन के लिये मेरे जो पांच हजार वचन हैं, वे अवश्य सहायक होंगे। उन मेरे पांच हजार वचनों को तुम मेरा ही स्वरूप समझकर उनका आश्रय लेकर रहो। उस पांच हजार वाणी में मेरा तेज स्थित है। फिर दादूजी ने कहा- जो मेरी वाणी का मन, वचन से सेवन करेगा, अर्थात् मन में उसका अर्थ धारण करेगा और वाणी द्वारा उच्चारण करके अन्यों को सुनाकर समझायेगा, वह मन वांछित फल प्राप्त करेगा। मेरी वाणी का सेवन पूजन जो लोग सदा करेंगे तथा मनन करेंगे उनको अनायास ही भोग और मोक्ष की प्राप्ति होगी। जो सांसारिक धर्म को त्याग करके निष्पक्ष भागवद् धर्म को अपनायेंगे, काम क्रोधादिक आसुर गुणों का त्याग करेंगे और निरंजन राम का स्मरण करेंगे, वे निरंजन राम को ही प्राप्त होगें।

साधक सन्तों को निर्पक्ष रहते हुये राम-राम उच्चारण करते रहना चाहिये। काम क्रोधादिक से शरीर को नही जलाना चाहिये। जिस मार्ग में सांसारिक प्राणी जाते है, उसमें जाकर साधक प्राणी अपने को संसार प्रवाह में ही बहाता है।अतः जो अनुचित कर्म जगत के प्राणी करते हैं, उन कर्मो का सन्तजन दूर ही से त्याग देते है। जिस मार्ग में सांसारिक लोग अनुरक्त हैं, उस भोग-राग रूप पंथ में सन्त नही जाते हैं। साधक सन्तों को इस प्रकार राम-राम करना चाहिये कि राम से चिन्तन रूप आनन्द लेते लेते राम में ही एक होकर रहें। उक्त उपदेश देकर

दादूजी महाराज ने कहा- मेरी वाणी में सूत्र रूप से सब कुछ ही मिलेगा। दादूवाणी को अपनाकर अपने-अपने भावों के अनुसार ही प्राणी लाभ उठाते रहेंगे।

दशम चरण

पुनः गरीबदासजी का प्रश्न

गरीबदासजी ने अवकास देखकर हाथ जोड़े हुये प्रश्न किया- स्वामिन्! आपको तो आगे की भी बातें करामलक के समान भासती है। अतः मैं आपसे पूछता हूं आप की शिष्य परम्परा में जिस शिरोमणी निर्गुण ब्रह्म भक्ति का आपने उपदेश किया है, उसका पूर्ण रूप से निर्वाह करने वाला कोई सन्त आगे होगा क्या? गरीबदासजी के उक्त प्रश्न को सुनकर दादूजी महाराज ने कहा- अब से लगभग सौ वर्ष के बाद एक सन्त इसी स्थान पर होंगे। उनमें निर्गुण ब्रह्म भक्ति पूर्ण रूप से होगी और वे मेरे समान ही होंगे। गरीबदासजी ने पूछा- उनके पश्चात् भी फिर कोई उच्च्य कोटि का सन्त होगा? दादूजी महाराज ने कहा- उनके पीछे इसी स्थान पर लगभग 80 वर्ष बाद एक सन्त और होंगे। गरीबदासजी ने पूछा-फिर? दादूजी महाराज ने कहा- फिर भी जो मेरी वाणी के अनुसार साधन करेंगे तो होते ही रहेंगे। सन्त तो साधना करने पर होता है। अतः जब तक वाणी का प्रचार रहेगा, तब तक उनके अनुसार साधन करने वाले साधक सन्तत्व को प्राप्त होते ही रहेंगे।

दादूजी द्वारा की गई उक्त भविष्य वाणी के अनुसार सन्त जैत साहिबजी और दूसरे निर्भयरामजी दोनों ही ठीक समय पर तथा नारायणा धाम दादूजी महाराज की गद्दी पर विराजने वाले दादू पंथ के आचार्य और महान् सन्त हुये हैं। यह प्रसि(ही है। गरीबदासजी ने पुनः पूछा- स्वामिन्! फिर यह आपका चलाया हुआ अद्भुत धर्म स्थायी रहेगा या नही ? तब दादूजी महाराज ने कहा- जो अपने इष्ट में अड़िग रहेंगे उनकी सहायता निरंजन राम अवश्य करेंगे। यदि महाप्रलय भी हो जायेगी तो भी हमारी निर्गुण ब्रह्म भक्ति नष्ट नहीं होगी।

सौ शिष्यों का भैराणा पर्वत पर तप की आज्ञा

उपस्थित शिष्यों ने दादूजी से पूछा- भगवन्! हमारे लिये भविष्य में क्या कर्तव्य है। वह भी आप अपने मुख-कमल से ही बताने की कृपा करें। तब दादूजी

दादूवाणी परिचय

दादूजी के कथनानुसार ज्ञात होता है कि दादूवाणी सब शास्त्रों को सार रूप है। यह गागर के समान है। दादूवाणी साखी भाग और पद भाग, इन दो भागों में विभाजित है। दादूवाणी को दादूजी ने अपनी लेखनी से नही लिखा था। अपने भक्तों और शिष्यों को उपदेश देते समय उनके मुख कमल से पद्यमय शब्द ही निकलते थे। तब उन सब को उनके शिष्य उसी समय लिख लेते थे। उन लिखने वालों में सबसे अधिक मोहनजी दफ्तरी, रज्जबजी और जगन्नाथजी ने ही संग्रह किया था। उक्त प्रकार दादूजी के ब्रह्मलीन होने के समय तक उनके मुख कमल से वाणी निकलती रही थी। उसकी संख्या ग्रंथ गणना के अनुसार पांच हजार थी। किन्तु सन्तजनों द्वारा जितनी संग्रहित हो पाई वह संख्या तीन हजार नौ है। शेष विलुप्त वाणी वह है जो कभी पथ यात्रा में चलते-चलते ही उपदेश रूप में उच्चारित हुई । उसका संग्रह लिखित रूप में नही हो सका । सम्भवतः हरि की प्रेरणा ही ऐसी रही होगी। दादूवाणी के साखी भाग को 37 अंगो में विभाजित किया और पद भाग को 27 भागों में विभाजित किया। दादूवाणी में अनेक भाषाओं के शब्द प्राप्त होते हैं। संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, मराठी, पंजाबी, फारसी और उर्दू व अन्य प्रचलित भाषाओं का समावेश है।

महाराज ने कहा- जो अप्रधान सौ शिष्य हैं, उनको मेरी आज्ञा है कि वे सब भैराणा पर्वत पर साधन-भजन करते हुये तपस्या पूर्वक ही अपना जीवन व्यतीत करें। उनको सांसारिक कार्यो में भाग नही लेना चाहिये। वे सब विरक्त है, अतः उन्हें वैराग्य पूर्वक एकान्त में ही साधन करना चाहिये। ऐसा करने से वे सांसारिक प्राणियों का तथा अपना कल्याण करने में समर्थ होंगे। दादूजी महाराज का उक्त वचन सुनकर गरीबदास बोले- भगवन्! वे तो एकानत में रहकर निरंतर भजन ही करेंगे, उससे उनका कल्याण तो अवश्य हो जायेगा। किन्तु उपदेश दिये बिना सांसारिक प्राणियों का भला कैसे होगा? गरीबदासजी का उक्त प्रश्न सुनकर दादूजी ने कहा- हिमालय उत्तर दिशा में एक स्थान पर ही रहता है, किन्तु उससे सब देश का भला होता है। वह सब के सामने तो नही आता है, उससे चलने वाली नदियां ही सबके सामने आती है।

गरीबदासजी का सन्त तथा भक्तों को सूचना देना

जब दादूजी महाराज के महाप्रयाण का निश्चय हो गया तब गरीबदासजी ने अपने गुरू भाइयों को प्रेमी भक्तों को सुचना भेज दी कि आप लोग श्री स्वामी दादूजी महाराज का दर्शन करने शीघ्र नारायणा धाम पर पधार जायें। यदि देर करेंगे तो स्वामी दादूजी महाराज के दर्शनों से वंचित ही रह जायेंगे। उक्त सूचना जिन-जिन सन्त, भक्तों को प्राप्त हुई उनमें जो-जो अति प्रेमी थे वे तो सूचना मिलते ही नारायणा धाम को चल पड़े और दादूजी महाराज का दर्शन तथा सत्संग करके परमानन्द को प्राप्त हुये और जिन्होंने किसी कारणवश देर की उनको पश्चाताप ही करना पड़ा था। उनको दादूजी का सत्संग नही मिला।

टीलाजी को आमेर भेजना

उन्ही दिनों में दादूजी महाराज ने सोचा- टीलाजी का मेरे शरीर में अधिक अनुराग है। अतः महाप्रयाण के समय उसका पास रहना अच्छा नही रहेगा। इसलिये टीलाजी को बुलाकर दादूजी महाराज ने कहा- टीलाजी! तुम आमेर

जाओ वहां के सेवक तथा सन्तों को मेरा सत्यराम कहना और जगन्नाथजी को साथ लेकर शीघ्र ही आ जाना। जब दादूजी ने टीलाजी को उक्त आज्ञा दी टीलाजी को वह रूचिकर नही लगी। वे गुरूदेव दादूजी को छोड़कर जाना नही चाहते थे। उक्त आज्ञा को सुनकर टीलाजी अधीर हो गये थे। टीलाजी को अधीर देखकर दादूजी महाराज ने कहा- तुम तो सन्त हो, तुम्हारी तो ऐसी दशा नही होनी चाहिये। अधीर मत हो तुम केवल 25 वर्ष ही मेरे से अलग रहोगे फिर तो मेरे स्वरूप में ही लीन हो जाओगे।

अतः अपने स्वरूप का विचार करके धैर्य धारण करो और आमेर जाओ। फिर टीलाजी ने गुरूदेव की आज्ञा मानकर गुरूजी को साष्टांग दण्ड़वत किया और गुरूजी की आज्ञानुसार आमेर को चल पड़े। जिस दिन टीलाजी नारायण धाम से चले थे उस दिन सहित दादूजी के महाप्रयाण के छः दिन ही शेष रहे थे। टीलाजी ने आमेर में जाकर गुरूजी की आज्ञानुसार सन्त तथा भक्तों को सत्यराम कहा और दादूजी के महाप्रयाण की सूचना भी संकेत मात्र से दी। बु(िमान सन्त तथा भक्त जन तो समझकर चल पड़े। जगन्नाथजी को सूचना मिलने पर वे भी कुछ अधीर से हो गये। फिर धैर्य युक्त होकर टीलाजी के साथ गुरूदेवजी के दर्शन करने शीघ्र ही चल पड़े।

देव निर्मित पालकी आना

इधर नारायण धाम में जो शिष्य एकत्र हो गये थे, उन सब के मन में भी गुरू ज्ञान द्वारा पूर्ण धैर्य था। उनके मुखमंडलों से तो किसी को पता ही नही लगता था कि इनके मन में गुरूजी के वियोग की चिन्ता होगी। जब महाप्रयाण के दो दिन शेष रह गये थे, तब एक देव निर्मित सुन्दर पालकी रात्रि के समय आकाश मार्ग से आकर दादूजी की भजनशाल में स्थित हो गई थी। वह केशर चंदन से युक्त थी। और सुन्दर थी। प्रातःकाल सब सन्तो ने उस पालकी को देखा और दादूजी महाराज से पूछा- स्वामिन्! यह पालकी कौन लाया है? इसे लाते हुये तो हमने किसी को भी नही देखा है। दादूजी ने कहा- यह पालकी तो श्री हरि ने भेजी है। वह पालकी सभी सन्तों को प्रिय तो लग रही थी किन्तु क्यों आई है,

यह संशय भी उनके हृदय को चंचल कर रहा था। फिर दादूजी महाराज ने कहा- यह मेरा शरीर अब यहां नही रहेगा। इस शरीर के लिये ही श्री हरि ने यह पालकी भेजी है। मेरे शरीर को इस में रखकर भैराणा पर्वत की गुफा के पास की खोल में रख आना। यदि तुम लोग यह प्रश्न करो कि फिर हम क्या करेंगे। उसकी चिन्ता तुम मत करना वह तो कर्ता पुरूष अपने आप ही कर लेंगे।

फिर दादूजी महाराज ने कहा- भैराणा पर्वत अति पवित्र स्थान है। भैराणा पर्वत पर अनेक सन्तों ने भजन किया है और अब से आगे वह हमारा क्षेत्र कहलायेगा। आगे भी उस पर अनेक सन्त साधन करते रहेंगे। उससे भैराणा पर्वत की महिमा और भी बढ़ जायेगी। भैराणा गंगा के हरिद्वारा क्षेत्र के समान पुण्य प्रद है। इतना कहकर दादूजी महाराज ध्यानस्थ हो गये। रात्रि के दस बजे के लगभग का समय था। फिर सब सन्त तथा भक्त अपने अपने आसनों पर जाकर भगवद् भजन करने लग गये।

महाप्रयाण

वि.सं.1660 ज्येष्ठ अष्टमी शनिवार के दिन प्रातःकाल ही दादूजी ने अपने सब शिष्य सन्तों को बुलाकर दर्शन दिया और कहा- आप सब शीघ्र ही स्नान करके भोजन कर लो। गुरूजी की आज्ञानुसार सब सन्तों ने स्नान करके भोजन करने की शीघ्रता की। उक्त आज्ञा देकर दादूजी एकान्त में बैठकर ब्रह्म भजन करने लगे। सब सन्त स्नान भोजन से निवृत होकर दादूजी के पास गये। सबने साष्टांग दण्ड़वत प्रणाम किया ओर सब आस पास बैठकर ब्रह्म भजन करने लेंगे तब दादूजी के मुख से यह शाखी निकली-

जेते गुण व्यापैं जीव को, तेते तैं तजे रे मन।
साहिब अपने कारणैं, भलो निबाह्यो पण।।11

;दादूवाणी- अबिहड का अंगद्ध

अर्थात हे मन! जितने भी मायिक गुण अन्तः करण में व्याप्त होते हैं, उन सब को त्याग करके और उन्हें अन्तः करण में पुनः न आने देने का प्रण करके अपने प्रभु प्राप्ति के लिये उस प्रण का तूने अच्छा निर्वाह किया है।

दादूजी ने यह साखी कही ही थी कि इतने में ही आकाश से तीन आवाज "आओ, आओ, आओ" ऐसी आई। तीसरी आवाज के साथ ही दादूजी महाराज ने अपना नश्वर शरीर त्याग दिया और अन्तर्यामी परब्रह्म से जा मिले।

ब्रह्मलीन होन की स्थिति का ज्ञान

नारायणा दादूधाम में दादूजी महाराज के ब्रह्मलीन होने पर पीपाजी ने तत्काल पास बैठे हुये गरीबदासजी तथा मसकीनदासजी को दादूजी के ब्रह्मलीन होने के बारे में कहा। उस समय बड़े गोपालजी एवं नारायणदासजी भी आकर खड़े हो गये थे। मन को दृढ़ रखने वाले दुर्गाजी, दयालदासजी, रज्जबजी भी तत्काल आ गये थे। उक्त सन्तों को गमन समय का दर्शन हो गया। फिर अतिशीघ्र ही नारायण नरेश को भी अपने सेवकों द्वारा यह समाचार ज्ञात हो गया। नारायणा नरेश ने अपने मंत्री कपूरचंद को आस पास के सब ग्रामों में दादूजी महाराज के ब्रह्मलीन होने के बारे में सबको सूचना देने की आज्ञा दी। कपूरचंद ने नारायणा के आसपास सभी ग्रामों को यह सूचना भेज दी। इधर गरीबदासजी आदि सन्तों ने टीलाजी को बुलाने के लिये शीघ्रग्रामी दूत का प्रबन्ध राजा नारायणसिंह को कहकर करा दिया। जिससे टीलाजी और जगन्नाथजी भी अन्त्येष्टि संस्कार होने तक आ जायें।

वहां उपस्थित जन समुदाय व नारायणा नरेश नारायणसिंह आदि ने मिलकर दादूजी महाराज के स्थान पर गरीबदासजी को दादूजी का उत्तराधिकरी मान लिया। सबने एक स्वर से स्वीकार कर लिया कि दादूजी महाराज की गद्दी पर गरीबदासजी ही विराजने चाहिये। हम सब गरीबदासजी की आज्ञा में रहेंगे।

अन्तिम दर्शनार्थ जनता का आना

शिष्य सन्तों ने दादूजी महाराज के शरीर को विधिपूर्वक स्नान कराया। 'ईश्वर' नाम उच्चारण करते हुये परम श्र(ा पूर्वक अपने हाथों से दादूजी महाराज के पवित्र शरीर को उठाकर देव प्रेषित पालकी में बैठा दिया और विधि पूर्वक पूजा की। इतने में ही नारायणा नगर की भक्त जनता भी आ गई और अति श्र(ा से भक्त लोग दादूजी महाराज के पवित्र शरीर की अन्तिम पूजा करने लगे फिर अति स्नेह से आरती उतारी। इसी समय दादूजी महाराज के शिष्य गरीबदासजी ने जनता को कहा- सज्जनों! दादूजी महाराज की हम लोगों को आज्ञा है कि मेरे शरीर को भैराणा पर्वत की गुफा के पास दक्षिण की खोल में रख देना। अतः गुरूदेवजी की आज्ञानुसार ही अब हम शीघ्र ही यहां से हरिनाम संकीर्तन तथा हरि यशगान करते हुये भैराणा पर्वत पर जायेंगे। यद्यपि ग्रीष्म)तु का ज्येष्ठ मास है, किन्तु आप लोग देख ही रहे हैं कि नभ में बादल छा गये हैं। अतः हमको धूप जन्य कष्ट तो नही होगा। जो सज्जन संकीर्तन करने वाले हैं वे आज अवश्य लाभ उठायेंगे तथा सर्व साधारण जनता के लोग भी हरि नाम संकीर्तन करते हुये भैराणा चल सकते हैं। स्थान-स्थान पर जल का प्रबन्ध नारायणा नरेश नारायणसिंह ने तथा आकोदा के नरेश केशोदासजी ने करने की स्वीकृति दे दी है। चलने वालों को कष्ट नही होगा। ब्रह्म स्वरूप दादूजी महाराज की महा प्रयाण यात्रा में कष्ट होने का तो कोई भी कारण नही है। नारायणा से भैराणा तक के मार्ग को साफ करने का कार्य आरम्भ हो गया है। मार्ग में जहां-जहां कंटक होंगे वे पालकी पहुंचने से पूर्व ही साफ कर दिये जायेंगे।

यद्यपि दादूजी महाराज की महाप्रयाण यात्रा के लिये पहले से ही हजारो भक्त तैयार थे। गरीबदासजी के उक्त वचन सुनकर और भी हजारों भक्त भैराणा यात्रा के लिये तैयार हो गये। उक्त प्रकार सब व्यवस्था हो गयी।

भैराणा को प्रस्थान

पालकी को उठाने से पूर्व नारायणा नरेश नारायणसिंह से प्रजा के मुख्य सज्जनों से कहा- दादूजी महाराज की पालकी को नगर के मुख्य -मुख्य स्थानों से घुमाते हुये ही नगर से बाहर निकालना चाहिये। जिससे दादूजी महाराज के अन्तिम दर्शन नगर के अतिवृ(और वृ(ाओं को भी हो सके। फिर नारायणसिंह तथा नगर के मुख्य लोगों ने मिलकर गरीबदासजी आदि सन्तों को कहा। उन्होंने स्वीकार कर लिया। फिर सब ने एक साथ ही “श्रीस्वामी दादूदयालजी महाराज की जय हो” यह बोलकर पालकी उठा ली। पालकी देव निर्मित होने से अति अद्भुत, अति सुन्दर और अति हलकी भी थी। उस में विशेष बोझ नही था। दादूजी महाराज का शरीर भी हल्का ही था और उठाने वालों में भाव का भी बहुत बल था। अतः उन्हें कुछ भी भार नही हो रहा था। कई मंडलियां हरिनाम संकीर्तन करती हुई चल रही थी। पालकी के पास सन्त जन हरिनाम संकीर्तन करते हुये चल रहे थे। दादूजी महाराज की महाप्रयाण यात्रा के साथ चलने वाले सन्तों ने सुन्दर वस्त्र पहन रखे थे और अच्छी चद्दरें बांध रखी थी। सबके ही मस्तकों पर मंगलमय चन्दन केशर लगे हुये थे। गुलाल व पुष्प वृष्टि होती जा रही थी। सब सन्त ओर सभी भक्त धैर्य युक्त दिखाई दे रहे थे। उक्त प्रकार कीर्तन करते हुये नगर से जा रहे थे। राजद्वार पर पालकी आई तब राज परिवार ने भी बड़ी श्र(ा के सहित भाव प्रेम से पालकी की आरती की।

जैसे समुद्र की ओर जाने वाली महानदी में इधर-उधर की नदियां मिलती रहती हैं, वैसे ही दादूजी महाराज के महाप्रयाण यात्रा में चारों ओर से भगवान के भक्तों के झुण्ड आ आकर मिलते जाते थे। जन समूह हरि नाम ध्वनि से नभ मंडल को पूर्ण करता हुआ भैराणा की ओर बढ़ रहा था। उक्त प्रकार महाप्रयाण यात्रा जब आकोदा के पास आई तब आकोदा नरेश केशवदास ने अपनी प्रजा तथा राजपरिवार के सहित आगे आकर दादूजी महाराज की पालकी की आरती की और जोर से दादूजी महाराज की जय बोली। जहां स्वामी दादूजी महाराज की आज्ञा थी उस स्थान को पहले ही आकोदा नरेश केशवदास ने साफ करवा दिया था। उस स्थान पर पहुंच कर जोर जोर से “श्री स्वामी दादूदयाल महाराज की जय हो” इस प्रकार बारंबार जय बोलते हुये पालकी को उस स्थान पर रखकर

सब सन्तों ने तथा भक्तों ने साष्टांग दण्ड़वत प्रणाम किया। उधर टीलाजी, जगन्नाथजी तथा अन्य सन्त और भक्त भी मिल गये। वे सब भी भैराणा पर महाप्रयाणयात्रा के पहुचने के साथ ही सीधे खोल में आ गये थे। कारण, जाने वाले दूत ने भैराणा पालकी आयेगी यह बता दिया था।

अंत्येष्टि संस्कार विचार

दादूजी के शिष्य विरही बखनाजी ने दादूजी महाराज की यह साखी बोली–

विरह अग्नि का दाग दे, जीवत मिरतक गोर।
दादू पहले घर किया, आदि हमारी ठौर।।9।।

;दादूवाणी– विरह का अंगद्ध

अर्थात्– स्वामी दादूदयालजी महाराज ने जो कहा है, उस पर भी विचार करके ध्यान दें। वे कहते हैं– हमने अपने अन्तःकरण के अहंत्व, ममत्व और काम क्रोधादि विष्यों को विरहाग्नि से जला कर अपने आदि स्थान ब्रह्म को प्राप्त कर लिया है तथा जीवन्मुक्ति रूप समाधि ले ली है। भविष्य में हमारे शरीर का संस्कार करना ही तो वायु संस्कार ही करना चाहिये। उससे ही प्राणियों का भला होगा। शरीर को खाकर तृप्ति लाभ करेंगे। यही मत हमें मानकर संस्कार का निश्चय करना चाहिये। फिर बखनाजी के मत का समर्थन करते हुये रज्जबजी ने दादूजी महाराज की यह साखी बोलकर सबको सुनाई–

हरिभज साफिल जीवना, परोपकार समय।
दादू मरणा तहं भला, जहां पशु पक्षी खाय।।40।।

;दादूवाणी– स्मरण का अंगद्ध

फिर रज्जबजी ने कहा– उक्त वचन से दादूजी महाराज ने परोपकार पर अधिक जोर दिया हैं अतः हमें उनके सि(ांत के अनुसार तथा अन्तिम आज्ञा के अनुसार

महाराज के शरीर को इसी स्थान पर इसी अवस्था में छोड़ देना चाहिये। जब गरीबदासजी ने पूछा था कि भैराणा पर्वत की खोल में शरीर को रख देने के पश्चात् हमें क्या करना होगा, वह भी बता दीजिये? उसके उत्तर में दादूजी महाराज ने कहा था- आगे के करने योग्य कार्य को करने वाला आप ही कर लेगा, आगे की चिन्ता तुम को नही करनी चाहिये। स्वामीजी ने यही कहा था-

"स्वामीजी आज्ञा दिई, धरियो पर्वत मांहि।
करन हार कर लेयगा, तुमको चिन्ता नांहि।।"

गुफा द्वार पर दादूजी का दर्शन

जब टीलाजी ने पर्वत शिखर की ओर देखा तो गुफा के द्वार पर दादूजी महाराज का दर्शन उन्हें स्पष्ट रूप से हुआ। तब टीलाजी ने उच्चस्वर से कहा- आप लोग किन के शरीर का संस्कार करने के विचार में लगे हैं स्वामी दादूदयालजी महाराज तो वे गुफा के द्वार पर खड़े हुये हैं। आप भी देखे तो सही। टीलाजी के उक्त वचन को सुनकर सभी सन्तों ने तथा भक्तों ने आश्चर्य पूर्वक पर्वत की ओर देखा तो गुफा द्वार पर दादूजी महाराज का दर्शन सभी को अच्छी प्रकार हुआ। दर्शन करने वाले सन्तो ने तथा भक्तों ने उच्चस्वर से 'सत्यराम' बोलकर प्रणाम किया। उस समय दादूजी महाराज के एक हाथ में श्याम छड़ी थी और दूसरे हाथ की अभय मुद्रा से सबको शुभाशीर्वाद दे रहे थे। जब वहां आये हुये सभी लोगों को अच्छी प्रकार दर्शन हो गया तब दादूजी महाराज उच्चस्वर से बोले-'सन्तो! सत्यराम' और यह बोलकर गुफा में प्रविष्ट हो गये। फिर सन्तों तथा भक्तों ने पालकी को देखा तो उसमें केवल पुष्पमात्र थे और कुछ भी नही था। यह देखकर उन आये हुये सभी लोगों को अति आश्चर्य हुआ था।

पालकी का अदृश्य होना

रज्जबजी आदि सन्तों ने दादूजी महाराज के सन्तत्व तथा उनके अवतार का संक्षिप्त परिचय देने का विचार किया किन्तु जिनको देर से सूचना मिली वे लोग दादूजी महाराज की जय बोलते हुये झुंड रूप में आ रहे थे। जो शीघ्र ही आ गये उनको तो उस पालकी का दर्शन हो गया था। फिर थोड़ी देर में वह पालकी भी अदृश्य हो गई थी। उसे देखकर सभी सन्तों को तथा भक्तों को और अति आश्चर्य हुआ। सभी ने कहा- यह तो बड़ा ही अद्भुत खेल हुआ है, ऐसा तो पहले सुना भी नही था किन्तु भाग्यवश आज तो प्रत्यक्ष देख रहे हैं फिर रज्जब जी ने कहा-

"गुरू दादू रू कबीर की, काया भई कपूर।
रज्जब अज्जब देखिया, सगुण हि निर्गुण नूर।।"

अर्थात्- गुरू दादू और कबीर का शरीर तो कपूर हो गया। रज्जबजी ने कहा कि यह महान आश्चर्य देखने में आया है कि जो सगुण शरीर था वह भी निर्गुण स्वरूप हो गया है।

तब गरीबदासजी ने कहा-

"काया सूक्षम कर मिलै, ऐसा कोई एक।
दादू आतम ले मिलै, ऐसे बहुत अनेक।।"

अर्थात् आत्मा को सांसारिक भावना से ऊंचा लेकर अर्थात आत्मा को मायिक प्रपंच से भिन्न ब्रह्म रूप जाकर परब्रह्म में मिलने वाले सन्त तो बहुत होते हैं और उक्त प्रक्रिया से अनेक ब्रह्म में मिले भी हैं किन्तु अपने स्थूल शरीर को भी साथ लेकर अर्थात पीछे न छोड़कर परब्रह्म में मिलने वाला सन्त काई विरला ही होता है।

दादूजी ने जो अपने श्री मुख से उक्त साखि में कहा था, जो सर्वथा सत्य करके दिखा दिया है। आप असंख्य लोगों ने दादूजी के शरीर के अदृश्य होने की लीला अपने नेत्रों से प्रत्यक्ष देखी हे। इस लीला से यह सबको ही निश्चय होता है कि ऐसे सन्त अत्यन्त दुर्लभ है।

रज्जबजी ने नेत्र बन्द

दादूजी महाराज के गुफा में प्रवेश के पश्चात् रज्जबजी ने अपने नेत्र बन्द कर लिये। फिर अन्य गुरू भाई सन्तों ने पूछा– नेत्र बन्द कैसे कर लिये हैं, खोलते क्यों नही हो? तब रज्जबजी ने कहा– इस मायिक संसार में देखने योग्य गुरूदेव दादूजी महाराज का शरीर ही था, वह तो अब नही रहा है, फिर किसको देखने के लिये नेत्र खोलूं। अब तो मैं शरीर निर्वाह करने के लिये ही नेत्र खोला करूंगा, विशेष रूप से बन्द ही रखूंगा। फिर रज्जबजी ने जीवन भर वैसा ही व्यवहार रखा। आवश्यकता होने पर ही नेत्र खालते थे, वैसे बन्द ही रखते थे।

महाप्रयाण यात्रा की समाप्ति

सब सन्त तथा भक्त लोग पर्वत पर चढ़कर गुफा द्वार पर पहुंचे। तब गुफा से आवाज आई– “गुफा के भीतर कोई नही आवे। अब सब हरि चिन्तन करते हुये हुये अपने-अपने स्थानों को चले जायें।” उक्त वाणी सुनकर सब द्वार पर ही रूक गये और सब गुफा द्वार पर साष्टांग दण्ड़वत करके अपने-अपने स्थानों को जाने लगे। तब गरीबदासजी ने कहा– श्री स्वामी दादूजी महाराज ने इस गुफा में प्रवेश किया है। अतः यह गुफा भविष्य में हमारे समाज का तीर्थ होकर रहेगी। हम लोग सब यहां आकर श्र(ा भाव से साष्टांग दण्ड़वत करते रहेंगे।

महोत्सव विचार

ज्ञानी सन्तों ने सुविचार करके श्री दादूदयालजी के महोत्सव का विचार किया। चारों दिशाओं में निमंत्रण पत्र लिखकर भिजवाये गये। निमंत्रण पत्रों से सूचना

पाकर अनेक साधु सन्त चारो दिशाओं से आने लगे। नारायणा में भक्त, सन्त व सेवकों की भारी भीड़ इकट्ठी हो गई। राजा नारायणसिंह व अनेक जनसेवकों ने सभी व्यवस्थायें संभाल रखी थी। जिस तरह टौंक महोत्सव में सामग्री अटूट रही थी, उसी तरह इस महोत्सव में भी सब सामग्रियों का भण्डार अटूट रहा।

एकादश चरण

गरीबदासजी को गद्दी

दादूजी महाराज के शिष्यों ने कहा- हम लागों ने गद्दी के अधिकारी का चुनाव तो दादूजी महाराज के ब्रह्मलीन होने के समय ही कर लिया था। गद्दी पर गरीबदासजी को ही बैठाया जायेगा। फिर सब सन्तों ने मिलकर गरीबदासजी को बैठाने की तैयारी की और समय नियत करके सब को सूचना करवा दी की आज सायंकाल छः बजे गरीबदासजी को दादूजी महाराज की गद्दी पर बैठाया जायेगा, सो ठीक समय सब सज्जन पधारने की कृपा अवश्य करें। उस दिन राम चौक में चार बजे से ही संकीर्तन आरम्भ कर दिया गया। एक विशाल तख्त पर गद्दी लगा दी गई। बाहर से आये हुये अन्याय सम्प्रदायों के महन्तों के लिये सभा में उचित आसन लगा दिये गये। साढ़े पांच बजे ही चादरें उढ़ाने वाले महन्त, सन्त तथा अकबर, मानसिंह आदि के मंत्री तथा अन्य भक्तगण उपस्थित हो गये। वि. सं.1660 ज्येष्ठ कृष्णा दशमी सोमवार को सबने मिलकर गरीबदासजी को दादूजी महाराज की गद्दी पर विराजमान कर दिया।

वि.सं.1660 आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को जय-घोष के साथ मंदिर में श्री दादूवाणी की स्थापना की गई, भोग प्रसाद लगाया गया। सौंज ;सुसज्जित पूजास्थलीद्ध बनाकर एक तख्ते पर रखी गई। सौंज के नीचे गुरूदेव की गद्दी, खड़ाऊ;पादुकाद्ध केसर रंजित टोपी रखी गई। ऊपर सुन्दर आंचल बिछाया गया।

उस पर श्री दादूवाणी जी को सुन्दर स्वच्छ वस्त्र में लपेटकर रखा गया। प्रातः सायं ध
ूप दीप से पूजा प्रारम्भ की गई।

समाज के लिये भविष्य विचार

गरीबदासजी ने अपने सभी गुरू भाइयों व शिष्यों की एक सभा बुलाकर भविष्य में समाज का संचालन किस तरह करना है इस पर विचार किया। सब सन्तों ने भक्तों ने मिलकर गरीबदासजी के निर्देशानुसार समाज को संगठित रखने के लिये दादूसम्प्रदाय के लिये नियम निश्चित किये। आज भी दादू सम्प्रदाय इन्ही नियमों का पालन करता आ रहा है।

बादशाह जहांगीर का नारायणा आना

दिल्ली के बादशाह जहांगीर ने अजमेर नगर के ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की यात्रा करने का विचार किया तब उनकी माता जोधाबाई ने उनसे कहा- तुम अजमेर जाते हो मार्ग में नारायणा ग्राम में सन्त प्रवर दादूजी का धाम आयेगा। दादूजी का सत्संग तुम्हारे पिता ने सीकरी में 40 दिन तक किया था। अब नारायणा दादूध ाम में दादूजी के शिष्य गरीबदासजी दादूजी की गद्दी पर विराजते हैं, वे भी उच्च कोटि के सन्त हैं। अतः तुम उनके दर्शन तथा सत्संग का लाभ प्राप्त करके ही अजमेर जाना। माता के उक्त वचन सुनकर जहांगीर ने कहा- बहुत अच्छा मैं आपके कथनानुसार ही करूंगा। गरीबदासजी के दर्शन तथा सत्संग का लाभ अवश्य प्राप्त करूंगा।

फिर जहांगीर अजमेर की यात्रा के लिये चलते हुये आमेर राज्य में आये तब आमेर नरेश अपने राज्य की सीमा में जहांगीर के साथ ही रहे थे। मार्ग में जहांगीर ने उनसे पूछा-दादूधाम नारायणा यहां से कितनी दूर है? आमेर नरेश ने कहा- पास ही आ गया है, कुछ ही मील रहा है। जहांगीर ने कहा- नारायणा दादूधाम में दादूजी के शिष्य गरीबदासजी बहुत अच्छे पहुंचे हुये महात्मा सुने जाते

हैं। हम उनके पास ही आ गये हैं, उनका दर्शन तथा सत्संग करके ही आगे चलेंगे। अतः आज नारायणा में ही ठहरना है।

बादशााह का हुक्म होने पर सबको सुचित कर दिया गया कि आज नारायणा के पास ठहरने की व्यवस्था होगी। वैसा ही किया। बादशाह जहांगीर वहां ही ठहर गये किन्तु ग्रीष्म)तु थी। उस समय वहां पानी की भारी कमी थी। इससे बादशाह को वहां ठहरना कठिन प्रतीत हो रहा था। अन्य सब लोगो के मन में भी जल की कमी का आभास हो रहा था। वे सोच रहे थे कि पानी बिना इतना समुदाय का यहां ठहरना कठिन ही है। बादशाह जहांगीर गरीबदासजी के दर्शन करने दादूद्वारे में उनके पास गये। दर्शन तथा प्रणाम करके सामने बैठ गये फिर हाथ जोड़कर बोले-भगवन्! मैं आपके दर्शन तथा सत्संग करने के लिये यहां आया हूं और चार दिन यहां ठहरने का विचार था। आज का दिन तो वैसे ही निकल जायेगा शेष तीन दिन मैं आपका सत्संग करना चाहता था किन्तु मेरे साथ समुदाय बहुत है और यहां पानी की भारी कमी है। यहां के कूप, तालाब आदि सभी जलाशय सूखे हुये हैं। यहां के जलाशय इतना पानी नही दे सकते जितने से हमारा निर्वाह हो सके। यह)तु भी गरमी की हे इस समय पानी बिना रहना भी कठिन है। यदि आप पानी की कृपा कर दें तब तो हम यहां ठहर कर आपके सत्संग का लाभ ले सकते हैं। अतः आप हमारे को पानी देने अवश्य कृपा करें। यही हमारी हाद्रिक प्रार्थना है।

गरीबदासजी ने बादशाह जहांगीर की उक्त प्रार्थना सुनी और अपने मन में भी विचार किया कि दादूधाम पर आये अतिथियों को सुविधा देना हमारा कर्तव्य है। अतः वर्षा करवा कर ही इनको पानी देना उचित होगा। यह निश्चय करके बादशाह के सामने ही गरीबदासजी ने अपनी वीणा अपने हाथ में ली और उसमें मेघ मल्हार के स्वर भर दादूवाणी 327वां पद बोलना आरम्भ किया।

पद का गाना आरम्भ करते ही उसी क्षण आकाश में बादल छा गये और वीणा के स्वरों के साथ गर्जते हुये श्रावण मास की घटा के समान भारी वर्षा करने लगे।

उस वर्षा से शीघ्र तालाब भर गया। बादशाह के तंबुओ में भी पानी भर गया और तंबू बहने लगे। तब बादशाह के सेवकों ने आकर बादशाह जहांगीर को कहा- तंबुओं में पानी भर गया है, पशु बहने लगे हैं। थोड़ी देरी में तंबू भी अवश्य बह जायेंगे और मानव भी बह सकते हैं। वर्षा शीघ्र बन्द करनी चाहिये। अब यदि अधिक वर्षा होगी तो बहुत हानि हो सकती है।

बादशाह जहांगीर ने सेवकों की उक्त बाते सुनकर गरीबदासजी के चरणों में अपना मस्तक रखते हुये उनसे प्रार्थना की- भगवन्! वर्षा शीघ्र ही बन्द नही हुई तो मेरे साथ के लोग डूब मरेंगे तथा तंबू आदि सब बह जायेंगे। आप तो सब को सुख देने वाले सन्त हैं, ईश्वर के स्वरूप ही हैं और ईश्वर से भिन्न नही हैं। अतः अवश्य हम लोगों की रक्षा कीजिये।

बादशाह जहांगीर की उक्त प्रार्थना सुनकर गरीबदास जी ने वीणा बजाना व पद गाना बन्द कर दिया, फिर वर्षा भी बन्द हो गई। वर्षा बन्द होने पर सबको निश्चय हो गया कि अब हमारी रक्षा हो जायेगी। बादशाह जहांगीर के मन में गरीबदासजी का कोई चमत्कार देखने की भी इच्छा थी, वह भी पूरी हो गई। उक्त वर्षा के चमत्कार को देखकर बादशाह जहांगीर गरीबदासजी से बहुत प्रभावित हो गया था। इससे उस ने हाथ जोड़कर गरीबदासजी से प्रार्थना की- भगवन्! मैं सांभर और अजमेर आपकी भेंट कर रहा हूं , कृपा करके मेरी यह तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिये। किन्तु गरीबदासजी अस्वीकार करते हुये बोले तुम्हारे उक्त परगने ग्रहण करने का कार्य न तो प्रभु को प्रिय होगा और न हमारे लिये हितकर होगा। प्रभु समझेंगे कि मेरा भरोसा छोड़कर बादशाह से जीविका ग्रहण करना आरम्भ कर दिया है। फिर बादशाह जहांगीर ने आग्रह पूर्वक प्रार्थना की- भगवन्! कुछ तो लेने की कृपा सेवक पर अवश्य कीजिये।

तब गरीबदासजी ने उसे मौन कराने के लिये अपने आसन का एक कोना उठा कर कहा- इसके नीचे देखो क्या है? बादशाह ने देखा तो उसे दिव्य अश्व दिखाई दिये। बादशाह ने कहा- दो विचित्र घोड़े दिखाई दे रहे हैं। तब

गरीबदासजी ने कहा- यदि देना ही चाहते हो तो ऐसे घोड़े तुम्हारी इच्छा हो उतने ही दे सकते हो। यह सुनकर वह मौन हो गया क्योंकि उस तरह का घोड़ा बादशाह ने पहले कभी देखा भी नही था। इससे बादशाह समझ गया कि सन्त लेना नहीं चाहते है। तभी ऐसा कहते हैं। उक्त प्रकार गरीबदासजी का त्याग देखकर बादशाह जहांगीर को गरीबदास अति प्रिय लगे। फिर उसने गरीबदासजी के चरणों में अपना सिर रखकर क्षमा याचना करते हुये कहा- भगवन्! ऐसे घोड़े तो न मेरे पास हैं और न ही मिल सकते हैं । अतः देना कैसे संभव हो सकता है? मैं समझ गया हूं आप लेना नही चाहते हैं किन्तु मेरा भला जिससे हो वैसा उपदेश तो आप अवश्य करें । शिक्षा देना तो सन्तों का मुख्य काम है।

बादशाह की यह प्रार्थना सुनकर गरीबदासजी महाराज ने बादशाह को उपदेश दिया। चौथे दिन अजमेर को जाना था। इसलिये अपना दूत भेज कर गरीबदासजी महाराज से प्रार्थना की- भगवन्! आज हम को यहां से अजमेर जाना है। अन्य दिनों से कुछ समय पहले ही दर्शन देने की कृपा अवश्य करें। गरीबदासजी ने आज्ञा दे दी- आ सकते हैं। तब बादशाह ने यात्रा के प्रबन्धक सज्जनों को कहा- आज यहां से अजमेर चलना हे, तैयार हो जाओ। मैं गरीबदासजी के दर्शन करके आता हूं। फिर बादशाह जहांगीर गरीबदासजी के पास गया। प्रणाम करके हाथ जोड़कर सामने बैठ गया और बोला- भगवन्! मैं आपके दर्शन और सत्संग से बहुत खुश हुआ हूं किन्तु मेरे मन में यह अभिलाषा बनी ही रह गई कि मैं सन्तों की कुछ भी सेवा नही कर सका। यदि आप यहां पर लोकापकार का कोई कार्य या स्थान की ऐसी कोई सेवा, जिससे सन्तों के साधन भजन में कोई विघ्न नही हो, सो बताए तो उसे ही करके मैं सन्तोष धारण करूंगा।

तब गरीबदासजी ने कहा- यह तो ठीक है। यहां एक कूप बनवा दो और स्थान की भी जो अति आवश्यक हो, ऐसी कुछ सेवा कर सकते हो, जिससे सन्तों के भजन साधन में विघ्न नही हो। फिर बादशाह जहांगीर ने एक कूप, गरीबदासजी के निवास के लिये एक स्थान, एक महाद्वार और महाद्वार के सामने एक चबुतरा,

इतनी सेवा की स्वीकृति गरीबदासजी से प्राप्त कर ली। इससे अधिक सेवा सन्तों ने स्वीकार नही की थी। अतः बादशाह अपनी इस तुच्छ सेवा को ही महान् मानकर सन्तुष्ट हो गया था। इतनी सेवा की स्वीकृति लेकर तथा गरीबदासजी के सत्संग से परम सन्तुष्ट हो गया था। इतनी सेवा की स्वीकृति लेकर तथा गरीबदासजी के सत्संग से परम सन्तुष्ट होकर बादशाह जब चौथे दिन जाने लगा तब उसने सदाव्रत के लिये कुछ रूपया भेंट किया और गरीबदासजी को दुशाला भेंट किया। फिर उक्त सेवा के लिये एक मंत्री को नियुक्त करके बादशाह अजमेर को चले गये। उस मंत्री ने बादशाह की आज्ञा के अनुसार एक कूप बनवाया जिसमें शिलालेख भी उसी समय का लगा है। उस कूप का नाम गरीबसागर रखा गया। जो अब तक उसी नाम से प्रसि(है और अच्छी स्थिति में है। गरीबदासजी के निवास के लिये एक स्थान बनवाया। उसमें भी शिलालेख है। उक्त दानों शिलालेखों में उक्त वृतान्त ही होना चाहिये। वे इस समय कली आदि के कारण साफ-साफ नही पढ़े जाते हैं। एक नौबतखाना और एक महाद्वार तथा महाद्वार के सामने एक विशाल चबूतरा बनाया जो गरीबदासजी के चबूतरे के नाम से प्रसि(है।

पारस भेंट करना

एक समय एक सन्त गरीबदासजी की महिमा सुनकर उनके दर्शन करने नारायणा दादूधाम में आये। गरीबदासजी के दर्शन करके तथा उनकी सन्त सेवा की प(ति देखकर अति प्रसन्न हुये। उनके पास एक पारस पत्थर का टुकड़ था। उन्होंने सोचा यह पारस गरीबदासजी को भेंट कर देना चाहिये। यह यहां के योग्य ही है। इससे यहां सदा सन्तों की सेवा होती रहेगी। फिर उन्होंने श्र(ा पूर्वक गरीबदासजी को प्रणाम करके एकान्त स्थान में अकेले गरीबदासजी को वह पारस भेंट कर दिया और कहा- यह पारस, आपके यहां सन्त सेवा के कार्य में काम आयेगा। गरीबदासजी ने कहा- सन्तजी! हमें पारस नही चाहिये। अपना पारस आप ही शीघ्र उठा लें। सन्तों के प्रबंध उनके साथ ही रहता है, उसी से उनकी सेवा होती है। आप इसको उठा लें किन्तु सन्तजी ने कहा- भगवन! मैंने तो

सकल्प कर लिया है कि इसे आपकी भेंट करूं, सो कर दिया। अब मैं नही उठाऊंगा। फिर गरीबदासजी को प्रणाम करके वे विचर गये।

गरीबदासजी यह सोचकर कि इसको पास रखना तो एक बीमारी ही लगाना है। फिर गरीबदासजी उसी समय किसी को न बताकर उस पारस खंड को स्वयं ही हाथ में लेकर गरीबसागर कूप में डाल आये।

कुछ वर्ष पश्चात् वे सन्त पुनः नारायणा दादूधाम में गरीबदासजी के दर्शन करने आये, तो वहां उन्होंने देखा कि सन्त सेवा पहले से भी इस समय बहुत अच्छी हो रही है। उनके मन में संकल्प हुआ कि- यह उस पारस का ही प्रताप हो सकता है। फिर एक दिन एकांत में गरीबदासजी को प्रणाम करके बोले- स्वामिन्! अब तो आपको सन्तों के योग क्षेम की किंचित भी चिन्ता नही करनी पड़ती होगी। कारण पारस आप के पास है, किसी की आशा करनी ही नही पड़ती होगी। गरीबदासजी ने कहा- कैसा पारस? सन्तजी ने कहा- मैं आपको भेंट कर गया था, वह आपके पास है। गरीबदास जी ने कहा- उस पत्थर के टुकड़े को तो मैंने उसी दिन गरीबसागर में डाल दिया था। यह सुनकर सन्तजी को अति दुःख हुआ। सन्तजी ने सोचा- वह देव पदार्थ था, अब उसका मिलना अति कठिन ळहै। मुझे यह ज्ञात नही था कि ये इसे ऐसे ही फेंक देंगे। ऐसा जानता तो मैं कभी भी नही इनको भेंट करता, पर अब क्या बने। यह सोचकर वे अत्यन्त दुःखी हो गये।

गरीबदासजी ने उनको अति दुःखी देखकर कहा- सन्तजी! उस पत्थर के टुकड़े के लिये आप इतने दुःखी क्यों हो रहे हो? उसमें ऐसी क्या विशेषता थी? सन्तजी ने कहा- भगवन्! वह लोहे को स्पर्श मात्र से सोना बना देता था। इसीलिये मैंने आपको भेंट किया था कि आप इससे सोना बना कर सन्तों की सेवा इच्छानुसार करते रहेंगे। गरीबदासजी ने कहा- बस लोहे को सोना बनाने की ही विशेषता थी तो कुछ नही थी। सन्तजी ने कहा- वह कम थी क्या? लोहे का सोना तो अन्य प्रकार से बन ही नही सकता। तब गरीदासजी ने कहा- आप अपना लोहे का

चिमटा मेरे हाथ में दीजिये। सन्तजी ने चिमटा दे दिया। गरीबदासजी ने उसे अपने ललाट के लगाकर सन्तजी को कहा- देखिये यह लोहे का है या सोने का। लोहे के चिमटे को ललाट में लगाते ही सोने का होते देखकर सन्त समझ गये कि ये तो उच्चकोटि के सन्त हैं। इन्हें पारस की क्या आवश्यकता है।

आचार्य जैतरामजी महाराज

आचार्य फकीरदासजी महाराज के ब्रह्मलीन होन पर उनका उत्तराधिकारी किसे बनाया जाय, यह निश्चय नही हो पा रहा था। सन्तों वे भक्तों की सभा में एक प्रस्ताव रखा गया कि आपसी मतभेदों के कारण आचार्य किसको बनाया जाये? हम यह निर्णय करने मे असफल रहे हैं। हम सबको एक ऐसा उपाय खोजना चाहिये जिसमें मतभेद ना रहे और वह सर्व प्रकार सर्वमान्य हो जाय। तब एक सन्त ने कहा- ऐसा तो एक ही उपाय है कि हम दादूजी से प्रार्थना करें, वे जिसकी आज्ञा दें उसी को आचार्य पद पर बैठा दिया जायं यह बात सभी सन्तों को मान्य हो गई। फिर सब सन्तों ने दादू मंदिर में जाकर, दादूजी से प्रार्थना की। आकाशवाणी द्वारा "जैत, जैत, जैत" ऐसी ध्वनि सुनाई दी। किन्तु फकीरदासजी के शिष्यों में जैतरामजी नाम के दो व्यक्ति थे। एक अवस्था में बड़े थे और एक छोटे थे। इससे यह संशय हो गया कि किस जैत को बैठाया जाय? फिर सब सन्तों ने मिलकर दादूजी से प्रार्थना की- कौन से जैतराम को आचार्य पद पर बैठाया जाय? बहुत देर के पश्चात् शब्द सुनाई दिये- "लघु जैत ही मानिये, सब सन्तन सिर मौर"। यह सुनकर सबको पूर्ण रूप से सन्तोष हो गया।

वि.सं.1750 भाद्रपद कृष्णा अष्टमी को जैतरामजी आचार्य पद पर विराजमान हुये। आप साक्षात दादूजी के अवतार हुये हैं। गरीबदासजी ने जब दादूजी महाराज से प्रश्न किया था कि- आप के इस समाज में आगे भी कोई उच्चकोटि का आपके समान सन्त होगा क्या? तब दादूजी महाराज ने कहा था- 'लगभग सौ वर्ष होने पर एक महात्मा यहां ही प्रकट होंगे। वे मेरे समान ही निर्गुण भक्ति का

विस्तार करेंगे और मेरे स्वरूप ही होंगे।" सो सत्य हो गया और सन्त लोग मुक्त कंठ से कहने भी लगे-

"जैता दादू दूसरा, दादू ही की देह।
रोम रोम मे रम रह्या, ज्यों बादल में मेह।।"

सिक्ख गुरू गोविन्दसिंह जी का आना

जैतरमाजी को जब सूचना मिली की सिक्खों के दशम गुरू दादूद्वारे आये हैं तो उनके स्वागत सत्कार की व्यवस्था का यथोचित प्रबन्ध करने की आज्ञा जैतरामजी ने कार्यकर्ता को दी। उनको सम्मान के साथ लाया गया और दोनों सन्तों के बीच परस्पर विचार विमर्श हुआ। सिक्ख गुरू गोविन्दसिंह जी के मन में संकल्प हुआ कि जैतरामजी के विषय में सुना जाता था कि ये बड़े चमत्कारी हैं। किन्तु अभी इनका कोई चमत्कार नही दिखाई दिया। जैतरामजी महाराज उनके मन की बात को अपनी योग शक्ति से जान गये और अपने आसन के चारों कोने उठाकर उनके नीचे सिक्ख गुरू गोविन्दसिंह जी को चारों धाम दिखा दिये। यह चमत्कार देखकर सिक्ख गुरू गोविन्दसिह जी को बड़ा आश्चर्य हुआ। तब जैतरामजी ने सिक्ख गुरू गोविन्दसिंहजी को कहा कि आप अपने सिक्ख समाज सहित भोजन करें। यह सुनकर सिक्ख गुरू गोविन्दसिंहजी बोले- मेरे साथ बाज है, इसको पहले खिलाइये। इसके भोजन करने के बाद ही मैं भोजन करूंगा। तब जैतरामजी ने अपने शिष्य से कहा- जाओ भाई! शीघ्र ही बाजराम के लिये ज्वार ले आओ। यह सुनकर सिक्ख गुरू गोविन्दसिंहजी हँसते हुये बोले- भगवन्! यह मांसाहारी पक्षी है, ज्वार नहीं खायेगा। यह सुनकर दादूपंथ के आचार्य श्री जैतरामजी ने कहा- यह तो सन्तों का आश्रम है, यहां मांस शब्द का उच्चारण भी नही किया जाता । यहां मांस कहां मिलेगा? आज तो बाजरामजी ज्वार ही चुग लेंगे। तुम लेकर आओ शिष्य ज्वार ले आया। फिर जैतरामजी ने बाज को कहा- बाजरामजी! आज तो तुम ज्वार ही चुगलो। यहां आपको प्रतिदिन की तरह आहार

नही मिलेगा। यह कहते ही बाज ने ज्वार चुगना आरम्भ कर दिया ओर पेट भर ज्वार का आहार किया।

इससे सिक्ख गुरू गोविन्दसिंह जी बहुत प्रभावित हुये और उन्होंने सब सिक्खों सहित प्रेम से भोजन किया।

योगी सन्त हांडी भिडंग जी आना

एक समय निम्बार्क सम्प्रदाय के महान् योगिराज सन्त हांडी भिडंग जी के मन में भावना उठी कि- आचार्य जैतरामजी की परीक्षा लेनी चाहिये कि वे कितनी शक्ति रखते हैं? फिर इसके लिये उन्होंने अपनी योगशक्ति से अपना एक दुर्बल ब्राह्मण जैसा रूप बनाया और हाथ में एक झोली उठाकर नारायणा दादू-धाम में प्रवेश किया और जैतरामजी महाराज के पास पहूंचे। प्रणाम करके बोले- भगवन्! मैं दरिद्र दुर्बल ब्राह्मण हूं। मेरी कन्या का पाणिग्रहण संस्कार चाहता हूं किन्तु मैं जिस प्रकार दान लेना चाहता हूं उस प्रकार देने वाला मुझे कोई मिला ही नही। अब मैं आशा करके आपके पास आया हूं। जैतरामजी महाराज उनको अपनी योगशक्ति से पहचान तो गये, फिर भी बोले- आप कैसे दान लेना चाहते हैं? वैसे ही आपको दिया जायेगा। योगिराज हांडी भिड़ग जी ने कहा- आप किसी से मंगवावें नही और इसी क्षण मैं चाहता हूं उतना धन मुझे दें तो ही मैं लूंगा। उनकी बात सुनकर आचार्य जैतरामजी ने वहां बैठे ही अपनी दानों हाथों की अंजली बनाई और बोले- लो। हांडी भिडंग जी ने अपनी झोली आगे करी तो उसको मोहरों से भरी हुई अंजली झोली में पड़ती हुई दिखाई दी। यह देखकर सन्त हांडी भिडंग जी परम सन्तुष्ट हुये और अपने रूप में आकर बोले- आप तो धन्य हैं, जैसा मैंने सुना था, वैसा ही आज आपका प्रभाव प्रकट रूप में अपने नेत्रों से देख रहा हूं।

एक हजार वैरागी सन्तों का आगमन

एक समय आचार्च जैतरामजी महाराज के पास नारायण दादूधाम पर स्थानीय सन्तों के भोजन कर लेने के पश्चात् अकस्मात् एक हजार वैरागी सन्त आ गये। उनको पूछा- सन्तों भोजन करोगे ? उनके मुखिया महन्त ने कहा- भोजन तो अवश्य करेंगे किन्तु हमारे पक्का भोजन चलेगा। फिर पूछा गया, पक्के भोजन में आपको क्या रूचिकर होगा वही बना दिया जाय। उन लोंगो ने कहा- खीर, मालपुड़े, पूरी और साक होना चाहिये। जैतरामजी महाराज ने कहा- ठीक है, अब आप पंक्ति लगायें, भोजन तैयार है। सन्तों को ऐसा कहकर जैतरामजी महाराज ने संकल्प किया- "सब जलपात्र खीर, मालपुड़े पूरी और शाक से भर जायें।" बस संकल्प के साथ ही संकल्प के अनुसार सब पात्र भर गये।

आगत साधुओं ने सोचा इतनी शीघ्र इतनी मूर्तियों की रसोई कैसे तैयार हुई होगी? उनको कहा गया कि अब शीघ्र पंक्ति में विराजें। फिर पंक्ति लगी। सभी साधुओं ने इच्छानुसार तृप्त होकर भोजन किया। भोजन अति स्वादिष्ट था। अतः भोजन के पश्चात् उन लोगों ने सोचा कि यह इतना भोजन इन्होने अपनी करामात से ही तैयार कराया है। कारण साधारण स्थानीय साधुओं से उन लोंगो ने पता लगा लिया था। अतः कारामात देखने के लिये उन लोंगो ने जमात के पीछे स्थानधारी पांच हजार साधुओं के परोसे मांगे। महाराज जैतरामजी ने अपने भंडारियों को कहा- प्रसन्नता से जैसे ये मांगे। वैसे ही परोसे इनको दे दो, संकोच नही करना। आचार्य जैतरामजी महाराज की आज्ञा होने पर उनको तृप्त कर दिया किन्तु भंडार में कोई कमी नही आई। सभी वस्तुयें विद्यमान रही।

एक गुसांई सि(का सिर्‌(दिखाना

एक गुसांई सि(ने देश में जहां तहां सुना कि नारायणा दादूधाम के आचार्य जैतरामजी के पास अटूट)(-सिर्‌(है। अतः वह जेतरामजी की सिर्‌(देखने

ही उनके पास आया और प्रणामादि शिष्टाचार के बिना ही अपनी सिर्(दिखाने के लिये उसने अपनी जटा को झड़का कर पांच सौ मोहरें जैतरामजी के आगे वर्षा दी। उसके इस अभिमान को देखकर जैतरामजी ने सोचा- साधु में सिर्(का अभिमान होना अच्छा नही रहता, अतः इसका अभिमान नष्ट करना ही चाहिये। फिर जैतरामजी ने अपनी गद्दी के एक कोन को ऊंचा उठा कर कहा- सन्तजी! इधर देखिये। उसने देखा तो गद्दी के नीचे सब भूमि स्वर्ण की ही दिखाई दी। इसको देखकर उसका अभिमान नष्ट हो गया।

एक फकीर का आना

एक फकीर जैतरामजी की महिमा सुनकर दादूधाम के द्वार के बाहर आकर बैठ गया। भोजन करने उसको बुलाया तब उसने कहा- जैतरामजी आवें तो ही मैं भोजन करने चलूं जैतरामजी जब उनके पास आये तब उसने एक मृगछाला बिछाकर बैठने का संकेत किया। एक शिष्य ने मृगछाला के उपर गद्दी बिछा दी। उस पर जैतराम जी विराज गये तब उनहोंने पूछा- भोजन क्यों नही करते हो? फकीर ने कहा- लीला दिखाओ तो भोजन करूंगा। जैतरामजी ने कहा- क्या देखना चाहते हो? फकीर बोला पाँच सौ मोहरें दिखाओ। जैत रामजी ने कहा- मंगवा देते हैं। फकीर बोला मंगवाना नहीं है इसी क्षण दिखलाओ।फिर जैतरामजी ने अपनी गद्दी के नीचे से पांच सौ मोहरें निकालकर फकीर के सामने रख दी। फकीर महाराज के चरणों में गिर पड़ा।

जैतराम जी ने दादू समाज को संगठित बनाये रखने के लिये नियम बनाये जिनका पालन आज तक दादू समाज करता आ रहा है। आपने अपने ब्रह्मलीन होने का समय अपनी योग शक्ति से जानकर सभी सन्तों को मास पहले ही कह दिया था कि आने वाली मार्गशीर्ष शुक्ला अष्टमी को मैं इस शरीर का त्याग कर दूंगा। वि.सं.1789 मार्गशीर्ष शुक्ला अष्टमी मंगलवार को 39 वर्ष 3 मास 15 दिन दादूधाम नारायणा के आचार्य पद पर रहकर जैतरामजी महाराज ब्रह्मलीन हो गये।

आपकी समाधि रूप विशाल छतरी नारायणा दादूधाम के बगीचे में हैं उसकी भारी प्रतिष्ठा है। हर प्रकार के कष्ट के समय आपके चरण चिन्हों को धोकर जल पीने से उन कष्टों का निवारण हो जाता है और सबकी मनाकामनायें पूर्ण होती हैं। आपके निर्वाण दिवस पर प्रतिवर्ष सन्त सम्मेलन का आयोजन किया जाता है।

विशाल दादू मंदिर का निर्माण

जन समुदाय बहुत आता था मंदिर बहुत छोटा था। अतः आचार्य दिलेराम जी की इच्छा होती थी कि मंदिर विशाल होना चाहिये। यही विचार सेवक लोग भी पहले से ही कर रहे थे कि अब मंदिर विशाल बनना ही चाहिये। किन्तु बातें ही चल रही थी, बनवाने की योजना अभी नही बनी थी। इन्ही दिनों में पटियाला के महात्मा ठंडेरामजी के हृदय में नारायणाा में विशाल दादू मंदिर बनवाने के लिये प्रभु की प्रेरणा की। फिर उन्होंने आचार्य दिलेरामजी से मिलकर उनको कहा- मेरे हृदय में प्रभु की प्रेरणा हो रही है कि नरायणा दादूधाम में दादूदयालजी महाराज का विशाल मंदिर बनवाया जाये। महात्मा ठंडेरामजी की उक्त बातें सुनकर आचार्य दिलेरामजी ने कहा- अवश्य बनवाइये, रामजी की ऐसी ही आज्ञा है। फिर भवन निर्माण कला में कुशल कारीगरों से परामर्श करके मंदिर का नक्शा बनवाया गया। मकराणा के पत्थर के लिये आचार्य दिलेराम जी ने एक भण्डारी को पत्र देकर जोधपुर भेजा। पत्र में लिखा- "श्रीमान् जोधपुर नरेश को नारायणा दादूधाम के आचार्य दिलेराम का सत्यराम शुभाशीर्वाद। आपके पास भंडारी जी को इसलिये भेजा गया है कि नारायणा दादूधाम में दादूदयाल जी महाराज का विशाल मंदिर बनवाने का योजना है। अतः आपके राज्य के मकराणे का पत्थर मंदिर के लिये आपसे चाहते हैं। आपका शुभचिन्तक आचार्य दिलेराम।" पत्र लेकर भंडारी जी जोधपुर गये, राजा को पत्र दिया। राजा ने पत्र पढा और अति प्रसन्नता के साथ उसी समय मकराणे के शासक को आज्ञा पत्र लिख दिया कि नारायणा दादूध ाम के दादू मंदिर के लिये तीन दिन तक जितना पत्थर साधु महात्मा ले जा सकें

उतना पत्थर बिना किसी मूल्य कर के ले जाने दो और अपने यहां से प्रेम सहित लदान करा दो। उक्त पत्र की एक नकल भंडारीजी को दे दी। भंडारीजी राजा को शुभाशीर्वाद देकर नारायणा दादूधाम में आ गये ओर राजा का आज्ञा पत्र दिलेरामजी महाराज को दे दिया। फिर आचार्य दिलेराम जी ने मिस्त्री को बुलाकर पूछा- अपने को कितना मकराणा का पत्थर मंदिर के लिये चाहियेगा? मिस्तरी ने कहा- राजा की आज्ञानुसार तीन दिन में हमें मकराणा का पत्थर ला सकें उतना ही लाना चाहिये। यदि बच भी जायगा तो कोई बुराई नही है। फिर जोधपूर नरेश की आज्ञानुसार मकराणे नगर के शासक ने तीन दिन तक मकराणे का पत्थर बिना मूल्य बिना कर के लदा दिया। इस प्रकार मकराणे का पत्थर नारायणा दादूधाम में आ पहुँचा। मकराने के पत्थर लाने का काम आस पास के भक्त किसानों ने किया था। वे अपने गाडे जोतकर अनायास ही नारायणा दादूधाम में आये थे। इसी प्रकार जब अन्य सामग्री भी तैयार हो गई तब वि.सं.1884 ज्येष्ठ शुक्ला चौथ बुधवार को शुभ मुहुर्त में विशाल मंदिर की नींव लगाई गई।

दादूपंथी नागों का विवरण

नागा शब्द का प्रचलन हरिदासजी के शिष्य श्यामदासजी की परम्परा से ही हुआ है। श्यामदासजी के शिष्य चतुरदासजी हुये जो कि एक विरक्त सन्त थे। चतुरदासजी के शिष्य केवलरामजी बड़े प्रतापी महात्मा हुये हैं। केवलरामजी की गद्दी पर श्री हृदयरामजी विराजे थे।

हृदयरामजी महान् राज)षि थे। उन्होंने देखा कि संसार में कमजोंरो को लोग बहुत सतातें है। कमजोरो की रक्षा के लिये मिथ्या बल का अभिमान करने वाले लोगों का दर्पदलन करने के लिये हमें शस्त्र भी धारण करने चाहिये। शस्त्र धारण करना लोकहित के लिये आवश्यक है। यह निश्चय करके आपने वि.सं.1812 में शस्त्र धारण किया था। उन्होने अपने शिष्य समुदाय को सैनिक शिक्षा देकर उनका उपयोग कमजोरों की सहायता में ही किया था। ये वीर सदा निर्भीक रहते

थे। उसी से उनकी नागा संज्ञा पड़ गई थी। वास्तव में ये वस्त्र रहित नागे नही होते थे। उनकी भेष भूषा तपस्वियों के समान होती थी।

महन्त मंगलदासजी इनमें महान शूरवीर संत थे। ये दूदू में दीक्षित हुये थे। एक समय तुर्की की सेवा आकर खाटू को लूटने लगी। नागा-सेना के सन्त सूरों ने अद्भुत वीरता का प्रदर्शन किया। इस यु(में तीन हजार तुर्क मारे गये और सात सौ सन्त सूर वीरगति को प्राप्त हुये। महन्त मंगलदासजी ने खाटु यु(में अपना सिर उतारकर यु(किया था और शत्रुदल पर विजय प्राप्त की थी।

महन्त मंगलदासजी की समाधि खाटू के रणस्थल में ही है।

नागा सूर सन्तों ने कामा का यु(, खाटू यु(, जोधपुर यु(, नवलगढ़ यु(और ग्वालियर यु(आदि अनेकों यु(करके प्रजा की रक्षा की थी। नागा सूर सन्तों में महान् तेजस्वी और वचन सि(सन्त हुये हैं, जिनका विवरण बहुत विस्तृत है।

नागा सूर सन्तों को राज्य की तरफ से आर्थिक सहायता मिलती थी। सबसे पुराना राज्य का आज्ञा पत्र वि.सं.1828 का है, जिसमें स्वामी गंगारामजी के नाम पर 2400/- रूपये माहवार देने का निर्देश है। ऐसे अनेकों आज्ञापत्र विभिन्न-विभिन्न नागा सूर सन्तों के लिये अलग-अलग प्रदेशों के राजाओं ने जारी किये थे।

दादू सम्प्रदाय के मुख्य धाम व मेले

दादू सम्प्रदाय के पांच प्रधान धाम हैं। इन धामों पर भरने वाले मेले और धामों का संक्षिप्त विवरण यहां वर्णित किया जा रहा है। इनका विस्तृत विवरण दादूजी के जीवन प्रसंग के दौरान कहा गया है।

करडालाधाम

सर्व प्रथम दादूजी ने करड़ाला स्थान पर ही अपनी तपस्या आरम्भ की थी। दादूजी ने 6 वर्ष तक यहां कठोर तपस्या की थी। इसके बाद भी करड़ाला पधारते ही रहते थे। सब मिलाकर दादूजी का निवास करड़ाला में दादूजी के चरित्र लिखने वाले महानुभावों ने 9 वर्ष लिखा है। इसलिये यह स्थान तपस्या स्थल होने से परम पवित्र हो गया।

जयपुर से रूपनगढ़ होते हुये वाया पनेर के पास करड़ाला गांव में पर्वत पर यह धाम स्थित है। यहां केकड़े के वृक्ष के पास एक शिलाखंड है जहां बैठकर दादूजी ध्यानस्थ रहा करते थे। पर्वत पर भव्य श्री दादू मंदिर है।

यहां पर फाल्गुन की अमावस्या को सन्त सम्मेलन का आयोजन किया जाता है।

सांभर धाम

सांभर में दादूजी ने 12 वर्ष तक निवास करते हुये ब्रह्म भजन किया था। यहां पर मुसलमानों ने दादूजी को बहुत कष्ट दिये थे। किन्तु दादूजी महाराज उनकी परीक्षा में पूरे रहे थे। अतः परीक्षा थल तीर्थ है।

यहां नमक की झील के मध्य उनकी साधना स्थली रही हैं उस स्थान पर एक चबूतरा व छतरी बनी हुई है। यह चित्र उसी स्थान का है।

नगर के मध्य में श्री दादू मंदिर है। यह मंदिर उसी स्थान पर है जहां दादूजी अपने शिष्यों के सहित सांभर में रहा करते थे और इसी स्थान पर सत्संग होता था।

यहां प्रति वर्ष फाल्गुन शुक्लाा द्वादशी को सन्त सम्मेलन का आयोजन होता है।

आमेर धाम

आमेर में दादूजी 14 वर्ष रहे हैं। आमेर में आने के पश्चात् ही दादूजी की प्रतिष्ठा अकबर बादशााह व अन्य राजाओं के हृदय में घर कर गयी थी। अतः आमेर प्रतिष्ठा थल रूप तीर्थ है।

आमेर मे दादूद्वारा का निर्माण आमेर नरेश ने करवाया था। मंदिर के नीचे ही दादूजी की भजनशाला है। यहां मंदिर में दादूजी की खड़ाऊ, छड़ी व गुदड़ी सुरक्षित रखी हुई है। श्र(ालु भक्त इनका दर्शन करते है।
यहां बसन्त पंचमी के दिन सन्त सम्मेलन का आयोजन किया जाता है।

नारायण धाम

दादूजी ने नारायणा में ब्रह्मलीन होने का उपक्रम किया था। इसी कारण से इस धाम को ब्रह्मधाम कहा जाता है। यह धाम दादू सम्प्रदाय में विशेष स्थान रखता है। यहां दादूपीठाचार्य का स्थान है।

जयपुर-अजमेर राष्ट्रीय राज मार्ग पर दूदू से करीब 15 कि.मी. की दूरी पर नारायणा धाम स्थित है। यहां विशाल दादूद्वारा बना हुआ हे और यात्रियों व सन्तों के लिये आवास की समुचित व्यवस्था है।

यह दादूजी का पलंग है। दादूद्वारा नारायणा में एक पलंग आज भी सुरक्षित है।

फाल्गुन शुक्ला अष्टमी ;जो कि दादूजी का अविर्भाव दिवस हैद्ध को दादू समाज का सबसे बड़ा सम्मेलन यहां प्रति वर्ष आयोजित किया जाता है। इस दिन वाणीजी की शोभा यात्रा दादू द्वारा नारायणा से आरम्भ हो कर त्रिपोलियाजी व नगर के मुख्य बाजार से होती हुई फिर दादू द्वारा में पहुंचती है। प्रस्तुत चित्र नारायणा में आयोजित आयोजन का है।

इसके बाद दादूवाणीजी की आरती में सब भक्तगण भाग लेते हैं। फिर विशाल भण्डारे का आयोजन किया जाता है। भण्डारे के दर्शन की शोभा अकथनीय है। सब सन्त व भक्त भण्डारे में प्रसाद का आनन्द ग्रहण करते है।

मार्गशीर्ष शुक्ला अष्टमी को जैतरामजी की जयन्ती का आयोजन किया जाता है। इस दिन जैतरामजी की छतरी पर रात्रि को कीर्तन किया जाता हैं बड़ी संख्या में सन्त व भक्तजन इस अवसर पर एकत्रित होते है।
दादूद्वारा के विशाल परिसर में आचार्यों की क्षत्रियों, खेजाड़ाजी, गरीबदासजी का स्थान व गुफा और त्रिपोलिया जी के दर्शन प्रमुख हैं।

ज्येष्ठ कृष्णा अष्टमी को दादू निर्वाण दिवस, श्रावण सुदी द्वितीया को प्रकाश देव जी महाराज और आसोज कृष्णा अष्टमी को निर्भय रामजी महाराज की ज्यन्तियों का आयोजन भी किया जाता है।

भैराणा धाम

दादूजी महाराज ने भी अपने ब्रह्मलीन होने के अभिनय के समय कहा था- मेरे इस शरीर को भैराणा पर्वत की गुफा के पास की खोल में रख आना।

भैराणा पर्वत की अति पवित्र की गुफा के पास की खोल में अनेक सन्तों ने भजन किया है। अब से आगे वह हमारा क्षेत्र कहलायेगा। आगे भी उस पर्वत पर अनेक सन्त साधन-भजन करते रहेंगे। उससे भैराणा पर्वत की महिमा और भी बढ़ जायेगी। भैराणा गंगा के हरिद्वार क्षेत्र के समान पुण्यप्रद है। ऐसा दादूजी महाराज ने ब्रह्मलीन होने के पहले दिन अपने शिष्य सन्तों को श्री मुख से कहा था।

यह धाम दादू सम्प्रदाय में मुक्तिधाम के नाम से जाना जाता है।

नारायणा से पूर्व दिशा की ओर करीब 15 कि.मी. की दूरी पर भैराणा पर्वत पर यह धाम स्थित है। जयपुर से अजमेर रोड पर 40 कि.मी. की दूरी पर मोकमपुरा से बिचूण के रास्ते भी भैराणा पर्वत पर स्थित इस धाम पर आसान से पहुँचा जा सकता है।

भैराणा पर्वत पर कई सन्तों ने तपस्यायें की है। उनके प्रभाव से यह धाम अत्यंत पवित्र धाम है। यहां भक्तों की सब मनोकमनायें पूर्ण होती है।

यहां प्रतिवर्ष फाल्गुन शुक्ला तृतीया को सन्त सम्मेलन का आयोजन किया जाता है। शरद पूर्णिमा, गरू पूर्णिमा व तीज के दिन विशेष आयोजन होता है।

दादू पंथी साधुओं ने भारतवर्ष में अनेक शहरों व गावों में स्थान स्थित थे। किन्तु वर्तमान में उतने स्थान नही है। सन्तों के नही रहने के कारण लोगों ने अनेक स्थानों को अपने अधिकार में कर लिया है। दादू सम्प्रदाय की बहुत सी बहुमूल्य सम्पत्तियां आज जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है। वर्तमान समय में दादू सम्प्रदाय के उज्जवल भविष्य के लिये एक सुसंगठित संगठन की आवश्यकता हे।

दादूपंथी सन्तों के ब्रह्मलीने होने पर महोत्सव रूप मेले स्थान-स्थान पर होते रहते है। अनेक सन्तों की समाधियों पर वार्षिक मेले भरते रहते हैं और भरते रहेंगे।